जमुना की लहरों में

[रोमांटिक उपन्यास]

उपन्यासकार

सत्येन्द्र शर्मा, एम० ए०

प्रकाशक

प्रेम प्रकाशन, दिल्ली

प्रकाशक
प्रेम प्रकाशन,
३०१४, चर्खेवालान
दिल्ली—६.

प्रथम संस्करण
जनवरी, १९६१

मूल्य : तीन रुपये पचास नये पैसे

मुद्रक :
रामाकृष्णा प्रेस,
कटरा नील, दिल्ली.

बस इतना ही कहूँगा

कि प्रस्तुत उपन्यास 'जमुना की लहरों में' मेरे अन्तःकरण की एक ऐसी दर्दभरी अनुभूति है, जिसे अभिव्यक्त करते समय मेरी कल्पना कितनी बार सिसक-सिसककर रोई है, इसका अनुमान लगाना तो मेरी शक्ति के परे है। लेकिन इतना अवश्य कहूँगा कि मैंने किसी की मंगल-कामना के लिये स्नेह-रहित प्राणों के दीपक जलाए थे, अब भी जलाता हूँ और आगे भी इसी तरह जलाता रहूँगा, जब तक कि इस दीपक में स्मृति की सूखी बाती भी जलकर एक दिन समाप्त नहीं हो जायगी।

अपने कालेज जीवन में न जाने कितनी रोमांटिक कहानियाँ सुनी थीं मैंने अपने सहपाठियों से, लेकिन बदले में सुना एक भी न सका था उनको; क्योंकि उस समय मेरा जीवन सिर्फ प्राणों को भविष्य की ओर वहन करने वाला यंत्र मात्र था। लेकिन आज तो उसी जीवन की एक एक धड़कन में न जाने कितनी कहानियों के 'प्लाट्स' समाये हुए हैं। उन्हीं में से यह एक ऐसी देवी की कहानी है जिसने कितने ही मीठे-मीठे सुनहले स्वप्न देखे थे अपने उस छोटे से जीवन में, लेकिन साकार रूप में बदलते हुए वह एक को भी न देख सकी। इसे मैं उसका दुर्भाग्य ही कहूँगा और कुछ नहीं! हाँ, इतना अवश्य है कि प्रेम का जो स्वर्गीय रूप मुझे उसमें देखने को मिला, वह मैं जीवन के अन्तिम क्षणों तक कभी नहीं भूल सकूँगा, लेकिन जाते-जाते बदले में वह मुझसे क्या ले गई? इसे आगे पढ़िये.........।

गाँधी सागर बाँध, चम्बल (म० प्र०)
१-११-६०

—सत्येन्द्र शर्मा

सादर समर्पित !

बड़े भाई श्री जोगेन्द्रपाल शर्मा, एम० ए० को, जिनका हार्दिक स्नेह क्या जीवन-भर कभी भुलाया जा सकता है ?

—सत्येन्द्र

सन् १९५८ की बात है।

मैंने आगरा कालेज, आगरा से हिन्दी लिटरेचर में एम० ए० पास किया था वह भी तृतीय श्रेणी में, लेकिन मजे की बात तो यह है कि एम० ए० ही नहीं मैं तो अपने जीवन की प्रत्येक परीक्षा में तृतीय श्रेणी से ऊपर न बढ़ सका। यह मेरा सौभाग्य था या दुर्भाग्य, कह नहीं सकता लेकिन इस विषय पर आज तक मैंने कभी दुख महसूस नहीं किया।

एम० ए० पास करने के बाद मैंने वही किया जैसा प्रायः दुनियाँ के सब लोग अपनी-अपनी शिक्षा समाप्त करने पर किया करते है। मेरे कहने का मतलब है कि लाइब्रेरियों में जाकर 'हिन्दुस्तान टाइम्स' के दूसरे पेज पर ठीक वैसे ही चिपट जाते हैं जैसे गुड की डेली पर अनगिनत चींटियाँ। और जब अखबार देखते-देखते आँखें दुखने लगती हैं और एप्लीकेशन्स लिखते-लिखते उँगलियों का भुर्ता बन जाता है तब कहीं जाकर अकल ठिकाने आती है। सोचने लगते हैं—भाग्य में नौकरी लिखी ही नहीं है तो कहाँ से मिलेगी ? जब 'हिन्दुस्तान टाइम्स' की तरफ से निराश हो जाते हैं तो चल देते हैं बगल में डिग्रियों का पुलंदा दबाकर एम्प्लायमेंट एक्सचेंज की ओर मरियल चाल से जैसे अभी-अभी श्मशान से अपने माँ-बाप को दफनाकर चले आ रहे हों और जब एक्सचेंज के सामने दो फ़रलांग लम्बी रंगरूटों की लाइन देखते हैं तो माथे पर अनायास ही पसीने की बूँदें झलकने लगती हैं।

उन्हीं रंगरूटों में से मैं भी एक था। जहाँ-कहीं भी अखबारों में हिन्दी टीचर की 'वान्ट' निकलती, मैं फौरन एप्लाई कर देता—भले ही वह जूनियर हाईस्कूल हो, हाईस्कूल हो अथवा इण्टर कालेज हो। और

डिग्री कालेज में हिन्दी लेक्चरार के लिये एप्लाई करने का मतलब मेरे लिये पंद्रह नये पैसे का खून कर देना था, इसलिये ऐसी जगह तो भूल कर भी एप्लाई न करता क्योंकि अपनी डिग्री के सामने तीन लकीरें जो खड़ी थीं।

खैर, कहने का मतलब यह है कि मैंने भी एप्लीकेशन्स लिखते-लिखते कम-से-कम एक दर्जन लेटर-बक्स तो भर डाले होंगे, लेकिन नौकरी मिलना तो दूर रहा किसी ने इंटरव्यू के लिये बुलाने तक का कष्ट न किया। रोज सुबह उठता, एम० ए० की डिग्री के उलट-पलटकर दर्शन करता और यथा-स्थान रख देता झुँझलाकर। एक दिन तो इतना गुस्सा आया कि सोचा चलो इस डिग्री महारानी को अग्नि देवी के सुपुर्द कर दूँ, फिर छुट्टी मिल जायगी हमेशा के लिये लेकिन न जाने क्या सोचकर मुझे दया आ गई उस पर और वह बच गई उस दिन।

यह तो रही डिग्री देवी की बात लेकिन आप तो जानते हैं कि जिस आदमी के पास कोई काम न हो तो उसे खुराफातें ही सूझा करती हैं और अंग्रेजी की एक कहावत भी है कि 'एन एम्प्टी माइंड इज डैविल्स वर्कशाप' सो मुझे भी खुराफातें सूझने लग गईं। दस्ते-के-दस्ते कागज दिमागी फितूरों से रंगने लग गया और यह चस्का उस दिन से ऐसा लगा कि आज भी जिस दिन मैं दस-पाँच सफे स्याही से रंग नहीं लेता हूँ तब तक मुझे रोटी ही नहीं पचती।

उन दिनों आगरा शहर की चहल-पहल से जब मेरी तबियत घबड़ा जाती तो कहीं एकांत में चला जाता किसी पार्क में और घंटों सोचा करता न जाने क्या-क्या घास के ऊपर बैठा-बैठा। सहसा जब झाड़ियों के बीच से चिड़ियाँ सुरीले स्वर में चहचहाने लगतीं तो एक क्षण के लिये मैं अपनी सारी व्यथाएँ भूल जाता। सोचने लगता—चिड़ियों के चहचहाने में और शहर में कीड़ों-मकोड़ों की तरह रेंगते हुए इन मनुष्यों के शोरगुल में कितना जमीन-आसमान का अंतर है। एक है छोटा-सा प्राणी, जिधर चाहता है पंख फड़फड़ाकर गगन-विहार करता है और

दूसरा है यह मनुष्य देवता जिसे दिन भर लफड़े बाजियों से ही होश नहीं मिलता।

हाँ तो बात असली यह है कि उसी वर्ष आगरा का राजामंडी रेलवे स्टेशन नये ढंग का बनकर तैयार हुआ था पुराने स्टेशन से लगभग एक फरलांग आगे तिकोनियाँ में जहाँ पहले प्रायः मेहतरों के सूअरों की हेड़-की-हेड़ ऊपर को हूँड़ उठाये हुर्र-हुर्र किया करते थे और उसी से चिपटी हुई थी सेंट जान्स कालेज की लम्बी चौड़ी फील्ड जहाँ न जाने कितनी बार मैंने आगरा कालेज और सेंट जान्स कालेज की टीमों के फुटबाल और क्रिकेट के मैचेज देखे थे और आज भी शून्य में उड़ती हुई फुटबाल का चित्र जब मेरी कल्पना में आ जाता है तो मेरी लेखनी भी बे-लगाम के घोड़े की तरह दौड़ने लगती है कागज के फील्ड पर। नया स्टेशन क्या बना है ? सचमुच ऐसा लगता है जैसे नई दिल्ली के रेलवे स्टेशन का हूबहू डुप्लीकेट लाकर वहाँ खड़ा कर दिया हो।

प्लेटफार्म से बाहर जहाँ रिक्शे-ताँगे की भीड़ हर समय लगी रहती है वहीं एक छोटा-सा पार्क है। हरी-भरी लॉन के चारों ओर जब रंग-बिरंगे फूलों के पौधे मंद मंद वायु में झूमने लगते हैं तो थके हुए यात्री कुछ देर के लिए वहाँ बैठकर अपनी थकान भूलकर प्रकृति में लीन हो जाते हैं। लॉन के बीचोंबीच एक फव्वारा है जिसकी सहस्रों पतली-पतली फुहारें हमेशा वायु के साथ अठखेलियाँ किया करती है। स्थान-स्थान पर पत्थर की बेंच बनी हुई हैं लॉन में जिन पर हर समय कोई-न-कोई बैठा ही दिखाई देता है। कहीं पति पत्नी बैठे हुए मीठी मीठी बातें कर रहे हैं तो कहीं कालेज का कोई विद्यार्थी अपनी सहपाठिनी को बगल में बिठाये रोमांस ही लड़ा रहा है। कहीं दो-चार रिक्शे वाले बैठे हुए भौंड़े ढंग से सिनेमा का कोई अश्लील गाना ही अलाप रहे हैं। कहने का मतलब है कि अपनी-अपनी दुनियाँ में सभी मस्त रहते हैं। किसी को किसी की परवाह नहीं। कौन आया कौन गया ? कौन मरा कौन जिया ? इन फालतू की बातों से किसी को कोई सरोकार नहीं।

रात के समय जब पार्क के चारों ओर गड़े हुए बिजली के खंभों से मर्करी ट्यूबों का हरा प्रकाश सब तरफ फैलता है उस समय सचमुच ही स्टेशन इतना आकर्षक हो जाता है कि वहाँ से जाने को जी नहीं चाहता। मैं भी प्रायः संध्या-सुबह उन दिनों वहीं चला जाता था और पार्क में बैठा-बैठा रेलगाड़ियों का आना-जाना बड़े ध्यान से देखा करता था। सोचते-सोचते कहानी का कोई 'प्लाट' दिमाग में आ जाता तो घर आकर कागज पर कल्पना के घोड़े बेपर दौड़ाने लगता। यही दिन-चर्या थी मेरी उन दिनों।

[२]

अगस्त का महीना था, वर्षा ऋतु का प्रारम्भ और आकाश में बदली छाई हुई थी। ठंडी-ठंडी पवन सरर-सरर करके बह रही थी सब दिशाओं में। संध्या के लगभग पाँच बजे थे लेकिन बदली के कारण ऐसा लगता था जैसे रात्रि का धुँधला-सा अंधकार धीरे-धीरे घिरता चला आ रहा हो। 'सुन्दर होटल' से खाना खाकर मैं घूमता हुआ स्टेशन पर पहुँचा लेकिन और दिनों की भाँति आज पार्क में अधिक चहल-पहल न थी। एकाध व्यक्ति लॉन पर तौलिया बिछाकर लेटा हुआ आकाश में घिरी हुई बदली की ओर बड़े रहस्यमय ढंग से देख रहा था। एक कोने में बैठे हुए कुछ कुली आपस में हँसी-मजाक कर रहे थे।

थोड़ी देर तक मैं इधर-उधर घूमता रहा घास पर और चुपचाप जाकर एक बैंच पर बैठ गया पीछे की ओर पीठ सटाकर। आकाश की ओर देखकर अनुमान लगाया कि आज पानी गिरेगा या नहीं? लेकिन किसी निष्कर्ष पर पहुँच नहीं सका। अचानक दिल्ली की ओर से आती हुई किसी गाड़ी ने सीटी दी, कुली उठ-उठकर बेतहाशा प्लेटफार्म की ओर भागे। गाड़ी आई और कुछ देर रुककर चली गई, रिक्शे-ताँगे और टैक्सियाँ यात्रियों को ले-लेकर शहर की ओर भागने लगे लेकिन

थोड़ी देर की यह चहल-पहल मेरे लिये कोई विशेष महत्व नहीं रखती थी। क्योंकि रोज की आदत जो पड़ गई थी। धीरे-धीरे फिर स्टेशन सुनसान-सा होने लगा। अचानक मेरी दृष्टि सामने गई तो हैरान रह गया। एक अपटूडेट नवयुवती सफेद दूध-जैसी साड़ी पहने, आँखों पर चश्मा लगाये चली आ रही थी मेरी ओर दाहिने हाथ में एक छोटी-सी अटैची लेकर। मैंने उसकी ओर देखा तो टकटकी लगाकर देखता ही रह गया। मेरे करीब आकर उसने अटैची बेंच पर रख दी और दोनों हाथ जोड़कर नमस्कार किया। एक क्षण को मैं भौंचक्का-सा रह गया। फिर सोचने लगा आसपास थोड़ी दूर पर कुछ और भी लोग बैठे हुए हैं यह उनके पास क्यों नहीं गई? शायद इसलिये कि उनकी शराफत पर उसे विश्वास न था और मेरे पास इसलिये आई थी कि मेरे चेहरे पर चश्मा लगा हुआ था बिलकुल उसी का जैसा—शराफत का सर्टीफिकेट। तो भला वह क्यों न आती मेरे पास? और आप तो जानते ही हैं कि चश्मे वाली लड़कियाँ मुझे कितनी अच्छी लगती हैं? बेहद आकर्षक, काश! कि दुनियाँ की सभी लड़कियाँ चश्मा लगाने लग जायँ तो कितना अच्छा हो? हाँ, तो मैं आश्चर्य में पड़ा हुआ सोच रहा था कि आखिर जान न पहचान और मैंने पहले उसे कभी देखा तक न था फिर यह नमस्ते कैसी? बहरहाल सभ्यता के नाते मैंने भी हाथ जोड़कर नमस्कार किया।

"आइये बैठिए!" मैंने बेंच पर एक ओर खिसकते हुए कहा।

वह धीरे से मेरी बगल में बैठ गई और बोली—"भाई साहब, मैं आपको कुछ तकलीफ देना चाहती हूँ।"

"जी, तकलीफ की कोई बात नहीं आप बड़े शौक से कह डालिये, अगर आपका मुझसे कुछ भला हो जाय तो मैं···लेकिन आप आ कहाँ से रही हैं?" मैंने पूछा।

"जी, मैं दिल्ली से आ रही हूँ।"

"आपके साथ और कोई नहीं है?"

"जी, नहीं मैं अकेली ही हूँ।"

"यहाँ किस मुहल्ले में जाना है आपको ?"

"जी, मैं यही तो सोच रही हूँ कि कहाँ जाऊँ ? मैं अपनी बात आपसे छिपाना नहीं चाहती क्योंकि आप पढ़े-लिखे हैं और मुझे विश्वास है कि आप मेरी बात की हँसी नहीं उड़ायेंगे। बात असल में यह है कि मेरे माता-पिता गरीब थे इसलिये मेरी शादी के लिये उनके पास इतना रुपया न था देने को जिससे कि मेरे लिये कोई 'सूटेबल मैच' मिल सकता इसलिये सस्ते में ही काम चलाने के लिये उन्होंने मेरी शादी एक सैंतालीस साल के अधेड़ व्यक्ति से तय कर दी और आज ही मेरी बरात आने वाली थी। इससे पहले मैंने इस विषय पर बहुत कुछ सोचा, आखिर मेरी अंतरात्मा ने ऐसा करने के लिये गवाही न दी और मैं घर से भाग निकली। अब इतनी बड़ी दुनियाँ में मेरा कोई नहीं है। घर लौटकर वापस जा नहीं सकती और जाना भी चाहूँगी तो आप ही बताइये कौन-सा मुँह लेकर जाऊँगी। इसलिये सोचती हूँ कि कहीं थोड़े दिन के लिये आश्रय मिल जाय तो ठीक है। 'सर्विस' मिल जाने पर कहीं दूसरी जगह कमरा ले लूँगी। इस समय मेरे पास इतने रुपये भी नहीं कि किसी होटल में ठहर सकूँ। कुछ दिन के लिये इसलिये आपसे···।" और वह चुप हो गई।

चश्मे में से उठती गिरती उसकी भोली-भाली दृष्टि मेरे हृदय में कुछ कुरेदने लगी और मैं क्षणभर को असमंजस में पड़ गया उसकी कहानी सुनकर। मन-ही-मन मैं उसकी प्रशंसा करने लगा—कितनी साहसी लड़की है यह ? सचमुच ऐसी ही लड़कियों की जरूरत है आज के भारत में। परिस्थितियों के अनुसार समाज का ढाँचा बदलता है और उस ढाँचे में ढली हुई सामाजिक कुरीतियाँ भी सर्पिणी की तरह नई-नई केंचुलियाँ बदलती हैं। समय कभी स्थायी नहीं होता, वह तो वेगवती सरिता के उस उच्छृङ्खल जल की तरह होता है जो नदी के दोनों कगारों को धराशायी करता हुआ अनंत की ओर बह जाता है और इसी

परिवर्तन के फलस्वरूप असीम सागर में बड़े-बड़े भूखण्डों का निर्माण हो जाता है और पलक मारते ही विशाल भूखण्ड सिन्धु के गर्भ में समा जाते हैं हमेशा के लिये।

तो फिर यह तो बीसवीं शताब्दी है। हजारों वर्षो के शिथिल जीवन में नवीन स्फूर्ति नवयुग का संदेश देने वाली और मृतप्राय जीवन में प्राण फूँकने वाली सदी। वह युग बहुत पीछे रह गया जबकि नारियाँ अपने को पराधीन समझा करती थीं। आज तो उसके पंख उगने लग गये हैं और उन्हीं के सहारे वे इस निस्सीम व्योम के तले जितनी भी लम्बी उड़ान भरना चाहें, निस्संकोच जा सकती हैं। किसी में इतनी शक्ति नहीं कि वह उन्हें रोक सके और रोक भी कैसे सकता है जब कि वे स्वयं आदि-शक्ति हैं। सृष्टि का कण-कण उसी आदि-शक्ति से संचालित है। और ऐसी ही एक अज्ञात शक्ति उस समय मेरे सामने बैठी थी नीचे की ओर पलकें झुकाए।

"आप कहाँ तक पढ़ी हैं?"

"जी, मैंने दिल्ली यूनिवर्सिटी से बी० ए० पास किया है इस साल।" उसने कहा, फिर कुछ रुककर बोली—"क्या आप पढ़ते हैं भाई साहब?"

"जी, पढ़ता था कभी अब तो नहीं पढ़ता हूँ।"

"क्या पास किया है आपने?"

"जी, मैंने एम० ए० पास किया है।"

"एम० ए०......" दबी हुई आवाज में उसने दुहराया फिर बोली—"अब आप क्या कर रहे हैं?"

"अब" मैंने कुछ हँसी के मूड में कहा—"जी, मैं रोड-इंस्पेक्टर हूँ।"

"तब तो आपको बहुत अच्छी जगह मिल गई है। मेरे विचार से आप 'रोड्स' का 'इंस्पेक्शन' करते होंगे?"

"जी" मैंने कहा—"ख़याल तो आपका बिलकुल दुरुस्त है और मेरा काम भी कुछ ऐसा ही है। दिनभर सड़कों का 'इंस्पेक्शन' करता रहता

हूँ कहीं कोई टूटी-फूटी या ऊबड़-खाबड़ सड़क दीख जाती है तो फौरन 'म्यूनिसिपलिटी' को सूचना दे देता हूँ और आप तो जानती हैं कि 'मेन रोड्स' का मुझे बहुत खयाल रहता है क्योंकि शाम को प्रायः कालेज की लड़कियों के झुण्ड-के-झुण्ड उन सड़कों पर घूमने निकलते हैं, हो सकता है किसी बिना चश्मे वाली लड़की का अँधेरे में सड़क के किसी गड्ढे में पैर पड़ गया तो मोच आये बिना रहेगी नहीं और उसका हॉस्पीटल में जाना उतना ही जरूरी हो जायगा जितना कि आपका अपने घर से भागना और गालियाँ भी मुझे उतनी ही मिलेंगी उन बिना चश्मे वाली देवी से जितनी कि इस समय आपको मिल रही होंगी आपके भावी पेंतालीस वर्षीय पति देवता से ।"

मेरी बात सुनकर उन देवीजी के सुर्ख गाल लज्जा से और भी सुर्ख हो गये। मेरी ओर देखकर थोड़ा मुस्कराईं और बोलीं—"आप बड़े बेशर्म टाइप लड़के दीखते हैं ?"

"जी, आपका खयाल गलत नहीं है ।"

"गलत हो भी कैसे सकता है ।" वह गर्व के साथ बोली—"मैं उड़ते परिंदे को पहचान लेती हूँ । कालेज में रहकर मैंने यही सीखा है ।"

"तभी आप 'चल उड़ जा रे पंछी हो गई हैं अपने घर से' क्यों ?" मैंने पूछा—"कहिये कहीं दूसरी जगह घोंसला बसाने का विचार है क्या ? अगर हो तो मैं आपको कोई लम्बा-सा ताड़ का वृक्ष बता दूँगा जिसके ऊपर बड़े मजे से घोंसला बनाकर रहना, कोई छोटा-मोटा परिंदा तो वहाँ पहुँच भी नहीं सकेगा। हाँ अगर आपका विचार न हो तो यह दूसरी बात है लेकिन याद रखियेगा अगर आप इसी तरह 'उड़ंछू' रहीं तो कोई चिड़ीमार जाल में फँसाकर आपकी वो गत बनायगा कि फिर उड़ते परिंदे पहचानने की शक्ति नहीं रहेगी आप में ! समझीं ।"

"आप तो बहुत ही चलते-पुर्जे नजर आते हैं। मेरी तो समझ में नहीं आता आप न जाने कौन सी भाषा में बात कर रहे हैं ?"

"जी, यह कालेज की भाषा है। आप कालेज में पढ़ी हैं फिर भी इस भाषा को नहीं जानतीं ?"

अपनी साड़ी का आँचल सम्हालती हुई वह बोली—"जी, यह लड़कों की भाषा होगी लड़कियों की नहीं। इसीलिये मेरी समझ में नहीं आ रही है।"

मुझे हँसी आ गई, बोला—"तो आप समझने की कोशिश भी मत करिए वरना फिर आप लड़की नहीं रहेंगी कुछ···।"

"हुंह" वह बेंच से उठती हुई बोली—"मैं तो आपको किसी भले घर का अच्छा पढ़ा-लिखा तमीजदार लड़का समझ रही थी लेकिन आप तो आगरा के छटे हुए लोफरों में से दीखते हो। चेहरे पर चश्मा लगा कर शरीफ बनने की कोशिश मत करिए जनाब। यह झूठमूठ का एम० ए० का रौब नहीं चलेगा आपका। एम० ए० पास लड़के तो कुछ दूसरे ही होते हैं।"

"तो आपको विश्वास नहीं है कि मैं एम० ए० पास हूँ।"

"बिलकुल ! आप ही सोचिये कहने मात्र से कोई शरीफ या एम० ए० पास थोड़े हो सकता है जब तक कि वह प्रत्यक्ष प्रमाण उपस्थित न करे।"

"बात तो मेरी भी समझ में आ गई है आपकी लेकिन शक मुझे भी है···।"

"किस बात का ?" वह भौं सिकोड़कर बोली—"कि मैं बी० ए० पास नहीं हूँ।"

"जी, नहीं।"

"तो फिर ?"

"जी, शक इस बात का है कि आप लड़की हैं भी कि नहीं, कहीं···।"

आपको दिखता नहीं है।" वह नाराज होकर बोली—"सामने खड़ी हूँ फिर भी···।"

"च्च ! च्च ! च्च ! देवीजी आप गलत समझ रही हैं। अब आप ही बताइये कि मैं कैसे आपके ऊपर विश्वास कर लूँ कि आप लड़की हैं या लड़का हैं। कोई लड़का भी तो साड़ी पहनकर सामने खड़ा हो सकता है ......।"

"तो आपको इतना भी नहीं दिखेगा कि यह लड़का है या लड़की ?"

"जी, बिलकुल असंभव। जिस तरह कोई लोफर, आवारा और गुण्डा लड़का चेहरे पर चश्मा लगाकर शरीफ बनने की कोशिश कर सकता है ठीक वैसे ही इस धोती के अन्दर की असलियत पता नहीं चल सकती। इसलिये मुझे शक है आपके ऊपर कि इस साड़ी के अन्दर वास्तविकता क्या है ? अगर आपको 'आब्जेक्शन' न हो तो प्रत्यक्ष प्रमाण ...।"

"नानसेंस क्रीचर........" वह बड़बड़ाई।

"च्च ! च्च ! च्च ! ये क्या कह रही हैं आप ? जानवर तो बुद्धि-हीन होता ही है। आपको कहना चाहिये था देवीजी 'नानसेंस जेंटल-मैन' तब कहीं जाकर मुझ पर थोड़ा-सा असर हो सकता था। खैर, तो आप प्रत्यक्ष प्रमाण दिखायेंगी नहीं ?"

वह फिर बड़बड़ाई—"तुम्हें शर्म नहीं आती 'ईडियट' कहीं के।" और अपनी अटैची उठाकर चल दी सड़क-सड़क 'दिल्ली-दरवाजे' की ओर इस ख़याल से कि शायद वहाँ कोई रिक्शा मिल जाय।

उसके पीछे-पीछे मैं भी चल दिया उठकर। दो-चार कदम जरा लपककर मारे और उसके बराबर चलने लगा।

"देवीजी जरा नाम तो बताती जाइये ?"

"चप्पलें खाने की मन में है क्या ?" उसने मेरी ओर घूरकर कहा।

जी नहीं, ऐसा तो कोई इरादा नहीं है वैसे आपकी मर्जी हो तो मुझे कोई ऐतराज नहीं क्योंकि ऐसी चप्पलें खाते-खाते मेरी खोपड़ी भी 'शाक प्रूफ' हो गई है और फिर काफी दिन से चप्पलें भी खाने को नहीं

मिली हैं इसलिये खोपड़ी के बालों में भी कुछ-कुछ खुजली हो रही है। अगर आप चाहें तो मेरी खुजली मिटा सकती हैं। वरना मुझे 'सरोजनी नायडू हॉस्पीटल' तक बेकार परेशान होना पड़ेगा।"

"मुझे दिखता है तुम्हें पागलखाने जाना पड़ेगा।"

"जी, पागलखाने तो नकद ढाई महीने रहकर आया हूँ वैसे इस बार आप भी चलना चाहें मेरे साथ तो बड़े शौक से ढाई की बजाय पाँच महीने के लिये चल सकता हूँ। बोलिये, चलेंगी आप ?"

"तुम्हारी तरह मेरा दिमाग 'क्रेक' नहीं है जो मुझे पागलखाने जाना पड़े।"

"लेकिन लड़के-लड़की का फर्क तो दूर करवाना है आपके अंदर से जो बिना डाक्टर की सहायता के 'इंपासीबल' है। वरना देखिय आपके साथ शादी करने वाले किसी मुझ-जैसे नवयुवक का 'फ्यूचर' खराब हो जायगा।"

"शट-अप नानसेंस" कहीं के, तुम्हें शर्म नहीं आती है किसी शरीफ लड़की से इस तरह ऊल-जलूल बकते हुए।"

"तो क्या आप शरीफ भी हैं ?" मैंने धीरे से पूछा—"मेरा तो विचार है कि अपने मां-बाप को इस तरह धोखा देकर भागने वाली लडकी कभी शरीफ नहीं हो सकती। वैसे शराफत का आपके पास कोई 'सर्टीफिकेट' हो तो बड़े शौक से दिखा सकती हैं मुझे, मैं आपकी शराफत पर विश्वास कर लूँगा—आपको माफ कर दूँगा।"

"बड़े चले हैं माफ करने वाले गुंडे कहीं के! मैंने ऐसी कौनसी गलती की है जिसके लिये तुम मुझे माफ करना चाहते हो ?" वह जरा अकड़कर बोली।

मैंने कहा—"यह भी बताने की जरूरत पड़ेगी क्या ? चोरी और सीना जोरी ; घंटेभर से आप गालियाँ बकती चली आ रही हैं। ऊपर से ऐंठ जमाती हैं जैसे मेरी कोई इज्जत ही नहीं। कम-से-कम इतना तो

ख़याल रखो कि इस समय आप 'आगरा यूनिवर्सिटी' के एक 'पोस्ट-ग्रेजु-एट' से बातें कर रही हैं। और फिर यह मेरा ही नहीं आगरा-यूनिवर्सिटी का भी अपमान है। अगर यूनिवर्सिटी ने आपके ऊपर मानहानि का दावा कर दिया तो फिर आपको यहाँ से भागते ही बनेगा।"

एक क्षण को वह मुस्करा गई और नर्म होकर बोली—"तो फिर आप मेरा पीछा क्यों नहीं छोड़ते हैं ?"

"देवीजी ! पीछा छोड़ने के लिये नहीं किया जाता है। मुझे अफसोस है कि अगर मैं आपका पीछा छोड़ दूँगा तो कोई असली गुंडा आपके पीछे लग जायगा, फिर उससे जान छुड़ाना बहुत मुश्किल हो जायगा आपके लिये और देखिये आप यह मत भूलिये कि यह आगरा है—यू० पी० के दादाओं का बहुत बड़ा केन्द्र जहाँ दिन में ही सरे-बाजार खून करके लाश को गटर में उसी तरह बहा दिया जाता है जिस तरह घर का कूड़ा-कर्कट ! समझीं ?"

"मि० आप मुझे डराने की कोशिश मत करिए। मैंने भी इतने से जीवन में बहुत सारी दुनियाँ देखी है और आप जैसों को ऐसे चुटकी में उड़ा देती हूँ।" दाहिने हाथ की चुटकी बजाकर वह बोली।

"ओफ़ ! तो आपको समझने में मैंने गलती की है ?"

"बिलकुल ! शायद आपने सोचा होगा कि यह लड़की है इसलिये डर जायगी लेकिन मैं ऐसी-वैसी लड़की नहीं।"

"तो क्या आप खुदा के 'वर्कशाप' से किसी स्पेशल साँचे में ढल कर आई हैं ? लेकिन मुझे तो आपके अंदर कोई स्पेशलिटी दिखती नहीं है—साधारण लड़कियों जैसे ही आपके लाल-लाल गाल हैं, पतले-पतले होंठ हैं, नागिन जैसे लम्बे-लम्बे काले बाल हैं, बल खाती हुई कमर और मनमोहक अदाएँ हैं फिर आप ही बताइये कि आपके अंदर ऐसी कौनसी खसूसियत है जो आपको साधारण लड़कियों से अलग करती है।"

बाएँ हाथ से अटैची दायें हाथ में लेती हुई वह बोली—"तो अभी

तक आप मुझ में और दूसरी लड़कियों में जो फर्क है उसे ही नहीं समझ पाये हैं।"

मैंने कुछ सोचकर दायें हाथ की चुटकी बजाई और बोला—"देवी जी समझ में आ गया ! बस इतना-सा फर्क है कि जहाँ साधारण लड़कियों के बाएँ सीने में धड़कता हुआ दिल होता है, वहाँ आपके सीने में दिल न होकर कोई 'स्विस मेड—अलार्मवाच' रखी है जो टिक ! टिक ! टिक ! किया करती है हर समय और कभी-कभी बिना सुई मिलाए ही उसका 'अलार्म' बजाने लगता है जैसा कि पिछले आध घंटे से आपकी 'दिल-घड़ी' का अलार्म बज रहा है।

वह खुश हो गई, बोली—"आप सचमुच बड़े मजेदार आदमी दिखते हैं।"

"आपके इन शब्दों के लिये मेरी ओर से आपको स्पेशल धन्यवाद।" मैंने कहा—"लाइये आपके हाथ दुख गये होंगे; थोड़ी देर के लिये मैं आपकी अटैची ले चलता हूँ !"

"नहीं ! नहीं ! माफ करिएगा ! मुझे आपकी 'हैल्प' की जरूरत नहीं है।"

"धन्यवाद" मैंने कहा—"दिखता है आपकी 'दिल-घड़ी' फिर से बजने लग गई है। अगर आपसे बंद न होती हो तो मुझे बता दीजिये मैं उसका बटन दबा दूंगा हमेशा के लिये, फिर कभी टाइम-बेटाइम नहीं बजेगी।"

"क्यों मिस्टर आपके दिमाग का कोई 'स्क्रू' ढीला तो नहीं है ?"

"क्या कहा आपने ?" मैंने बायें कान पर हाथ रखकर उसकी ओर तिरछी दृष्टि से देखा।

"इसका मतलब है आप बहरे भी हैं।" वह बोली—"क्या आपको कम सुनाई देता है ?

"जी नहीं ! ऐसी तो कोई बात नहीं है। परसों ही 'कानमैलिए' से रेलबे प्लेटफार्म पर टेक निकलवाई थी दोनों कानों की और एक

आने की जगह दो आने दिए थे उसे मैंने। अब कह नहीं सकता हूँ कि दो दिन में कुछ और मैल जम गया हो तो ···· खैर, आज फिर दो आने खर्च कर दूँगा लेकिन आपको अगर अपनी दिल-घड़ी ठीक करानी है तो 'फव्वारे' चलना पड़ेगा आपको 'रोड़ा-ब्रदर्स' की दुकान पर और आप तो वहाँ सिर्फ खड़ी रहना, घड़ी की जितनी भी खराबियाँ है वे सब मैं बता दूँगा दुकानदार को! लेकिन एक बात है—'चार्जेज़' बहुत लगते हैं वहाँ और घड़ी भी वह उम्दा बनती है कि फिर जिन्दगी-भर कभी खराब न होगी?"

"क्यों मिस्टर आपकी खोपड़ी में गोबर तो नहीं भरा हुआ है?"

"जी, गोबर तो यहाँ बहुत तेज मिलता है आगरा में क्योंकि यहाँ गाय, भैंसें जरा कम हैं। हाँ, अगर आप लीद की बात कहतीं तो जरा ठीक भी था क्योंकि यहाँ घोड़े-घोड़ियाँ, खच्चर-खचरियाँ और गधे गधैयाँ इतनी अफ़रात में लावारिस सड़कों पर घूमते है जितने आपकी दिल्ली में आवारा लड़के-लड़कियाँ। यही कारण है बिचारी मेहतरानियाँ भी सड़कों पर लीद झाड़ते-झाड़ते परेशान हो जाती है तो बड़बड़ाने लगती हैं।"

"कहीं आपको पागल कुत्ते ने तो नहीं काट लिया है?"

"जी, पागल कुत्ते ने तो नहीं काटा लेकिन आपने जरूर काटा है जिसका जहरीला नशा मुझ पर इतना चढ़ रहा है जैसे किसी पागल कुतिया ने काट लिया हो।"

"ऐ मिस्टर जरा तमीज से बात कीजिये।" वह गरम होकर बोली—"क्या आपने मुझे गली-गली घूमने वाली कुतिया समझ रखा है?"

"च्च! च्च! च्च! कैसी दिल टूटे की-सी बातें कर रही हैं आप भी। क्या मैं इतना भी नहीं जानता कि गली-गली घूमने वाली और पालतू कुतिया में कितना फर्क होता है, इसलिये आप अपने को दूसरे नम्बर वाली·· ··।"

"तो दिखता है आप अपनी हरकतों से बाज नहीं आयेंगे। मुझे इस चौराहे वाले पुलिसमैन को बुलाना ही पड़ेगा?"

"जी नही! आप उस बेचारे को क्यों तकलीफ देती हैं। अपन दोनों ही चल रहे हैं न उसके पास और मेरा तो खयाल है कि वह मेरी शक्ल देखकर ही डर जायगा इसलिये 'हरी पर्वत' थाने चलते हैं पुलिस इंस्पेक्टर के पास, सामने ही तो है थोडी दूर पर।"

"लेकिन आप इतने बदसूरत या खूँखार तो दिखते नहीं हैं कि पुलिस वाला भी आपको देखकर डर जायगा!"

"लेकिन आवारा, गुंडा और लफंगा तो हूँ जिनसे पुलिस वाले भी घबड़ाते हैं।"

अंत में उसने हारकर फुट-पाथ पर बिजली के लट्ठे के नीचे अपनी अटैची रख दी और उस पर बैठती हुई बोली—"मिस्टर अब आप अपनी भलाई चाहते हैं तो यहाँ से चले जाइये वरना ठीक नहीं होगा आपके हक में।"

"लेकिन सड़क तो आपने नहीं खरीद ली है।" मैंने उसके पास ही एक ईंट पर बैठते हुए कहा—"यह तो आम जनता की सड़क है, हर व्यक्ति को यहाँ बैठने का अधिकार है।"

"तो आप यहाँ से दूर जाकर बैठिए।"

"सो क्यों?"

"ओफ़! मैं तो परेशान आ गई आपसे! मुझे नहीं पता था कि इतने गुंडे होते हैं आगरा के लोग।

"अब तो पता चल गया आपको।"

"हाँ, लेकिन अब कर भी क्या सकती हूँ?"

"मेरी बात मानें तो आप दिल्ली वापस चली जाइये वरना देखिये घर से बाहर परेशानियों के सिवाय सुख नहीं मिलता किसी को और यह तो आपकी परेशानी की अभी शुरूआत ही है! मुझे सचमुच आपकी

बहुत चिंता है वरना है मैं अब तक कभी का चला गया होता आपको छोड़कर अपने घर। अगर आपको बुरा महसूस न हो तो आज की रात आप मेरे घर चल सकती हैं। अकेला रहता हूँ, बिलकुल अकेला !"

"बस ! बस ! आगे कहने की तकलीफ मत करिए। मैं सब जानती हूँ गुंडों की ये लच्छेदार बातें और उनका मतलब भी। मैं कोई बच्ची नहीं हूँ।"

"वह तो मैं भी देख रहा हूँ कि आप बच्ची न होकर बच्चियाँ पैदा करने लायक अठारह साल की एक पठोड़ी हैं जिस पर किसी का भी दिल फिसल सकता है।"

मैंने देखा आसपास अँधेरा बढ़ता चला जा रहा था और बिजली के प्रकाश के नीचे फुटपाथ पर बैठी हुई वह युवती बहुत सुन्दर लग रही थी। बल्ब के आस-पास लाखों पतंगे इस तरह चक्कर लगा रहे थे जैसे किसी खूबसूरत लड़की के आस-पास कालेज के दर्जनों मनचले छोकरे मढ़रा रहे हों। एक बार युवती ने ऊपर की ओर मुँह उठाकर भिन-भिनाते हुए पतंगों की ओर देखा तो एक साथ बिजली का प्रकाश उसके चश्मे के शीशों पर फिसलकर मेरे दिल में समा गया। परेशानी और गुस्से के बीच उसका चेहरा बड़ा आकर्षक लग रहा था। और मैं अपलक देखता ही जा रहा था उसकी ओर। एक बार उसने घृणा से मेरी ओर देखा और मुँह दूसरी ओर फेर लिया।

"क्या आप नाराज हो गई हैं ?" ईंट को उसके करीब खिसका कर बैठता हुआ बोला—"इस समय सचमुच आप बहुत ही सुन्दर दिख रही हैं जैसे कोई नायिका मान कर बैठी हो।"

"............" उसने कोई उत्तर न दिया। रिक्शा पों-पों करता हुआ उधर से गुजरा तो देवीजी फौरन फुटपाथ पर खड़ी हो गईं और उनके साथ-साथ मैं भी। हाथ से वे उसे रोकती हुई बोलीं—"ए रिक्शे वाले, ये अटैची रखना रिक्शे में......!"

"कहाँ चलना है बाबूजी आपको।" उसने सीट पर बैठे-ही-बैठे मेरी ओर देखकर पूछा।

मैंने लपककर कहा—"कहीं नहीं जाना है भई, पास ही है अपना घर, घूमते-घामते चले जायेंगे। इन्होंने तुम्हें वैसे ही रोक लिया है। तुम जा सकते हो।"

युवती ने घूरकर मेरी ओर देखा तो मुझे ऐसा लगा जैसे लाल-लाल अंगारे चमक रहे हों उस धुँधले-से अंधकार में। भुनभुनाकर बोली—"आपको अपनी इज्जत का खयाल नहीं है, क्यों ?"

"ओफ़ो! देवीजी थोड़ी देर पैदल चल लेंगे तो अपनी इज्जत खराब नहीं हो जायगी, बेकार पैसे खर्च करने से क्या फायदा ?"

"आप भाड़ में जायें या चूल्हे में, मुझे आपसे क्या मतलब।" वह तुनककर बोली—'ए रिक्शे वाले मुझे अकेले ही चलना है, जल्दी चलो।"

"लेकिन देवीजी क्वार्टर की चाबी तो मेरे ही पास है, जल्दी पहुँच जाओगी तो बाहर दरवाजे पर बैठा रहना पड़ेगा! इससे क्या फायदा होगा और पता नहीं पैदल-पैदल मैं न जाने कितनी देर में आ पाऊं।"

युवती मेरी ओर लाल-लाल आँखें निकालकर अंग्रेजी में बड़-बड़ाई—"यू कीप साइलेंस अदरवाइज आइ विल रिपोर्ट टू दी पुलिस, ईडियट फैलो!"

"रिक्शे वाला भौंचक्का-सा हमारी ओर देख रहा था लेकिन अभी तक उसकी समझ में कुछ भी न आया तो बड़े रहस्यमय ढंग से बोला—"क्यों बाबूजी यह लफड़ा क्या है ?"

"अरे भई लफड़ा क्या बताऊँ! यह तो रोज का घरेलू झगड़ा है। समझ में नहीं आता क्या करूँ। माँ-बाप ने धोखे में आकर इस पागल लड़की से मेरी शादी कर दी है और भुगतना मुझे पड़ रहा है। कभी-कभी इन्हें पागलपन के दौरे शुरू हो जाते हैं और परेशानी मुझे होती

है। कल ही डाक्टर के पास ले गया था इन्हें तो उन्होंने राय दी कि इन्हें दिल्ली ले जाओ वहाँ पहाड़गंज में डाक्टर ऋषी इस मर्ज के 'स्पेशलिस्ट' हैं और आज जब इन्हें दिल्ली चलने के लिये जैसे-तैसे तैयार भी किया तो अब स्टेशन पर आकर कहती हैं कि मुझे नहीं जाना दिल्ली। अब तुम्हीं बताओ क्या किया जाय।"

"ओ! समझ में आ गया बाबूजी। अगर बाई सा'ब के दिमाग में कुछ चक्कर है तो आप इन्हें पागलखाने ले जाइये। वहाँ बहुत अच्छा इलाज होता है।"

देवीजी कड़ककर बोलीं—"ए रिक्शे वाले तमीज नहीं है तुम्हारे अन्दर, बेवकूफ कहीं का।"

रिक्शे वाले की आंखें फटी-की-फटी रह गईं। मैंने उसे टरकाते हुए कहा—"अरे भई तुम जाओ यहाँ से, इस समय इनका दिमाग खराब हो रहा है। कोई और सवारी देखो।"

रिक्शे वाला पलक मारते ही आगे बढ़ गया और देवीजी मेरे ऊपर बरस पड़ीं—"क्यों मिस्टर, आप मेरे पीछे हाथ धोकर क्यों पड़ गये हैं? मैंने आपका क्या बिगाड़ा है जो आप मुझे परेशान कर रहे हैं! आखिर आप चाहते क्या हैं?"

"मैं चाहता हूँ कि आप मुझे जी-भरकर गालियाँ दीजिये और जब आपकी गालियों का भंडार खत्म हो जाय तो मुझे बता दीजियेगा—मैं चुपचाप अपने घर चला जाऊँगा।"

"अच्छा, गालियों के लिए मैं आप से क्षमा चाहती हूँ अब आप मुझे जाने दीजिये और आप अपना रास्ता देखिये।"

"लेकिन मुझे रातभर नींद नहीं आयेगी?"

"तो कैमिस्ट से नींद की गोलियाँ खरीद ले जाना।"

"......और फिर भी नहीं आई तो?"

"तो फिर मेरे पास उठकर चले आना रात को मैं थपकियाँ दे देकर आपको सुला दूँगी।" मुस्कराती हुई वह बोली।

मैंने कहा—"देखिये अगर शुरू से ही आप इस तरह मीठी-मीठी बातें करतीं तो मुझे इतनी उल्टी-सीधी बातें करने की जरूरत न पड़ती। खैर, तो आप रात को मिलेंगी कहाँ ?"

"यहीं इसी जगह मिल जाऊँगी। अब आप तशरीफ ले जाइये।"

"लेकिन मैं आपको इस तरह अकेला छोड़कर नहीं जा सकता।"

"क्यों ?"

"इसलिए कि यहाँ असली गुंडे बहुत घूमा करते हैं वे आपको परेशान करेंगे।"

"नहीं ! आप जाइये तो सही।"

"अच्छा, लीजिये मैं आपके कहने से चला जाता हूँ लेकिन याद रखियेगा आप पीछे से पछताएँगी।" और कहता हुआ मैं दिल्ली-दरवाजे की ओर बढ़ गया। करीब पचास कदम चलकर सड़क के दायीं ओर एक पान-बीड़ी-सिगरेट की गुमटी थी जिसके आस-पास काफी दूर तक कोई दूसरी दुकान नहीं दिखती थी। मैं गुमटी के सामने आकर खड़ा हो गया। एक पान खाया और सिगरेट लेकर जलाने लगा।

तभी मेरी दृष्टि पीछे की ओर गई जहाँ वह अपरिचित युवती खड़ी थी, शायद किसी दूसरे रिक्शे की प्रतीक्षा में कि सहसा दो-तीन आवारा टाइप लड़के स्टेशन की ओर से आते हुए दिखाई दिये। वे सब आकर उन देवीजी के पास खड़े हो गये और न जाने क्या-क्या बातें करने लगे। मैं तो वहाँ से काफी दूर था इसलिए उनकी बातें सुन न सका लेकिन एक लड़के ने आगे बढ़कर अटैची उठाने की कोशिश की, शायद मेरी ही तरह उनकी मदद करने के लिये—लेकिन उठा न सका क्योंकि देवीजी ने एक तरफ से उन्हें झाड़ना शुरू कर दिया लेकिन आवारा लड़के आखिर आवारा ही थे उन्होंने भी देवीजी पर भद्दे-भद्दे फिकरे और आवाजें कसना शुरू कर दिया। फिर क्या था। वे अपनी अटैची उठाकर फूटी-फटी आँखों से उनकी ओर देखती हुई मेरी ओर आने लगीं। लड़के भी उनके पीछे पीछे सिनेमा के भद्दे-भद्दे गाने गाते हुए चलने लगे।

एक गा रहा था उनमें से—"या अल्ला या अल्ला दिल ले गई······

दूसरा कह रहा था—"कहो मेरी जान किराया कितना······

तीसरा कह रहा था—"ओ गोरे-गोरे गालों वाली नाम तो बता···

मेरे करीब आकर देवीजी बोलीं—"देखिये, ये गुंडे लड़के जो पीछे आ रहे हैं मुझे परेशान कर रहे हैं।"

"तो मैं क्या कर सकता हूँ?" सिगरेट का धुआँ ऊपर की ओर उड़ाते हुए मैंने कहा—"मैं तो एक गुंडा हूँ किसी शरीफ के पास जाकर शरण लीजिये न।"

"नहीं! देखिये आप तो नाराज़ हो गये, लेकिन ये लड़के बहुत बुरी-बुरी बातें बक रहे हैं जिन्हें आपको बताते हुए मुझे शर्म आती है। एक जना कह रहा था कि 'चिड़िया तो अच्छी है इसे उड़ा दो आज रात को', दूसरा कह रहा था कि 'हाँ यार माल तो गदराया हुआ बड़ा चोखा है गद्दे का काम देगा रात को', तीसरा कह रहा था कि 'चलो रात को इसका हवाई जहाज बनाएँगे।' मैं तो सचमुच थरथर काँपने लग गई हूँ इन गुंडों की बातें सुनकर। आपको मेरी कसम है, मुझे बचा लीजिये इन से नहीं तो ये मेरी सब इज्जत खराब कर देंगे।"

"लेकिन मैं कैसे बचा सकता हूँ? तुम्हीं सोचो, आस-पास चारों तरफ सुनसान है, बस्ती बहुत दूर है यहाँ से और 'क्रासिंग' पर खड़े होने वाला सिपाही भी रात होने की वजह से घर चला गया है और यह पानवाला वैसे ही बूढ़ा और डरपोक है। गुंडे कहेंगे कि मेरी तुम से कोई जान न पहचान वैसे ही तरफदारी ले रहा हूँ तो तुम्हें तो ले ही जायेंगे ये सब लोग उन झाड़ियों की तरफ जहाँ वह दूर पर रेल का पुल बना हुआ है लेकिन मेरी वैसे ही मरम्मत हो जायेगी। मारेंगे ये सब लोग मुझे मिलकर। इसलिए मैं कुछ नहीं कर सकता। आप अकेली ही लड़िये उनसे।"

मैंने देखा उनकी आँखों में आँसू आगये थे। साड़ी के आँचल से उन्हें

पोंछती हुई रुआँसे स्वर में बोलीं—"आप उनसे इतना भी नहीं कह सकते हैं कि मेरी 'वाइफ' है।"

"अच्छा जी!" मैंने जरा मुस्कराकर कहा—"यह तो खूब नई तरकीब सोची है तुमने मुझे बेवक़ूफ़ बनाने की। इसका मतलब है कि तुम अपने स्वार्थ के लिये मुझसे झूठ बुलवाना चाहती हो।"

"मैं झूठ बुलवाना चाहती हूँ या आप स्वयं झूठ बोलते हैं। बताइये उस रिक्शे वाले से क्या कह रहे थे आप? बोलिये, चुप क्यों हैं?"

"अच्छा बाबा कह दूंगा और अपनी खोपड़ी पर जो जूते पड़ेंगे वह सह लूंगा। अब तो खुश हो। लाओ अपनी अटैची मेरे हाथ में दे दो जिससे कि उन्हें पूरा विश्वास हो जायगा कि तुम मेरी असली बीबी हो।"

अटैची मैंने अपने हाथ में ले ली और देवीजी से कह दिया कि वे पीछे की ओर मुँह करके खड़ी हो जायँ।

धीरे-धीरे छोकरे मेरे करीब से गुजरे और एकाध ने ठिठककर मुझे संदेह की दृष्टि से देखा। मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ यह देखकर कि उनमें से एक मेरा भी 'कालेज फैलो' था—रमेश जो क्लास में मुझसे एक साल पीछे था।

मैंने जरा लहजे के साथ कहा—"क्यों भई रमेश, यह गुंडागर्दी कब से करने लग गये हो और वह भी अपने दोस्तों की बीबियों से······।"

वह फौरन चौंक पड़ा जैसे अभी तक वह मुझे पहचान न पाया हो। मेरे पास आकर दोनों हाथ जोड़कर बोला—"अरे भाई साहब, माफ़ करियेगा हमें पता नहीं था कि ये आपकी 'वाइफ़' हैं वरना हम ऐसी हरकत कभी न करते और आप भाभीजी से भी कह दीजिए कि वे भी हमें माफ़ कर दें। लेकिन एक बात है भाई साहब कि भाभीजी भी गालियाँ सुनाने में नम्बर एक हैं।"

"अरे हाँ भाई ये तुम्हें ही नहीं मुझे भी गालियाँ देती रहती हैं लेकिन इनका बुरा मत मानना और तुम भी अपनी ये आदतें सुधारने

की कोशिश करो। तुम पढ़े-लिखे आदमी हो, कुछ दिन बाद घर की 'रेस्पान्सीबिलटी' तुम्हारे ऊपर आयेगी और कभी तुम भी बीबी वाले बनोगे। समझे!"

"अब भाई साहब अधिक शर्मिन्दा मत करियें।"

"कोई बात नहीं है।" मैंने कहा—"लो सिगरेट पिओगे?"

"नहीं भाई साहब, सिगरेट नहीं पीता हूँ मैं।"

"खैर, कोई बात नहीं लेकिन आजकल कर क्या रहे हो?"

"कर क्या रहा हूँ भाई साहब, पिछली साल एम० ए० 'इकनामिक्स' ज्वाइन किया था सो फेल हो गया।"

"दिखता है रात को चिड़ियाँ बहुत उड़ाई होंगी जैसे कि आज उड़ाने जा रहे थे, क्यों?"

शर्म के मारे उसने नीचे की ओर सर झुका लिया।

कुछ देर तक इधर-उधर की बातें होती रहीं और वे सब चले गये शहर की ओर। फिर से वातावरण सुनसान-सा होने लगा, सिर्फ वहाँ मैं था और वह अपरिचित नवयुवती। बूढ़ा पानवाला भी अपनी गुमटी बन्द करके जाने की तैयारी कर रहा था।

युवती पहले तो मेरी ओर देखकर मुस्कराई फिर बोली—"मैं सब जानती हूँ यह आपका 'प्री-प्लान्ट' था मुझे परेशान करने के लिए और यह भी जानती हूँ कि इन गुण्डों के आप 'रिंग लीडर' भी हैं, क्यों, मैं झूठ तो नहीं कह रही हूँ?"

"नहीं, बिलकुल सच कह रही हैं आप और विश्वास न हो तो अभी देख लीजिये दस मिनट में मेरी रिंग लीडरी का मजा। लड़के सामने ही जा रहे हैं अभी जाकर उनसे साफ़-साफ़ कहे देता हूँ कि इस लड़की से मेरा कोई सम्बन्ध नहीं और यह दिल्ली से भागकर आई है अपने माँ बाप को धोखा देकर, फिर देखना हवाई जहाज बनाना तो दूर रहा उन्होंने तुम्हारा 'हैलीकोप्टर' नहीं बना दिया आज रात को तो मेरा

नाम भी बदल देना । तुम समझती क्या हो अपने आपको ? इंसानियत के नाते एक तो समय बर्बाद कर रहे हैं आपके लिए इस पर भी आप उलटी-सीधी बातें बकती चली जा रही है, समझ में ही नहीं आता औरतों के दिमाग़ होता है या औंधी खोपड़ी ।"

युवती सकपका गई, फीकी-सी हँसी हँसती हुई बोली—"अरे आप तो नाराज़ हो गये, मैं तो वैसे ही मजाक कर रही थी आपको चिढ़ाने के लिए।"

"मज़ाक की भी कोई हद होती है, किसी के साथ भलाई करो तो उलटी बुराई ही मिलती है। यही तो है आज कल की दुनियाँ अगर तुम्हें मुझ पर विश्वास नहीं है तो लो ये चला मैं अपने घर ···· ।"

"अरे बाबा माफ़ करिये अब, इस अँधेरी रात में कहाँ घूमती फिरूँगी मैं अकेली, कुछ रास्ता बताइये न ताकि ···।"

"मैने ठेका ले रक्खा है आपको रास्ता बताने का, जिधर आपको दिखे उधर चली जाइये न बहुत से होटल हैं आगे ।"

युवती निराश हो गई, बोली—देखिये मुसीबत में इस तरह फट-कारा नहीं जाता किसी को जिस तरह आप मुझे डाँट रहे हैं। काश ! मेरी जगह आप होते तो······!" आगे इसका गला रुँध गया।

"मैं क्यों होने लगा तुम्हारी जगह ।" मैंने कहा—"मेरे मां-बाप ऐसे नहीं जो मेरी शादी किसी पैंतालीस साल की बुढ़िया से करने पर उतारू हो जायँ और अगर ऐसा होने भी लगे तो मैं तुम्हारी तरह भागूँगा नहीं घर से, सहर्ष शादी कर लूँगा उससे और फिर तुम जानती हो कि पत्नी का प्यार तो क्या मिलेगा उस बूढ़ी खाला से हाँ माँ का-सा स्नेह तो करेंगी ही वह ।"

युवती मुस्करा गई लेकिन बोली कुछ नहीं एक बार मेरी ओर पलकें उठीं और फिर नीचे गिर गईं लज्जा के भार से ।

"कहिए, किधर चलने का इरादा है महादेवीजी ?"

"आप के घर······" वह धीरे से बोली—"लेकिन आप मुझे महा-देवीजी क्यों कहते हैं ?"

"तो फिर क्या कहूँ ?"

"नीरा······

"नीरा····" मैने धीरे से दुहराया वह नाम—"बहुत अच्छा है आपका नाम।"

"मैं भी तो बहुत अच्छी हूँ।" वह शर्माती हुई बोली।

"हाँ, वह तो मैं भी देख रहा हूँ कि, शक्ल-सूरत से तो तुम बहुत अच्छी दिख रही हो लेकिन पता नहीं अन्दर से कैसी निकलोगी ?"

"अन्दर से सभी लड़कियाँ बहुत अच्छी होती है।" वह बड़े विश्वास के साथ बोली—"पुरुषों की तरह धोखा देना वे नहीं जानतीं।"

मुझे तनिक हँसी आ गई नीराजी की बात पर और सहसा दृष्टि 'रिस्ट वाच' पर जा टिकी—"अरे, दस बजने वाले हैं, मेरा कितना समय बर्बाद हो गया आपकी इन फिजूल बातों में।" मैंने कहा—"घर पहुँचूँगा तो वह बहुत नाराज़ होगी और मेरा तो खयाल है कहीं किवाड़ें बन्द करके सो न गई हो ?"

नीरा की आँखें अँधेरे में चमक उठीं, मेरे चेहरे की ओर देखती हुई बोली—"क्या आपके साथ और भी कोई रहती है ?"

"क्यों नहीं, भला तुम्हीं सोचो अकेला आदमी इतनी बड़ी दुनियाँ में रह सकता है ······।"

"लेकिन आप तो कह रहे थे कि अकेले रहते हैं—आप बिलकुल अकेले।" वह बीच ही में मेरी बात काटती हुई बोली।" इसका मतलब है कि आप विवाहित हैं ?"

"विवाहित होना गुनाह तो नहीं है ?"

"नहीं।"

"फिर आपको इतना आश्चर्य क्यों हो रहा है ?"

"इसलिए कि आपको अपनी पत्नी की तनिक भी चिन्ता नहीं, बिचारी आपका इन्तजार कर रही होंगी और एक आप हैं कि इस तरह इतनी रात गये आवारागर्दी करते फिर रहे हैं।

"तो फिर क्या शोभा देता है जरा आप ही बता दीजिये।"

"मेरे विचार से आपको अपनी पत्नी के साथ रहना चाहिए।"

"आप बिलकुल ठीक कह रही हैं, पत्नी अभी भी मेरे साथ है।"

"कहाँ हैं?"

"आप हैं तो सही।"

"जाइये इन बातों में क्या रखा है, मुझे क्या खाकर आप अपनी पत्नी बनायेंगे?"

"कसम खाकर—"मैंने कहा।

"अच्छा" वह बोली—"अगर कसम खाने से ही पत्नियाँ मिल जाया करें तो मेरा ख़याल है इस दुनियाँ में एक भी कुआरा नहीं बचे।"

"खैर, यह आपका अपना विचार है और मैं आपको मजबूर भी नहीं करूँगा कि आप मेरी पत्नी बन ही बन जाइये, यह तो आपकी इच्छा पर निर्भर है; बहरहाल मेरे कहने का मतलब यह है कि रात काफी हो गई है और मुझे घर जल्दी ही जाना है। अब रहा प्रश्न आपके ठहरने का तो मेरे विचार से आप मेरे ही घर चली चलिये, दो-चार दिन वहीं रुकिये, फिर की बात फिर देखी जायगी।"

"नहीं, मैं आपके यहाँ नहीं जा सकूँगी।"

"क्यों, मुझसे डर लगता है क्या?"

"नहीं, ऐसी बात नहीं, आप कोई भूतप्रेत थोड़े हैं जो आपसे डर लगेगा। बात असल में यह है कि आपकी पत्नी मुझे आपके साथ इस समय देखेंगी तो, मन-ही-मन न जाने क्या क्या सोचेंगी। कहाँ से बला आ गयी?"

"आप अभी से ऐसी बात क्यों सोचती हैं। मैं उसे समझा दूँगा सब

कुछ और फिर आपको पता होना चाहिये कि वह बड़ी समझदार औरतें हैं।"

"ऐसी बातों में समझदारी काम नहीं देती।" उसने गम्भीर मुद्रा में कहा—"एक औरत दूसरी को जितनी गहराई से समझ सकती है उतना पुरुष नहीं। यह आपकी भूल है इसलिए मैं आपसे सिर्फ यही निवेदन करूँगी कि आप मुझे किसी होटल में ठहरा दीजिये। दस-पाँच दिन मैं वहाँ रहकर अपने भविष्य के विषय में कोई निश्चित प्रोग्राम बना लूँगी। इस बीच अगर आपको थोड़ा समय मिला करे तो कभी-कभी होटल में मुझे दर्शन दे जाया करना। बस यही मेरी अन्तिम 'रिक्वेस्ट' है आप से। मैं आपके इस अहसान को जीवनभर कभी न भूल सकूँगी। और देखिये, आज की इस घटना को अपनी पत्नी से मत कहियेगा, नहीं वे बहुत नाराज होंगी आपके ऊपर।"

"जैसी आपकी इच्छा नीराजी।"

"आप 'जी' और क्यों लगा देते हैं मेरे नाम के सामने, सिर्फ नीरा कहियेगा न !" उसने प्रतिवाद किया—"और दूसरी बात मैं आपसे छोटी हूँ इसलिए 'आप' की बजाय 'तुम कहिए। यह 'आप' 'आप' अच्छा नहीं लगता मुझे।"

नीरा की बातें न जाने क्यों मुझे बहुत अच्छी लगी। मैंने कहा—"नीरा अगर तुम-जैसी चुलबुली लड़की किसी को जीवनसंगिनी के रूप में मिल जाय तो वह कितना भाग्यशाली समझेगा अपने आपको। कितनी अच्छी हो तुम। हालांकि मैं मानता हूँ कि मेरी और तुम्हारी जान-पहचान पिछले दो-तीन घण्टों की एक बड़ी दिलचस्प कहानी है लेकिन ऐसा लगता है जैसे हम एक-दूसरे को कई वर्षों से जानते हैं।"

नीरा शर्माती हुई बोली—"आप मुझे बेकार क्यों बनाने की कोशिश कर रहे हैं, मैं इतनी अच्छी नहीं हूँ जितनी आप सोच रहे हैं। और देखिए आपने तो मेरा नाम पूछ लिया लेकिन क्या मैं भी आपका नाम जान सकती हूँ, हालाँकि मुझे बहुत पहले ही पूछ लेना चाहिए था आपसे।"

"मेरा नाम जानकर क्या करोगी नीरा। बस मेरा उतना-सा ही परिचय काफी है जितना तुम जानती हो कि मैं आगरा का एक लोफर, गुंडा और आवारा हूँ। दूसरी बात यह है कि जिस पक्षी का कहीं स्थायी बसेरा न हो उसका किसी स्थान-विशेष से प्रेम करना निरी मूर्खता ही होगी।"

"तो मैं आप से प्रेम थोड़े करती हूँ, अगर सभ्यता के नाते मैं आपका नाम पूछ रही हूँ इसका मतलब यह तो नहीं कि मैं आपसे प्रेम कर रही हूँ। यदि एक-दूसरे का नाम पूछने मात्र से प्रेम प्रदर्शित हो जाता है तो मेरे विचार से इस पृथ्वी पर रोज ही न जाने कितने प्रेम के नाटक खेले जाते होंगे।"

नीरा की यह बात मुझे अच्छी तो लगी ही लेकिन साथ-ही-साथ झेंपा भी दिया उसने मुझे ऐसी बात कहकर, बोला—"देखिए रात काफी होती जा रही है और इस तरह रात के सन्नाटे में दो अपरिचित युवक-युवतियों का परस्पर बातें करना बड़ा घातक सिद्ध हो सकता है। कहीं गश्त वाला सिपाही इधर आ निकला तो सचमुच हमें नाटक ही खेलना पड़ेगा इसलिए अच्छा तो यही होगा कि पहले मैं आपको किसी होटल में पहुँचा दूँ, बाद में अगर उचित समझूँगा तो अपना नाम बताकर घर का रास्ता पकड़ूँगा।"

"कितनी दूर होगा होटल यहाँ से ?" नीरा ने पूछा।

मैंने सामने संकेत करते हुए कहा—"देखिए, दूर पर वह मर्करी ट्यूब जल रहा है न, वही है गोवर्द्धन होटल, अभी हाल ही में बनकर तैयार हुआ है करीब तीन लाख रुपये में।"

"कौन है इसका मालिक ?" नीरा ने स्वाभाविक प्रश्न किया।

मैंने कहा—"चलिए, रास्ते में सब बता दूँगा, यही कोई डेढ़ फर्लांग तो है ही, बातें करते हुए रास्ता भी कट जायगा।"

मैं और नीरा धीरे-धीरे होटल की ओर चलने लगे, उसकी अटैची मेरे हाथ में थी जिसमें मुश्किल से कोई दो सेर वजन होगा। मैंने अटैची

की ओर देखते हुए पूछा—"क्यों नीराजी, इसमें वजन तो बहुत कम है, कहीं खाली ही तो नहीं रख छोड़ी है खाली-पीली रौब मारने के लिए।"

हँस गई नीरा, बोली—"निश्चिन्त रहिए, इसमें आपके मतलब की कोई चीज नहीं है।"

"क्या मतलब ?"

"यही 'आर्नामेंट्स या कैश'......

"इनसे मेरा क्या मतलब ?"

"गुण्डों की सबसे प्रिय वस्तुएँ जिनकी तलाश में वे दिन-रात घूमा करते हैं।" नीरा ने चलते-चलते मेरी ओर देखते हुए कहा।

"तो अभी भी तुम मुझे गुण्डा ही समझे हुए हो ? अगर ऐसा है तो ये सम्हालो अपनी अटैची, कहीं लेकर रफूचक्कर हो गया तो तुम्हें बहुत तकलीफ़ होगी।"

"लेकिन इसमें रखा ही क्या है जो आप लेकर भाग जायेंगे। दो-तीन साड़ियाँ है बस और अधिक-से-अधिक होगा तो दस-पांच रुपये पड़े होंगे।"

"बड़ी अजीब बात है।" मैंने आश्चर्य के स्वर में कहा—"कम-से-कम हजार-दो-हजार का माल लेकर तो चलना ही था आपको घर से, इस तरह कहाँ-कहाँ मारी फिरेंगी आप, दुनियां पैसे की दोस्त है...।"

"और उन्हीं में से आप भी हैं शायद ?"

"ओ फ़ो ! मुझे हर बात में घसीट लेती हैं आप।" थोड़ी झुँझलाहट के साथ मैंने कहा—"देवीजी मुझे समझने में आप भूल क्यों कर रही हैं ?"

"कहाँ भूल की है मैंने आपको समझने में, अगर ऐसा ही होता तो अनायास ही एक अपरिचित व्यक्ति के साथ क्यों चल देती मैं इस तरह।"

"बाप-रे-बाप तुम लड़की हो या .....।"

"......लड़का" बीच ही में नीरा बोल पड़ी—"क्यों, यही कहना चाहते थे न ?"

"नहीं ! नहीं !"

"नहीं, नहीं क्या अभी-अभी कुछ घंटे पहले भी पार्क में आपने यही शक किया था ?"

"नहीं नीरा, ऐसी बात नहीं, मैं तो सिर्फ यह कहना चाहता था कि अपना पूरा परिचय करा देने के बावजूद भी तुम मुझे बार-बार अपरिचित क्यों कहती हो ।"

"अपरिचित नहीं तो क्या हो ? जिसका नाम-पता तक नहीं जानती उसे मैं परिचित कैसे कह सकती हूँ ।"

"तो आप मेरा नाम जानना चाहती हैं ?"

"हाँ, अगर आपको तकलीफ न हो तो ?"

"नहीं ! नहीं ! नाम बताने में कैसी तकलीफ, अगर आप चाहें तो मुझे 'साहित्यकार' कह सकती हैं ।"

"साहित्यकार......" हँस पड़ी नीरा धीरे से रात की उस निस्तब्धता में बोली—"साहित्यकार भी कोई नाम होता है क्या ?"

"क्यों नहीं, 'साहित्यकार' का मतलब है—लेखक ।"

"ओ ! अब समझी, तो आप लेखक भी हैं। लेकिन लेखकों के भी तो नाम होते हैं जैसे—'कमल' 'नीरज' 'पंकज' 'दिनकर' 'दिनेश' 'सरस' 'नीरस' 'सुमन' 'कंटक' 'निराला' 'उजाला' 'निर्भय' 'उल्लू' 'पागल' 'मस्त' 'आवारा' इनमें से आप कौन हैं ?"

"कुछ भी समझ लो ।"

"कुछ नहीं आप अपने श्रीमुख से बताइये न !"

"पीछे वाला ही समझ लो, जिससे कि आप रास्तेभर मुझे संबोधित करती चली आ रही है ।"

"तो आप 'आवारा हैं—प्यारेलाल 'आवारा'—हिन्दी साहित्य के बहुत बड़े जाने-माने उपन्यासकार। लेकिन वे तो इलाहाबाद में रहते हैं।"

"हाँ! हाँ!" मैंने कहा—"क्या कभी आपकी भेंट हुई है ?"

"नहीं, पहली बार आज ही हो रही है उनसे मुलाकात लेकिन आश्चर्य है कि वे इलाहाबाद से आगरा कैसे आ टपके ? दिखता है इलाहाबाद में उपन्यासों के 'प्लाट्स' नहीं मिलते होंगे इसलिये सोचा होगा चलो आगरा से ही एकाध 'प्लाट' उड़ालाएँ। सचमुच आप गजब के उपन्यास लिखते है आवारा जी। एकाध उपन्यास 'सूखे पत्ते' इत्यादि मैंने भी पढ़े हैं आपके, तभी से आपके प्रशंसकों की लिस्ट में मैंने भी अपना नाम लिखा लिया है, कहिए आजकल कौनसा उपन्यास देने जा रहे हैं आप हिन्दी साहित्य को ?"

"क्यों मजाक करती हो नीरा, मैं वह 'आवारा' नहीं हूँ जिसकी पूजा करने लग गई हैं आप 'सूखे पत्ते' पढ़कर।"

"माफ़ करियेगा आवाराजी मुझसे गलती हो गई आपको समझने में, खैर तो आप हिन्दी साहित्य के कोई नवीन 'आवारा' दिखते हैं।

मैंने नीरा को इसका कोई उत्तर नहीं दिया, क्योंकि वह जान-बूझकर व्यर्थ की बहसबाजी कर रही थी। दूसरी बात हम होटल के करीब भी आ चुके थे। जहाँ सभ्यता के नाते ऐसी फिजूल बातें करना कम-से-कम मुझे तो अच्छा नहीं लगता था क्योंकि होटल के मालिक से मेरा अच्छा-खासा परिचय पहले से ही था।

थोड़ी दूर और चलकर हम दोनों 'दिल्ली दरवाजे' के सामने आ गये जो आगरा से मथुरा जाने वाली सड़क के बाईं ओर मुगल पीरियड का बना हुआ लाल पत्थर का एक साधारण-सा दरवाजा है जो स्थापत्य-कला की दृष्टि से कोई विशेष महत्व नहीं रखता फिर भी मुगल बादशाहों का भवन-निर्माण-कला के प्रति जो अगाध प्रेम था उसका जीता-जागता

नमूना अवश्य है। आज भी इस दरवाजे की टूटी-फूटी खुलाड़ों में बैठे हुए जंगली कबूतरों के झुंड-के-झुंड जब 'गुटुरगू-गुटुरगू' किया करते है तो उस समय दरवाजे की छाया में बैठा हुआ व्यक्ति कुछ क्षरण के लिए अपना व्यक्तित्व भूलकर मध्यकालीन समाज के रोमांटिक सपने देखने लगता है। कितना विलासी जीवन रहा होगा उस समय के लोगों का और विशेष रूप से मदिरा और नारी से दिन-रात खिलवाड़ करने वाले मुगल बादशाहों का जिनकी अय्याशी की कहानी आज भी इन इमारतों के लाल पत्थर मूक भाषा में कहते जान पड़ते हैं। समय चला जाता है ऐसी इमारतों को अपने कठोर पैरों से रोंदता हुआ आगे की ओर और उनकी ध्वस्त प्राचीरों की बिखरी हुई ईंटें ऐसी जान पड़ती हैं जैसे खिल-खिलाकर अट्टहास कर रही हों शाही ऐश्वर्य के इस दयनीय रूप को देखकर लेकिन जैसे ही कबूतरों की ढेर सारी बिखरी हुई बीट की दुर्गन्ध नाक के रास्ते से मस्तिष्क की परतों में घुसने लगती है तो मनुष्य के सपने बिखर जाते हैं और फिर एक क्षरण भी वहाँ रुकने के लिये तबियत नहीं करती।

"क्या यही दिल्ली-दरवाजा है ?" सहसा नीरा पूछ बैठी।

मैंने कहा—"हाँ, यही है वह दरवाजा।"

"लेकिन इसको दिल्ली दरवाजा क्यों कहते हैं ?" दरवाजे की ओर एक टक नीरा देखती हुई बोली।

मैंने कहा—"शायद दिल्ली-आगरा रोड पर बना हुआ है इसलिये इसे दिल्ली दरवाजा कहते है !"

इस दरवाजे से चिपटी हुई एक छोटी-सी मसजिद भी है और इसके सामने पक्के चबूतरे पर एक नीम का सघन वृक्ष है, वृक्ष के नीचे एक मजार है जो प्राय: एक हरे रंग की चादर से ढका रहता है। लोगों का कहना है कि यह औरंगजेब के गुरू की कब्र है लेकिन यह कहाँ तक सत्य है, कुछ कह नहीं सकता। आज भी उस पर रोज शाम को चिराग जलता

है और दिनभर वहाँ अगरबत्ती की सुगन्ध महका करती है। शायद इसी कारण उस सुनसान जगह पर हर समय दो-चार व्यक्ति बैठे ही दिखाई देते हैं—विशेष रूप से रिक्शे वाले अथवा कोई श्रद्धालु मुसलमान नीम के पेड़ की जड़ में दो-तीन पानी से भरे हुए मटके रखे रहते हैं और दो-चार कुल्हड़ भी। लोग आते हैं, कुल्हड़ डुबोकर पानी पीते हैं और दस-बीस मिनट वहाँ बैठकर आगे बढ़ जाते हैं।

सड़क के दायीं ओर एक नीची-सी जगह है जहाँ आज गोवर्द्धन होटल की भव्य इमारत बनी हुई है। मेरे विचार से आगरा में स्थापत्य कला की इस शैली पर बनी हुई कोई दूसरी इमारत नहीं। होटल के सामने हर समय आपको चार-छः कार और टैक्सियाँ खड़ी हुई मिलेंगी, दस पाँच विदेशी चेहरे भी वहाँ देखने को मिल जाएँगे और दो-चार मोटी तोंद वाले लाला लोग भी जिन्हें हम दूसरी भाषा में बड़े-बड़े बिजनैसमैन कह सकते हैं—ऐसे लोग ही तो रुक सकते हैं इतने बड़े होटल में, कोई छोटा-मोटा मध्यम वर्ग का आदमी तो होटल की शान-शौकत देखकर ही घबड़ा जायगा। दर्जनों मर्करी ट्यूब्स रातभर प्रकाश विकीर्ण करते रहते हैं होटल के चारों ओर—ऐसा ही है वह होटल।

होटल की ओर हाथ से संकेत करते हुए मैंने कहा—"यही गोवर्द्धन होटल है नीरा।"

"लेकिन यहाँ के 'चार्जेज़' तो बहुत अधिक होंगे।" होटल की शान-शौकत देखकर नीरा चकरा गई।

मैंने कहा—"चलो एकाध दिन के लिए क्या चार्जेज देखना, होटल वाला भी कहेगा कि हाँ किसी रईस से पाला पड़ा है।"

नीरा मुस्करा गई मेरी ओर देखकर, बोली—"हाँ आप-जैसों का तो इंतजार करता ही होगा बिचारा नहीं तो भला होटल कैसे चलेगा!"

हम दोनों सड़क से उतरकर होटल में चले गये। मैनेजर का कमरा मेरा पहले ही देखा-भाला था। किवाड़ों में ज़रा-सा धक्का लगाकर हम

दोनों अन्दर पहुंच गये। मुझे देखते ही मैंनेजर साहब बोले—"अरे मि० शर्मा आप······"

एक हल्का-सा आश्चर्य था उनके कहने में। मैंने कहा—"हाँ शर्मांजी ऐसे ही चला आया आप लोगों के दर्शन करने, कहिये खैरियत तो है।"

"हाँ सब ठीक ठाक है लेकिन आप कहिये बहुत दिनों बाद दिखाई दिये हो। कहाँ पहुँच गये हो आजकल ?"

"दिल्ली पहुंच गया हूँ शर्मा जी।" सामने पड़ी हुई कुर्सी पर बैठते हुए मैंने कहा।

धीरे से नीरा भी बैठ गई मेरी बगल वाली कुर्सी पर। उस समय उसके चेहरे पर भोलापन था और नेत्रों में चंचलता, कभी मेरी ओर देखकर होंठों-ही-होंठों में मुस्करा जाती तो दूसरे ही क्षण नीचे की ओर झुक जाती उसकी निगाहें। फिर आस-पास की चीजों को देखने लगती कमरे में।

"तो दिल्ली के किसी कालेज में लेक्चरार हो गये हो क्या ?"

"हाँ, एम० ए० के बाद यही तो एक नौकरी बच रहती है।" मैंने कहा।

"ठीक है, यह कौनसी बुरी नौकरी है भई, आजकल 'अनएम्प्लायमेंट' के जमाने में जो मिल जाय वही कम है।" मैंनेजर साहब ने अधजली सिगरेट एशट्रे में दबाते हुए कहा।

इसके बाद बोले—"कहिये, आगरा कैसे आना हुआ ?"

मैंने नीरा की ओर जरा-सा मुँह का रुख करते हुए मैनेजर से कहा—"आप हैं मेरी 'वाइफ' मिसेज नीरा बी० ए०, अभी-अभी शादी हुई है इसलिये इन्हें ताजमहल दिखाने लाया हूँ पहली पहली बार।"

मैंने तिरछी दृष्टि से देखा नीरा नीचे को सर झुकाये दाँतों के बीच होंठ दबाकर मन-ही-मन हँस रही थी।

"बहुत खुशी हुई नीराजी आपसे मिलके।" मैनेजर ने नीरा की ओर देखकर कहा।

वह एक साथ सम्हल गई, और दोनों हाथ जोड़कर बोली—"नमस्ते !"

"नमस्ते भई नमस्ते !" मैनेजर साहब हँसकर बोले !

मुझे सचमुच बड़ा आश्चर्य हुआ नीरा के इस अप्रत्याशित व्यवहार को देखकर। कितने सुन्दर ढंग से उसने नमस्ते किया था मैनेजर से जैसे सचमुच कोई नवविवाहिता पत्नी अपने पति के दोस्तों से परिचय कराने पर करती है। मैं तो मन-ही-मन डर रहा था कि कहीं सब भेद न खोल दें ये देवीजी जैसा रिक्शे वाले से कह रही थीं। एक घण्टे पहले की नीरा जिसका मुँह 'ईडियट' 'नानसेंस' 'बदतमीज' और न जाने क्या-क्या कहते नहीं दुख रहा था वही सौम्यता की मूर्ति बनी बैठी थी उस समय।

मैनेजर ने पास ही रखा एक रजिस्टर उठाया और उसे खोलते हुए बोले—"आइये तो मि० शर्मा रजिस्टर की 'एंट्रीज' फिलअप कर लें।"

"क्यों नहीं शर्माजी, जरूर करिये।"

"तो इस समय आप कहाँ से आ रहे हैं ?" मैनेजर ने पूछा।

"दिल्ली।" मैंने कहा।

"अरे भई पूरा 'एड्रैस' नोट करवाओ न।"

"पूरा एड्रैस, अरे नीरा बताओ न पूरा एड्रैस।" मैंने नीरा की ओर देखकर कहा।

नीरा मेरी ओर देखकर हँसने लगी तो मैनेजर ने कहा—"क्यों आपको अपना 'एड्रैस' नहीं मालूम, बड़ी अजीब बात है।"

मैंने कहा—"ऐसी बात नहीं शर्माजी, असल बात यह है कि इस समय मैं अपनी ससुराल से सीधा चला आ रहा हूँ इन्हें लिवाकर और

आप जानते हैं कि मेरी सुसराल भी दिल्ली में है और सर्विस भी वहीं करता हूँ इसलिये ससुराल का पता ठीक-ठीक याद नहीं, मिसेज़ को अच्छी तरह पता होगा, बताओ न नीरा ?"

"जी, लिखिये" नीरा बोली—"कोठी नं० १२२, 'कमलानगर' दिल्ली।"

"आपका बिजनैस ?"

"लेक्चरारशिप।"

"किस 'परपज़' से आये हैं आप ?"

"ऐसे ही घूमने......

"दो मेम्बर्स ?"

"जी हाँ......

"रिलेशन ?"

"हसबेंड एण्ड वाइफ़......

"कास्ट ?"

"ब्राह्मण......

"कितने दिन रुकेंगे आप ?"

"यही कोई दो-तीन दिन .....

"यहाँ से कहाँ जायँगे आप ?"

"वहीं जहाँ से आये हैं..... "

"वाह मि० शर्मा आपने तो ससुराल को ही घर बना लिया है।" यह कहकर मैनेजर साहब मुस्करा गये।

"मैंने कहा—"जरूरत हो तो आप मेरे घर का पता नोट कर लीजिये शर्माजी कैसी बात कर रहे हैं आप भी, लिखिये क्वार्टर नं० २३७ 'शक्तिनगर' दिल्ली।"

लेकिन मैनेजर ने लिखा नहीं वह पता, कुछ रुककर वे बोले—"तो एडवांस जमा करा दीजिये आप।"

"हाँ ! हाँ ! क्यों नहीं, मैंने पतलून की जेब में हाथ डालते हुए पूछा—"बोलिये, कितने रुपये जमा कराने होंगे ?"

"यही कोई पच्चीस एक जमा करा दीजिये, बाकी हिसाब फिर हो जायगा।"

मैंने जेब में हाथ डाला तो सिर्फ दस रुपये का नोट निकला, वह भी पता नहीं घूमते समय न जाने क्यों रख लिया था मैंने अपनी जेब में वरना रोजाना एकाध रुपये से अधिक नहीं रखता था मैं अपने पास। ऐसी स्थिति में नीरा से माँगने के अतिरिक्त और कोई चारा ही न था मेरे पास, बोला—"अरे जरा पन्द्रह एक रुपये निकाल देना अटैची में से।"

नीरा पहले तो मुस्कराई मेरी ओर देखकर फिर कुछ बोली नहीं और चुपचाप पन्द्रह रुपये अटैची में से निकालकर मेरी ओर बढ़ा दिये। रुपये जमा करने के बाद मैनेजर ने एक रसीद दी मुझे और नौकर को आवाज़ दी—"अरे बहादुर।"

और आवाज़ के साथ ही एक पहाड़ी नौकर अन्दर आ गया शायद पहले से ही बैठा होगा दरवाजे से सटकर।

मैनेजर ने आज्ञा दी—"जाओ ऊपर इन साहब को ले जाओ और कमरा नं० २२ खोल देना।"

जैसे ही मैं और नीरा उठने लगे पहाड़ी नौकर के साथ ऊपर जाने के लिए वैसे ही मैनेजर को सहसा कुछ याद आ गया और बोला—"अरे मि० शर्मा जरा माफ करियेगा मैं आपका पूरा नाम भूल गया हूँ, कृपया बताने का··· ।"

मैंने कहा—"बिना नाम बताये काम नहीं चलेगा क्या शर्माजी ?"

मैनेजर साहब अपनी मजबूरी दिखाते हुए बोले—"काम तो चल जायगा मि० शर्मा लेकिन रजिस्टर की 'एंट्रीज' भी तो 'कम्पलीट' करनी है।"

"तो कुछ भी लिख लीजिये।" मैंने एक अजीब अंदाज में कह दिया।

"कुछ से तो काम नहीं चलेगा भई, अगर कुछ ऐतराज हो नाम बताने में तो······।"

सहसा नीरा जो बहुत देर से मेरा नाम जानने की इच्छुक थी, इस परिस्थिति में मुझे पाकर बड़े गौर से मेरे चेहरे पर बदलते हुए भावों को देखकर पहले तो मुस्कराई फिर मैनेजर की ओर देखकर बोली—"एतराज तो कुछ नहीं मैनेजर साहब लेकिन घर वालों ने इनका नाम ही कुछ इस ढंग का रख छोड़ा है कि सहसा बताते हुए शर्म आती है इन्हें।'"

"तो आप ही बता दीजिये न?" मैनेजर साहब की गोल-गोल आँखें नीरा के चेहरे पर जाकर जम गईं।

यह बात मैनेजर साहब कहने को तो कह गये लेकिन शायद उन्हें इस बात का ध्यान नहीं रहा कि भारतीय नारी अपने मुँह से पति का नाम कदापि नहीं ले सकती और शायद यही सोचकर वे कुछ झेंप-से गये पीछे से, लेकिन नीरा कहीं चूकने वाली थी; तड़ाक से बोली—"आपका नाम प्यारेलाल 'आवारा' है मैनेजर साहब।"

मुझे काटो तो खून नहीं, बुत की तरह खड़ा-खड़ा देखता रहा नीरा की इस अप्रत्याशित हरकत को और एक हलकी-सी क्रोध की लहर दौड़ गई मेरे चेहरे पर। दूसरी तरफ मैनेजर साहब इस बुरी तरह खिल-खिलाकर हँस पड़े कि मेरे जी में आया यहाँ से भाग जाऊँ। नौकर की ओर मैंने देखा तो वह भी मन-ही-मन मुस्करा रहा था और नीरा का तो चेहरा ही उतर गया क्षणभर में, अपने आप में सिमटी जा रही थी बिचारी शायद यह सोचकर कि कितनी बड़ी बदतमीजी की है उसने बिना सोचे-समझे, पता नहीं क्या सजा मिलेगी उसे मेरी ओर से और शायद यही सोचकर उसने पलभर को मेरी ओर देखकर उसी तरह

पलकें नीचे गिरा लीं जिस तरह शेर के सामने बकरे की हालत होती है ।

जल्दी से मैनेजर को अपना नाम बताकर पहाड़ी नौकर के साथ मैं कमरे से बाहर हो गया । आगे-आगे नौकर चल रहा था और पीछे-पीछे मैं । सोचता जा रहा था मैनेजर न जाने क्या-क्या सोचेगा मेरे और नीरा के विषय में, यही न कि नीरा कितनी बदतमीज टाइप की लड़की है जिसे बात करने का जरा भी शऊर नहीं, अपने पति की लोगों के बीच में इस तरह खुश्की उड़ाती है जैसे वह पति न होकर कोई मन-चला दोस्त हो उसका । और जैसे ही पीछे की ओर मैंने मुड़कर देखा—नीरा दाहिने हाथ में अटैची लटकाए मरियल चाल से चली आ रही थी मेरे पीछे-पीछे विचारों की दुनियाँ में डूबती-उतराती ।

होटल की दूसरी मंजिल के सारे कमरे एक कतार से बने हुए थे, ठीक वैसे ही जैसे नीचे की मंजिल के थे । कमरों के सामने एक लम्बा-सा बरांडा था पटा हुआ और हमें जो कमरा मिला था वह कतार के आखिरी वाला था । नौकर ने आगे बढ़कर कमरे का ताला खोल दिया और अंदर घुसकर पलंगों की सिकुड़ी हुई चादरें ठीक करने लगा ? कमरे में तीन खिड़कियाँ थीं जिनमें दो तो दिल्ली-दरवाजे की ओर खुलती थीं और एक बलवंत राजपूत कालेज की ओर । अंदर घुसकर मैंने एक सरसरी दृष्टि दौड़ाई चारों ओर लेकिन बिजली के उस तेज प्रकाश में कोई विशेष चीज दिखी नहीं वहाँ । एक ओर टेबुल और कुर्सी रखे थे, दो पलंग थे स्प्रिंग वाले—वैसे ही जैसे अस्पतालों में होते हैं, सामने दीवाल पर एक बड़ा-सा शीशा लगा हुआ था । और आसपास पाँच सात खूँटियाँ लगी थीं कपड़े टाँगने के लिये, कमरे के एक कोने में नल की टोंटी थीं और दीवाल पर एकाध कलेंडर लगा हुआ था । बस यही था सब-कुछ उस कमरे में ।

नीरा ने अंदर घुसकर अटैची टेबुल पर रख दी चुपचाप और 'दिल्ली-दरवाजे' की ओर खुलने वाली एक खिड़की में दोनों कुहनियाँ

टिकाकर हथेलियों के बीच चेहरा साधकर कुछ देखने लगी बाहर सड़क की ओर। मैं कुर्सी पर अन्यमनस्क सा बैठ गया और एक बार नीरा की ओर देखा लेकिन वह बाहर की चीजें देखने में इतनी तल्लीन थी कि मेरी ओर न देख सकी! मुझे अब भी उस पर रह-रहकर गुस्सा आ रहा था।

नौकर जब कमरे की हर चीज तरतीब से लगा चुका तो मैंने उसे एक कैटली चाय, कुछ टोस्ट और नमकीन लाने का आर्डर देकर नीचे भेज दिया फिर नीरा की ओर देखकर बोला—"नीरा······।"

उसने पलटकर मेरी ओर देखा और बहुत देर तक सूनी-सूनी आँखों से मेरी ओर देखती ही रही लेकिन मुँह से कुछ नहीं बोली।

"तुम सचमुच बहुत बदतमीज़ लड़की हो नीरा।"

"·······!' इसका उसने कोई जवाब नहीं दिया और अपराधी की तरह नीचे की ओर पलकें झुकाकर पैर के अँगूठे से फर्श को खुरचने लगी।

"क्यों अफसोस हो रहा है क्या ?"

अबकी बार उसने धीरे से ऊपर की ओर चेहरा उठाया और बोली—"लेकिन आपने ही तो बताया था मुझे यह नाम।"

"अब तो पता चल गया मेरा असली नाम।"

"हाँ! लेकिन पहले ही बता दिया होता तो क्या बिगड़ जाता आपका ?"

मैंने कहा—"अगर पहले बता देता तो फुटबाल जैसा फूला हुआ तुम्हारा यह चेहरा देखने को कैसे मिलता। कैसी खूबसूरत लग रही थीं टुन-टुन जैसी, क्यों ?"

नीरा ने दोनों हाथों से अपना चेहरा छुपा लिया और तुनककर बोली—"जाइये हम नहीं बोलते आपसे।"

"क्यों नहीं बोलोगी ?" मैंने कुर्सी से उठकर उसकी ओर जाते हुए पूछा।

वह और भी सिमटकर खड़ी हो गई। मैंने उसकी दोनों कलाइयाँ पकड़कर हटाने की कोशिश की तो और भी जोर से छुपाने लगी अपने चेहरे का, बोली—"देखिये मुझे यह बदतमीज़ी पसंद नहीं !

"यह बदतमीज़ी है ?"

"और नहीं तो क्या है, अभी नौकर आ गया तो क्या सोचेगा अपने मन में ?"

"कुछ नहीं सोचेगा !" मैंने कहा और उसके दोनों कंधों पर हाथ रख दिया। एक झटके में वह अपने को छुड़ाकर दूर जा खड़ी हुई छिटककर और तीखे स्वर में बोली—"देखिये, अभी से ये हरकतें मत करिये नहीं मैं शोर मचा दूँगी।"

"तो फिर कब करने दोगी ?"

"मुझे नहीं पता।" वह बोली—"हाय, बड़े बेशर्म होते हैं लड़के।"

"और लड़कियाँ बड़ी शर्मदार होती हैं, क्यों ?"

"लड़कों की तरह बेशर्म भी नहीं होतीं !"

"अरे देवीजी लड़कियों का वश चले तो वे लड़कों को सरे-बाजार बेचकर चने खा जाएँ, तुम कैसी बात कर रही हो ?" कहता हुआ मैं फिर से कुर्सी पर आकर बैठ गया।

तभी बहादुर आ गया दोनों हाथों में 'ट्रे' लेकर और मेज पर रखता हुआ बोला—"और कोई चीज चाहिये बाबूजी ?"

"और कुछ नहीं चाहिये, तुम जा सकते हो।"

पहाड़ी जब चला गया तो मैंने नीरा की ओर देखा जो एक कोने में चुपचाप खड़ी मेरी ओर घूर-घूरकर देख रही थी। बोला—"आओ, थोड़ी पेट पूजा कर लें।"

"आप ही करिये··· "

"तुम नहीं खाओगी ?"

"नहीं, मुझे भूख नहीं लग रही।"

"तो चाय तो पीलो ?"

"नहीं पीऊँगी······"

"क्यों ?"

"इसलिये कि आप फिर से कोई हरकत करने लग जायेंगे, अगर मैं आपके पास बैठूँगी तो ।"

"और रातभर क्या किसी और के कमरे में सोने चली जाओगी, तब नहीं हरकत कर सकूँगा ?"

साड़ी का आँचल बायें हाथ पर लपेटती हुई बड़ी नजाकत के साथ बोली—"ये दो पलंग किस लिये हैं ? एक पर मैं सोऊँगी और दूसरे पर आप ! लेकिन, हाँ आप तो अपने घर जाइये न । आपकी पत्नीजी आपकी प्रतीक्षा में आँखें फैलाए बैठी होंगी !"

"अरे तुमने अच्छी याद दिलादी, नहीं मैं तो भूल ही गया था । आओ जल्दी से चाय पी लें फिर मुझे जाना है !"

"कहाँ जाना है ?"

"अपने घर ! अपनी पत्नी के पास ।" मैंने कहा—"कहीं नाराज हो गई तो कल से भूख हड़ताल कर बैठेगी फिर तो मुझे भी भूखों मरना पड़ेगा उसके साथ !"

वह चुपके से मेज के दूसरी ओर बैठ गई कुर्सी पर मेरी ओर मुँह करके और दो कपों में चाय बनाने लगी । एक कप मेरी ओर सरकाती हुई बोली—"किस मुहल्ले में है आपका घर ?"

"नाई की मंडी" मैंने चाय की चुस्की भरते हुए कहा—"लेकिन किराये पर रहता हूँ, अपना नहीं है ।"

"आपकी पत्नी के अतिरिक्त और कौन रहता है आपके साथ ?" चाय में चीनी मिलाते हुए नीरा ने पूछा ।

मैंने कहा—"एक छोटा-सा मुन्ना भी है ।"

"और ?"

"और कोई नहीं······।"

"आपकी 'वाइफ़' कितनी पढ़ी हैं ?"

"बी० ए० पास है और इंगलिश में एम० ए० करने की सोच रही है। बड़ी वफादार औरत है। भगवान हर किसी को ऐसी ही बीबी दे जैसी मुझे मिली है। उसका रंग तुम्हारे से साफ है, सीप-जैसी बड़ी-बड़ी आँखें हैं, काले-काले खुले हुए बालों के बीच उसका भरा हुआ गोरा चेहरा ऐसा लगता है जैसे काली-काली घटाओं के बीच चन्द्रमा आँख-मिचौनी खेल रहा हो और उसका नाम भी वैसा ही है—चंद्रमुखी ! कितना प्यारा नाम है। मुझे बेहद पसंद है। कहती है, मैं भले ही एक हफ्ते तक भूखी रह सकती हूँ लेकिन आपके बिना एक पल भी नहीं रह सकती। भला तुम्हीं सोचो ऐसी पत्नी को कौन नहीं चाहेगा ! रात को जब मैं सोता हूँ तो मेरे पैताने बैठकर घंटों मेरे पैर दबाया करती है। रात को कई-कई बार उठकर मुझे चादरा उढ़ाती है ताकि मुझे ठंड न लग जाय और जिस दिन मैं बहुत रात तक लिखता ही रहता हूँ तो वह भी जागती ही रहती है। मेरे पास कुर्सी पर बैठी-बैठी किताबें ही पढ़ती रहती है और जब उसे नींद आने लगती है तो झुँझलाकर कहती है—"आप सोते क्यों नहीं, रात के दो बजने आ रहे हैं। कहीं तबियत खराब हो जायगी तो मेरी आफत कर दोगे।"

"इस पर मैं कुर्सी से उठकर उसके पास चला जाता हूँ और उसकी मर्जी के खिलाफ पाँच-सात बार चूम लेता हूँ उसके लाल-लाल होंठों को फिर तो वह बनावटी गुस्से में आकर कहती है—"मुझे आपकी ये आदत अच्छी नहीं लगती जानवरों जैसी, जब देखो तभी ऐसी ही मक्कारी की बातें सूझती रहती हैं आपको ! इसके अलावा कुछ और भी आता है आपसे या हर समय इश्क का भूत ही सवार रहता है आपके सर पर। जानवरों को भी मात कर दिया आपने तो, एक बार को वे भी सो जाते हैं रात को लेकिन आपको तो रात को भी चैन नहीं पड़ता।"

"कितनी प्यारी-प्यारी बातें करती है, फिर तो नीरा सच कहता हूँ मुझसे नहीं रहा जाता और उसे गोद में उठाकर गुदगुदी चारपाई

पर पटककर कहता हूँ—"तुम सो जाओ न चन्द्रा, मेरे लिए क्यों जगती हो। मैं तो लेखक हूँ जिसे जब धुन आती है, लिखने बैठ जाता है और तुम्हें पता है मुझे बहुत जल्दी ही हिन्दी का उपन्यास-सम्राट बन-कर दिखा देना है इन हिन्दी वालों को, क्या तुम इतना भी त्याग नहीं कर सकती हो मेरे लिये !"

वह तुनककर पैर पटकने लगती है चारपाई पर और उठने की कोशिश करती हुई कहती है—"नहीं ! नहीं ! मुझे छोड़ दीजिये, मैं नहीं सोऊँगी जब तक आप नहीं सो जायेंगे।" और जब मैं उसके कंधे पकड़कर उठने नहीं देता, कहता हूँ—"तुम सोओ देखो मैं अभी पाँच मिनट में सोता हूँ, तो गले में दोनों बाहें डाल कर अपनी ओर खींचती हुई कहती है—"तो यहीं सो जाइये न फिर " लेकिन मैं उसकी बाँहें छुड़ाते हुए कह देता हूँ, "तुम पागल तो नहीं हो चन्द्रा अगर मैं यहाँ सोऊँगा तो मस्ती-मस्ती में रात को कहीं मुन्ना मचल गया हम दोनों के बीच में तो फिर क्या होगा ?"

"होगा क्या" वह कह देती है, "मैं मुन्ना को अभी दूसरी चारपाई पर लिटाए देती हूँ फिर तो नहीं मचलेगा वह !"

"अब तुम्हीं बताओ नीरा उसे क्या जवाब दूँ ! हारकर मुझे उसी वक्त सो जाना पड़ता है उसकी आज्ञानुसार वरना जबरदस्ती बैठकर लिखने की कोशिश भी करो तो कभी पैन उठा ले जाती है, कभी अध-लिखे कागजों को खींचकर बक्से में बंद कर देती है तो कभी बार-बार बिजली बुझाने लग जाती है। उसकी इन सब बातों पर किसी तरह काबू भी पा लो तो इस बात की धमकी देती है कि मैं मुन्ना को जगाती हूँ जो रो-रोकर इतना शोर मचायेगा कि फिर नहीं लिख सकेंगे आप। अगर खुदानखास्ता किसी दिन मेरी तबियत खराब भी हो जाती है तो फिर मत पूछो उस पर क्या गुजरती है। दिनभर परेशान रहती है और मेरी चारपाई से हटकर जाती ही नहीं कहीं। सिरहाने बैठकर मेरे सर को अपनी गोद में रख लेती है और घंटों माथे पर बाम मलती

रहती है, बालों में मीठी-मीठी उँगलियाँ चलाती रहती है। कितना अच्छा लगता है मुझे उस समय, धीरे-धीरे नींद आने लगती है तो उसी की गोद में सर रखकर सो जाता हूँ और जब तक जग नहीं जाता हूँ वह मेरा सर अपनी गोद में से हटाती नहीं, भले ही दो-चार घंटे तक क्यों न सोता रहूँ मैं।"

"इस बीच अगर मुन्ना जग भी जाता है तो वह न तो उसे उठाती है, न दूध ही पिलाती है; बस पड़ा-पड़ा रोने देती है और जब मेरी आँख खुल जाती है तो मुन्ना को रोते हुए देखकर मैं कहता हूँ—"अरे मुन्ना रो रहा है, भूखा होगा उसे दूध क्यों नहीं पिलाया तुमने। इस तरह रोते-रोते बीमार हो जायगा तो फिर क्या होगा और उसे कुछ हो गया तो ?"

"तो क्या, आप रहेंगे तो बहुत सारे मुन्ने आ जायेंगे !" वह कह देती है एक भोली बालिका की तरह जैसे कुछ जानती ही नहीं, बच्चे पैदा करना तो जैसे हँसी-खेल है उसके लिये।

अब तुम्हीं बताओ नीरा दो-तीन साल की मेहनत के बाद तो हम दोनों एक मुन्ना बना पाये हैं और उसे भी कुछ हो जाय तो कैसे बीतेगी हम पर, कहीं मुँह दिखाने काबिल बचेंगे दुनियाँ में ? इतनी नादान है वह और उसकी यही नादानी मुझे बहुत अच्छी लगती है।

इतनी सारी बातें करने के बाद मैंने ऐसा महसूस किया जैसे नीरा अपने-आपमें कुछ खो बैठी हो। बुझी-बुझी आँखों से वह बहुत देर तक मेरी ओर अपलक देखती रही। उसका चेहरा उदास हो गया था। उसका चाय का प्याला ज्यों-का-त्यों रखा था और एक घूँट भी नहीं पिया था उसमें से नीरा ने। मैंने उँगली लगाकर देखा वह ठंडी हो गई थी पानी की तरह और इस बीच शायद तीन कप चाय पी गया था मैं अपने आप कैटली में से उड़ेलकर। पीने के लिये दोनों वक्त चाय और पढ़ने के लिये पत्र-पत्रिकाएँ यही तो मेरे जीवन की दो खास

विशेषताएँ हैं। जिस दिन मुझे चाय नहीं मिलती उस दिन न मैं कुछ पढ़ पाता हूँ और न कुछ लिखा ही जाता है मुझ से।

"क्यों नीरा तुमने चाय नहीं पी अभी तक, सारी ठंडी हो गई रखी-रखी।" मैंने पूछा।

वह बोली—"मुझे कुछ भी अच्छा नहीं लगता!"

"तो ये दाल-सेव ही खालो न!" मैंने फिर पूछा और नमकीन की एक प्लेट उसके सामने रख दी।

वह झल्ला उठी, प्लेट वापस मेरी ओर सरकाती हुई बोली—"मैंने कह दिया न कि मैं कुछ नहीं खाती फिर भी आप मेरे पीछे क्यों पड़े हैं?"

उसकी ठंडी चाय मैंने कैटली की गरम चाय में उड़ेल दी और एक नया कप गरम चाय से छलकता हुआ टोस्ट सहित उसकी ओर बढ़ाते हुए कहा—"लो, मेरे कहने से एक कप चाय और यह टोस्ट खा लो नीरा। तुम तो बहुत अच्छी हो न।"

अबकी बार वह बुरी तरह बिगड़ उठी, बोली—"मैंने एक बार आपसे कह दिया है नहीं पीऊँगी! नहीं पीऊँगी!! नहीं पीऊँगी!!! फिर भी आप मानते क्यों नहीं!"

"लेकिन पिओगी नहीं तो जिओगी कैसे नीरा?" मैंने उसे और भी छेड़ दिया।

वह बोली—"मुझे जीने की अब कोई तमन्ना नहीं है, पता नहीं इस जिंदगी को क्यों लिये फिर रही हूँ इधर-से-उधर! काश, मुझे मौत आ जाय तो कितना अच्छा हो!"

"लेकिन तुम्हें यह हो क्या गया है नीरा, अभी-अभी तो तुम बहुत खुश थीं! कितनी अच्छी-अच्छी बातें बताई हैं मैंने तुम्हें अपनी पत्नी के बारे में।"

"आपके लिये अच्छी होगी मेरे लिये नहीं" वह गम्भीर स्वर में बोली—"आपकी एक-एक बात मुझे इतनी बुरी लग रही थी कि जी चाहता था यहाँ से उठकर भाग जाऊँ—बहुत दूर जहाँ आपकी वह आवाज न सुन सकूँ लेकिन न जाने क्या सोचकर सुनती रही—सुनती रही और अब आपसे भी मुझे नफरत होने लग गई है न जाने क्यों ? कुछ देर पहले रास्ते में जब आपने मुझसे कहा था कि तुम मेरे घर चल सकती हो क्योंकि मैं अकेला रहता हूँ ! बिलकुल अकेला तब न जाने क्यों मुझे बहुत खुशी हुई थी। उस वक्त बहुत अच्छे लग रहे थे आप मुझे लेकिन अब······अब आप पत्नी के साथ रहते हैं तो मेरा जी चाहता है आपसे बिल्कुल नहीं बोलूँ। अभी तक तो मैं सोच रही थी कि आप अकेले ही रहते होंगे लेकिन अब मुझे पक्का विश्वास हो गया है कि आप किसी और के हैं, मैं व्यर्थ ही आपके विषय में न जाने क्या-क्या सोच रही हूँ। कितनी मूर्ख हूँ मैं !" एक निःश्वास भरकर रह गई नीरा।

मैंने पूछा—"इसका मतलब है नीरा तुम मुझसे कुछ चाहती हो ?"

एक फीकी-सी मुस्कराहट थिरक उठी उसके होंठों पर, बोली—"अब आप दे भी क्या सकते हैं मुझे, जो कुछ था आपके पास देने के लिये वह किसी और ने ही ले लिया।"

"तुम ठीक कहती हो नीरा, मेरी पत्नी है भी इसी काबिल। तुम जानती हो वह मुझे कितना चाहती है, कितना प्यार करती है—शायद दुनियाँ में कोई दूसरी लड़की मुझे उतना प्यार नहीं कर सकती ?"

नीरा को शायद मेरी बात पसंद नहीं आई, बोली—"आप कितने नासमझ हैं। इतना नहीं जानते कि हर लड़की के सीने में दिल होता है, वह भी किसी को अपने दिल में छुपाना जानती है, उसे भी किसी के बाहुपाश में बँधने की अतृप्त लालसा होती है, वह भी किसी को अपना कहने के लिये कितनी बेचैन रहती है ? इन सब बातों को

आप क्या समझेंगे। काश ! कि आपके पास लड़की का दिल होता·········!"

"माफ करिये देवीजी मुझे लड़की के दिल की जरूरत नहीं, वैसे अनुभव के लिये अगर आप चाहें तो हम परस्पर अदला-बदली कर लेंगे अपने दिलों की, लेकिन सिर्फ एक रात के लिये ही। दूसरे दिन आपको मेरा दिल वापस कर देना होगा ? बोलिये, क्या इरादा है ?"

नीरा विनोद करती हुई बोली—"आपके पास दिल है भी या वैसे ही बकवास कर रहे हैं, मेरा तो विचार है इस वक्त आपका दिल आपकी पत्नी के पास होगा ?"

"ऊँहँ ! दिल हमेशा मेरे ही पास रहता है अगर तुम्हें विश्वास न हो तो अभी दिखाता हूँ ···· ।" कहता हुआ मैं कुर्सी से उठ गया।

नीरा मुझे रोकती हुई बोली—"अरे रे ! आप वहीं बैठिये, मैं वहीं से देख लूंगी आपका दिल······।"

लेकिन मैं रुका नहीं। कुर्सी खिसकाकर उसकी बगल में बैठता हुआ बोला—"अब देखो तुम्हें क्या-क्या कमाल दिखाता हूँ अपने दिल के, लाओ अपना हाथ।"

नीरा हँसती हुई सिमट गई कुर्सी के एक कोने में और दाहिना हाथ हिलाती हुई बोली—"नहीं बाबा, मुझे डर लगता है आपसे, जाइये दूर जाकर बैठिये। मैं नहीं देती अपना हाथ आपको।"

लेकिन मैंने पकड़ ही लिया उसका हाथ, उसके विरोध करने के बावजूद भी और अपने बायें सीने पर रखता हुआ बोला—"कहो, दिल है या नहीं, कैसा रेल के इंजन की तरह 'धक ! धक ! धक ! धक !' कर रहा है ?"

नीरा मेरी आँखों में झाँकती हुई शरारत के साथ बोली—"यहाँ तो कुछ भी नहीं है।"

"ऐं !" मैंने बनावटी आश्चर्य के स्वर में कहा—"कैसी बात करती हो, नीचे हाथ खिसकाओ कहीं जगह तो नहीं छोड़ गया साला।"

वह अपना हाथ खींचती हुई खिलखिलाकर हँस पड़ी। बोली—"कहीं हड़ताल तो नहीं कर बैठा है आपका दिल। खैर, जाने दीजिये बहुत देर हो गई इन बेकार की बातों में। अब मुझे थोड़ी देर अपने भविष्य के विषय में सोच लेने दीजिये।"

"लेकिन ये चाय जो तुम्हारा इन्तजार कर रही है, पहले इसे तो गले के नीचे उतारो तब सोचना वरना बताए देता हूँ कुछ भी नहीं सोचने दूँगा ?"

नीरा जब चाय पी चुकी तो नौकर के हाथ 'ट्रे' नीचे भिजवा दी और झूठमूठ को जाने का बहाना करते हुए बोला—"अच्छा, अब जा रहा हूँ नीरा कल फिर मिलूँगा तुमसे यहीं, अगर कोई तकलीफ हो या किसी चीज की जरूरत पड़े तो मैं नौकर से बोल जाऊँगा, वह तुम्हारा ख़याल रखेगा।"

नीरा का चेहरा मुरझा गया मेरे जाने की बात सुनकर, धीरे से खड़ी हो गई वह कुर्सी छोड़कर। एक बार मेरी ओर देखा और उँगली पर आँचल का छोर लपेटती हुई बोली—"लेकिन मैं नहीं रह सकूँगी अकेली रात को। मुझे डर लगेगा।"

"तुम बच्चा तो हो नहीं नीरा जो डर लगेगा ?"

उसने इसका कोई उत्तर नहीं दिया।

कुछ देर चुप रही फिर बोली—"सिर्फ एक रात की बात है, कल मैं अपने घर वापस चली जाऊँगी दिल्ली ! मैं जानती हूँ दुनियाँ में कोई किसी का नहीं, सब मतलब के साथी हैं। आपको अपनी पत्नी की एक रात के सुख का इतना ख़याल है तो मेरे जीवन की अनगिनत रातों का कौन ख़याल करेगा ? कहाँ-कहाँ भटकती फिरूँगी मैं इस तरह, एक-एक रात काटना मुश्किल हो जायगा मेरे लिये। इसलिये घर जाना ही

उचित है अब मेरे लिये, अधिक-से-अधिक मां-बाप गालियाँ दे लेंगे, मार लेंगे मुहल्ले वाले उलटी-सीधी बातें कह लेंगे मेरे लिये और इससे अधिक कोई क्या कर सकेगा।"

मैं फिर से कुर्सी पर बैठ गया, बोला—"क्यों नीरा, मान लो मैं आज रात यहीं रुक जाऊँ तो फिर दिल्ली वापस जाने का इरादा बदल दोगी?"

"नहीं! अब नहीं रुकूँगी।"

"ठीक है, मैं भी यही चाहता हूँ। चलो कल की बजाय अभी चलो, मैं तुम्हें स्टेशन छोड़ आता हूँ। रात को जनता एक्सप्रेस से चली जाना, बहुत अच्छा रहेगा तुम्हारे लिये! चलो जल्दी करो, उठो यहाँ से" और मैं उसके सामने जा खड़ा हुआ।

मेरे चेहरे की ओर टकटकी लगाकर देखती हुई बोली—"नहीं जाती।"

"बड़ी विचित्र लड़की हो" मैंने कहा—"कभी कहती हो जाऊँगी और दूसरे ही पल मना-कर देती हो। खैर, मत जाओ यह तुम्हारी मर्जी, अब मैं भी अपने घर नहीं जाता।"

"क्यों नहीं जाते?"

"इसलिये कि तुम्हें डर लगेगा यहाँ!"

"बड़ी चिंता है मेरी आपको?"

"यही समझ लो!"

"लेकिन क्यों?"

"इसलिये कि तुम एक खूबसूरत जवान लड़की हो।"

"ऊँहुँ! हर समय वही उलटी-उलटी बात करते हो। यह तो कहते नहीं कि तबियत मचल रही है यहाँ रहने को लेकिन याद रखिये कुछ काम बनेगा नहीं आपका!"

मैंने देखा शरारत नाच रही थी नीरा की काली-काली आँखों में, बोली—"तो फिर कपड़े उतारने का कष्ट करिये न!"

"आज तुम्हीं उतार दो नीरा मेरे कपड़े।"

"मैं कोई नौकर हूँ आपकी !"

"लेकिन 'गैस्ट' तो हो !"

" 'गैस्ट' सेवा करने के लिये होते हैं ?"

"नहीं जी करवाने के लिये होते हैं।" मैंने कहा—"लाइये मैं आपकी कोई सेवा कर दूँ।"

"माफ़ करिए, मैं अपनी सेवा अपने आप कर लेती हूँ।"

"च्च ! च्च ! च्च ! यह कैसे हो सकता है। जब तुम लोग अपने आप अपनी सेवा कर लोगी तो हमें कौन पूछेगा।"

"आप लोग हैं भी पूछने लायक जो कोई पूछे वह ज़माना गया जब आप लोगों की पूछ होती थी, अब तो बिना पूछ के रह गये हैं आप लोग, इसलिये कपड़े उतारकर चुपचाप सो जाइये।"

"जैसी आपकी आज्ञा !"

पतलून कमीज उतारकर खुण्टी पर लटका दिये मैंने और चादरा लपेटकर लेट गया। नीरा ने दरवाजा बन्द कर दिया और वह भी लेट गई दूसरे पलंग पर। करीब पन्द्रह मिनट तक हम दोनों चुपचाप पड़े रहे, मुझे कुछ-कुछ झपकी-सी आने लगी तो सहसा नीरा पूछ बैठी—"क्यों सो गये क्या ?"

"नहीं जग रहा हूँ अभी तो !"

"एक बात पूछूँ, बताओगे ?"

"एक नहीं दो पूछो........."

"आप इतने फितरती क्यों हैं ?"

"ऐसा कौनसा काम किया है मैंने ?" नीरा की ओर करवट बदल कर मैंने पूछा।

वह बोली—"आपने मैनेजर को गलत 'इनफार्मेशन्स' क्यों दी ?"

"... और आपने तो शायद सही पता ही बताया होगा ! क्यों ?"

जब आप सरासर झूठ बोल रहे थे तो मैं भी कैसे सच बोल सकती थी ?''

"इसका मतलब है तुम भी फितरती हो ?"

जैसे के साथ तैसा बनना पड़ता है।" वह बोली।

मैंने कहा—"देवीजी आजकल सत्य बोलने का जमाना नहीं है। जिसने सत्य बोला समझ लो काम से गया। झूठा, मक्कार, चारसौ बीस और फितरती आदमी जन्म से नहीं होता यह दुनियाँ उसे झूठ बोलने के लिये मजबूर कर देती है।"

"आपको किसने मजबूर किया है ?" नीरा ने पूछा।

मैंने कहा—"तुम जैसी हसीन परियों ने।"

"हुँह ! फिर वही लोफरों की-सी बात करने लग गये।"

"तो फिर क्या करूँ, तुम पूछती ही ऐसे सवाल हो।"

"अच्छा ये बताइये आप इस मैनेजर को कैसे जानते हैं ? क्या पहले भी आप कभी किसी लड़की को यहाँ लाये थे ?"

"क्यों नहीं, लड़कियाँ पटाकर लाना तो मेरा धंधा ही है।" मैंने कहा—"जानती हो रोज शाम को स्टेशन के सामने इसलिये बैठता हूँ कि कोई पंछी आ जाय उड़कर तो फँसा लूँ उसे अपने जाल में।"

अभी तक कितनी लड़कियाँ फँसाई हैं जाल में आपने अपने ?

"बहुत सारी........।"

"एकाध का नाम भी तो सुनूँ !"

"नीरा, मीरा और ....!"

"यह मीरा कौन थी ?"

"तुम्हारी बहिन।"

"फिर वही उलटी सीधी बकने लगे।"

"अच्छा, अब सीधी तरह जवाब दूंगा, पूछो क्या पूछती हो ?"

"मैंने पूछा इस मैनेजर को कैसे जानते हो ?"

"ऐसे जानता हूँ कि ये मैनेजर के साथ-साथ इस होटल के मालिक भी हैं। राजामण्डी में इनकी एक 'फाइन आर्ट स्टूडियो' है। अभी कुछ महीने पहले जब मैं आगरा कालेज में पढ़ता था, एम० ए० फ़ाइनल में उस समय कालेज की 'हिन्दी एसोशियेशन' का मैं 'सेक्रेट्री' था। सैशन के आखिर में हमारी एसोशियेशन का एक फोटोग्रुप हुआ जो अभी भी मेरे कमरे में लगा हुआ है, वह 'फाइन आर्ट स्टूडियो' का ही खींचा हुआ है और ये ही गये थे खींचने शर्माजी कार में बैठकर, बहुत लखपती आदमी हैं न! तभी से गहरी जान-पहचान हो गई है मेरी इनसे! तुम मेरे घर चलकर देखना उस ग्रुप को, देखती ही रह जाओगी आँखें फाड़कर! प्रोफेसरों के बीच में बैठा हुआ ऐसा लगता हूँ······।"

"······जैसे बगुलों के बीच में कौआ बैठा हो!" नीरा ने हँसकर कहा।

मैं बोला—"तुम्हें कैसे पता चल गया नीरा, सचमुच मैं ऐसा ही लगता हूँ क्योंकि ब्लेजर के कोट में स्याह काला फोटो आया है मेरा।"

"देख लीजिये मैं जादू से जान लेती हूँ सब बातें और देखिये एक बात और बताती हूँ?"

"बताओ!" उत्सुक होकर मैंने उसकी ओर देखा।

बोली—"अभी आपकी शादी नहीं हुई है, सच-सच बताइये आपको मेरी कसम है, मैं झूठ तो नहीं कह रही।"

"भई वाह! तुमने कमाल कर दिया नीरा! ठीक-ठीक बताना तुम्हें कैसे पता चल गया।"

"ऐसे ही जादू से······।" वह फिर हँस दी।

मैंने कहा—"तब तो तुम-जैसी जादूगरनी की जरूरत है मुझे!"

"लेकिन मुझे आप-जैसों की जरूरत नहीं।"

"नहीं जरूरत है तो तुम मेरी ओर से भाड़ में जाओ, मुझे तुमसे कोई मतलब नहीं!" कहकर मैंने करवट बदल ली।

नीरा की ओर मेरी पीठ थी इसलिये उसने समझा कि मैं नाराज हो गया हूँ। पाँच मिनट तक कमरे में खामोशी रही इसके बाद नीरा ने धीरे से पुकारा—"क्यों जी, नाराज हो गये क्या ?"

"........." मैं चुप रहा।

वह फिर बोली—"क्यों नींद आ रही है क्या ?"

"............" मैं फिर भी शांत रहा ?

अबकी बार वह चारपाई से उठी और घूमकर मेरे सामने पट्टी पर बैठ गई ! मैंने भीगी बिल्ली की तरह पलकें बन्द कर लीं। उसकी ओर तनिक भी नहीं देखा। इस पर उसने दाहिना हाथ बढ़ाकर मेरे गले के नीचे गुदगुदी करते हुए कहा—क्यों झूठमूठ सोने का बहाना कर रहे हो ?"

"तो क्या रातभर जगने का ठेका ले लिया है।" कहता हुआ मैं पलंग से उठा और हाथ बढ़ाकर स्विच आफ़ कर दिया; एकदम गहरा अँधेरा छा गया कमरे में। सड़क की बत्तियों का प्रकाश खिड़कियों के रास्ते कमरे में आ रहा था जो बहुत ही भला लग रहा था। उस समय और पलंग की पट्टी पर बैठी हुई नीरा की चमकीली आँखें कुछ इस ढंग से देख रही थीं मेरी ओर जैसे कोई बहुत बड़ा रहस्य छिपा हो उनमें और मैं........।

[३]

सबेरे जब मेरी आँख खुली उस समय सात बजे होंगे। चादरे में से मुँह निकालकर नीरा के पलंग की ओर देखा तो वह खाली पड़ा था। मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ, दरवाजे की ओर देखा जिसकी एक किवाड़ खुली हुई थी—सोचा शायद गुसलखाने की ओर गई होगी लेकिन तभी उसकी आवाज सुनाई दी जो बरामदे में से आ रही थी—शायद किसी से बात

कर रही थी वह। चादर एक ओर हटाकर मैं चारपाई से उठ खड़ा हुआ। दरवाजे में से बाहर झाँककर देखा—नीरा सामने 'रेलिंग' पकड़े हुए खड़ी थी और मेरे बगल वाले कमरे के ठीक सामने आरामकुर्सी पर पड़ा हुआ एक नवयुवक हिन्दी का कोई अखबार पढ़ रहा था। कह नहीं सकता वह पढ़ रहा था अथवा पढ़ने का बहाना मात्र कर रहा था। हाँ, उसकी आँखें अखबार की आड़ से नीरा की ओर झाँक रही थीं जो मुझे देखते ही कुछ झेंप जरूर गईं। तो नीरा खड़ी-खड़ी इसी से बात कर रही थी? लेकिन क्यों? और यह सोचकर मुझे एक झुँझलाहट-सी हुई नीरा के ऊपर लेकिन कुछ कह नहीं सका उस समय क्योंकि वह सामने की ओर देख रही थी। उस नवयुवक की वेषभूषा से मुझे कुछ ऐसा लगा जैसे वह कोई मनचला गुंडा हो—गहरे हरे रंग की पट्टियों वाली बुशर्ट और पाजामा पहने हुए था वह और गले में एक रंग त्रिरंगा रेशमी रूमाल बाँध रखा था उसने टाई की तरह, रंग कुछ-कुछ साँवला था और मूंछें बड़ी-बड़ी थीं नोकीली। थोड़ा-बहुत हिन्दी पढ़ा-लिखा जरूर होगा वह तभी तो हिन्दी का अखबार लिये बैठा था।

उसे देखते ही कुछ-कुछ घृणा और ईर्ष्या का भाव उत्पन्न हो गया मेरे मन में और नीरा के प्रति हलका-सा गुस्सा। तभी नीरा ने युवक की ओर बिना देखे ही धीरे से पूछा—"आप कहाँ से आ रहे हैं इस समय?"

युवक ने अखबार के पीछे अपना मुँह कर लिया जैसे पढ़ने में इतना मशगूल हो कि नीरा की आवाज ही न पहुंच पाई हो उसके कानों तक और नीरा को जब उसके प्रश्न का कोई उत्तर नहीं मिला तो मुड़कर देखा उसने उसकी ओर। तभी मुझे दरवाजे में खड़ा हुआ देखकर सकपका गई वह, मेरी ओर आती हुई बोली—"अरे आप जग गये?"

मैंने कोई उत्तर नहीं दिया और कमरे में आकर खिड़की के सहारे खड़ा हो गया। सड़क पर आते-जाते व्यक्तियों को देखने लगा लेकिन वह तो सिर्फ बहाना मात्र था, मस्तिष्क में से कुछ और ही विचार उथल-

पुथल मचा रहे थे। सहसा नीरा मेरे पास आकर खड़ी हो गई और प्यार प्रदर्शित करती हुई बोली—"आप 'लैट्रिन' हो आइये मैं अभी नौकर को चाय का आर्डर दिये देती हूँ।"

"मुझे नहीं पीनी चाय।" सड़क की ओर देखते हुए ही मैंने कहा।

मेरे स्वर में कुछ क्रोध का भाव मिला हुआ था, नीरा फौरन ताड़ गई, बोली—"क्या हो गया है आपको सवेरे-ही-सवेरे ?"

"तुम्हारा सर हो गया है। मुझसे बात मत करो।"

"लेकिन क्यों ? आखिर मैं भी तो सुनूँ।"

"उस गुंडे टाइप आदमी से क्यों बातें कर रही थीं ?"

"किसी से बात करना गुनाह तो नहीं है। आप भी तो बातें करते हैं औरों से फिर मैंने ही कौनसा पाप कर डाला इसमें ?"

"ठीक है तो उसके कमरे में चली जाओ, घुट-घुटकर बातें करो उससे। जो मन में आये करो मुझसे क्यों पूछती हो।"

"ओफ़ ! आप न जाने क्या-क्या सोच रहे हैं, समझ में ही नहीं आता। उसने ही पहले से एकाध बात पूछी तो मैंने उनका जवाब दे दिया। अब बताइये इसमें मेरा क्या कसूर है ?"

"तुमने कुछ नहीं पूछा उससे ?" मैंने नीरा की ओर देखा।

"हाँ, मैंने भी सभ्यता के नाते एकाध सवाल पूछ लिया था उससे। लेकिन आप इतने नाराज क्यों हो रहे हैं ? अगर मेरा बोलना बुरा लगा है तो माफी चाहती हूँ आपसे और विश्वास दिलाती हूँ कि जब तक इस होटल में रहूँगी, उसकी ओर आँख उठाकर भी नहीं देखूँगी।"

न जाने क्यों मेरा गुस्सा आँधी में सूखे पत्ते की तरह उड़ गया मेरे दिमाग से। सोचने लगा—नीरा मेरी कुछ भी तो नहीं लगती फिर भी उसका दूसरे पुरुषों से बातें करना इतना बुरा क्यों लगता है मुझे ? क्या सचमुच प्रेमी परस्पर एक-दूसरे पर सिर्फ अपना ही अधिकार समझते हैं लेकिन ऐसा होता क्यों है ? यह एक बहुत बड़ा रहस्य है, एक बहुत

बड़ा प्रश्न है जिसे सृष्टि के आदि काल से लेकर आज तक कोई नहीं समझ सका और समझ भी कैसे सकता है जब कि सृष्टि स्वयं ही एक बहुत बड़ा रहस्य बनकर आँखों के सामने नित्य-नये रहस्य प्रकट करती है फिर यह तो उसके एक कण के बराबर भी नहीं।

मैं बाथरूम की ओर चला गया और हाथ-मुँह धोकर जब कमरे में वापस आया तो मेज पर 'ट्रे' रखी थी। चाय के साथ कुछ नमकीन चीजें भी थीं 'ट्रे' में शायद नौकर दे गया होगा नीरा का आर्डर पाकर।

नाश्ता करने के पश्चात् हमने 'सिकन्दरा' जाने का प्रोग्राम बनाया। सिकन्दरा आगरे से तीन मील दूर है आगरा-दिल्ली रोड पर। यहाँ बादशाह अकबर का मकबरा है लाल पत्थर का और मुगलकालीन इमारतों में अपना विशिष्ट स्थान रखता है। बाहर से जो भी पर्यटक आते है, ताजमहल और लाल किला देखने, वे सिकन्दरा अवश्य जाते हैं और है भी यह देखने लायक जगह। वैसे यह सुनसान जंगल में बनी है समाधि लेकिन एक छोटी-सी बस्ती भी बसी हुई है उसके साथ। आगरा से यहाँ के लिए ताँगे, रिक्शे जाते रहते हैं हर समय लेकिन पैसे बहुत लेते हैं इसलिये 'सिटी-सर्विस' ने अब इस समस्या को हल कर दिया है। हर आध-आध घंटे बाद सिकन्दरा के लिए बसें दौड़ती रहती हैं और दिल्ली-दरवाजे पर उनका एक 'स्टापेज' भी है।

होटल से निकलकर हम दोनों दिल्ली दरवाजे के सामने खड़े हो गये और सिकन्दरा जाने वाली बस की प्रतीक्षा करने लगे। बस आई और हमें लेकर फिर चल दी आगे की ओर। कुछ आगे चलकर बस में से हाथ का संकेत करते हुए मैंने नीरा से कहा—"यह आगरा का प्रसिद्ध पागलखाना है नीरा। वही पागलखाना जिसके लिए कल रात एक रिक्शे वाले ने तुम्हारे लिये कहा था ··· ···।"

नीरा के होंठों पर मुस्कराहट दौड़ गई और चुपचाप पागलखाने के विशाल अहाते की ओर देखने लगी फटी-फटी आँखों से। कुछ देर बाद मेरी ओर देखकर बोली—"बहुत बड़ा है यह तो पागलखाना ?"

"हाँ" मैंने कहा—"कम-से-कम उत्तर प्रदेश का तो सबसे बड़ा 'मेंटल-हास्पीटल' यही है ।"

"कितने पागल रहते होंगे इसमें ?"

"सैकड़ों भरे पड़े हैं, कोई गिनती नहीं है उनकी ।"

"क्या सबको बाँध कर रखते हैं जंजीरों में ?"

"नहीं । ऐसी बात तो नहीं, कुछ-एक पागलों को छोड़कर बाकी सब खुले रहते हैं ।"

"वे मारते नहीं हैं किसी को ?"

"नहीं, ऐसे पागलों को तो बाँधकर रखा जाता है ।"

"कैसे इलाज करते होंगे इनका डाक्टर लोग ?"

"ऐसे ही कुछ-एक को बिजली का करेंट लगाकर मस्तिष्क की 'सेंसशन नर्व' को सुधारने की कोशिश करते हैं । कुछ को दवाइयाँ दी जाती हैं तो कुछ को 'साइकलाजी' के आधार पर ठीक करते हैं । वैसे यहाँ सभी तरह के पागल आते हैं—हाई क्लास के आफीसर भी होते हैं उनमें जैसे मजिस्ट्रेट, वकील, बड़े-बड़े राजनीतिज्ञ और ऐसे ही लोग होते हैं । एक पागल को तो मैंने देखा था सेंट जान्स कालेज के चौराहे पर जिसे ताँगे में बिठाकर उसके सम्बन्धी पागलखाने की ओर आ रहे थे । मजे की बात तो यह है कि वह पागल धड़ल्ले के साथ अंग्रेजी में बकता जा रहा था । मैंने समझा यह कोई पढ़ा-लिखा आदमी है और अंग्रेजी में अपने साथियों को डाँट रहा है लेकिन पूछने पर पता चला कि वह पागल हो गया था ।

"मैंने देखा नीरा भी पागलों की तरह एकटक मेरी ओर देखे जा रही थी", बोली—"ये पागल खुले रहते हैं तो आपस में लड़ते नहीं और डाक्टरों को नहीं मारते ?"

मैंने कहा—डाक्टरों से तो बहुत डरते हैं पागल क्योंकि उनके जरा से इशारे पर बिजली का करेंट लगा-लगाकर पागलों की अक्ल दुरुस्त कर दी जाती है फिर चीखते हैं बुरी तरह ।"

"क्यों जी, स्त्री और पुरुष पागल अलग-अलग रहते होंगे ?" नीरा ने पूछा।

मैंने कहा—"हाँ, अलग-अलग वार्ड हैं स्त्री और पुरुषों के वर्ना साथ साथ रहेंगे तो गड़बड़ घोटाला नहीं हो जायगा।"

नीरा मुस्करा गई।

मैंने कहा—"अभी पिछले हफ्ते एक लेडी डाक्टर मेल वार्ड के सामने होकर गुजर रही थी। कुछ पागल बाहर बैठे हुए थे उनमें से एक सहसा उठकर लेडी डाक्टर की ओर भागा और उसे अपनी दोनों भुजाओं में जकड़ लिया। डाक्टरनी की चीख निकल गई। आस-पास से कुछ चपरासी, अटेंडेंट्स इत्यादि भागे, तब कहीं जाकर छुड़ाया डाक्टरनी को। पागल ने उसकी साड़ी फाड़ डाली थी कई जगह से।"

"हाय ! तब तो बड़े खराब होते हैं ये पागल लेकिन उधर से डाक्टरनी गई क्यों थी मरी ?"

"अरे भई रोजाना ही उनका आना-जाना रहता है और फिर रोज-रोज थोड़े होते हैं ऐसे केस। कभी-कभी एकाध साल में एकाध केस हो जाता है।

बस जैसे ही पागलखाने के गेट के सामने रुकी, नीरा बोली—"चलिये अंदर घुसकर देखेंगे पागलखाना।"

मैंने कहा—"पहले सुपरिन्टेन्डेन्ट से 'परमीशन' लेनी पड़ती है और जानती हो हर किसी को 'परमीशन' भी नहीं मिलती।"

"तो हमें नहीं देखने देंगे ?"

"बिलकुल नहीं ....।"

बस में से कुछ आदमी उतरे और कुछ चढ़े इसके बाद फिर चल दी।

सिकन्दरा पहुँचकर पूरी बस खाली हो गई। कुछ लोग बस्ती की ओर चले गये और बाकी मकबरे की ओर !

मकबरे के सामने एक लम्बा-चौड़ा घास का मैदान है जिसमें जगह-जगह फलों की क्यारियाँ मंद-मंद वायु के साथ झूमा करती हैं। कहीं-कहीं पेड़ भी खड़े हैं उस मैदान में और इधर-उधर कुछ कब्रें भी दिखाई दे जाती हैं! मकबरे तक पहुँचने के लिए घास के मैदान के बीचों-बीच से होकर एक सड़क भी बनी हुई है और जहाँ सड़क समाप्त होती है वहीं पाँच मंजिल वाली शहंशाह अकबर की वह अमर समाधि बनी हुई है आकाश की ओर सर उठाये, जिसे प्रति वर्ष न जाने कितने दर्शक लोग देखने आते हैं।

सड़क पर चलते हुए बाईं ओर दो भग्नप्राय कब्रों की ओर संकेत करते हुए मैंने नीरा से कहा—"नीरा, जानती हो ये कब्रें किसकी हैं?"

"नहीं।"

"ये औरंगजेब के बड़े भाई दारा शिकोह के दोनों बेटों की कब्रें हैं। कितने दुर्भाग्यशाली बाप के बेटे थे वे दोनों! कहते हैं, बिल्लोचपुरा के निकट औरंगजेब और उसके बड़े भाई दारा में उत्तराधिकार के लिए घमासान युद्ध हुआ था। अंत में बिचारे दारा की जो बहुत ही दयालु व्यक्ति था, पराजय हुई और बंदी बनाकर औरंगजेब के सामने लाया गया, फिर जानती हो औरंगजेब ने अपने बड़े भाई के साथ कैसा व्यवहार किया था? कैदखाने में डलवा दिया और कुछ दिन बाद जल्लादों से उसकी दोनों आँखें निकलवा लीं। उस दिन दारा के लिए पृथ्वी का कण-कण अंधकारमय हो गया। उसकी दुनियाँ वीरान हो गई और चमकती हुई आँखों की जगह दो स्याह काले गड्ढे बन गये! कैसा भयानक रूप हो गया होगा उसका? सहज ही उसकी कल्पना की जा सकती है! बाद में औरंगजेब ने उसका काला मुँह करवाकर हाथी पर बिठाया और आगरा की प्रत्येक सड़क और गलियों में उसे घुमाते हुए इस बात का ऐलान किया गया कि शहंशाह औरंगजेब के विरुद्ध जो भी बगावत करेगा उसे यही सजा दी जायगी! उस समय जनता के

दिलों में आतंक की एक लहर उत्पन्न कर दी थी औरंगजेब ने। इसके बाद कुछ दिन तक दारा को और जीवित रखा गया बाद में उसका सर धड़ से अलग करवा दिया। जिस समय दारा को कैद किया था उसी समय उसके दोनों प्यारे बेटों को दारा की आँखों के सामने ही औरंग-जेब की आज्ञा से तलवार के घाट उतार दिया था। उन्हीं दोनों मासूम बच्चों की ये कब्रें हैं, जो आज भी औरंगजेब की हैवानियत पर चार आँसू बहा रही हैं। उसकी असहिष्णुतापूर्ण नीति का ज्वलंत उदाहरण प्रस्तुत कर रही हैं।"

नीरा टकटकी बाँधे देख रही थी उन कब्रों की ओर सहानुभूति की दृष्टि से! एक अजीब-सी वेदना का अनुभव कर रही थी वह उस समय। कुछ देर पश्चात् उसने मेरी ओर देखा सूनी-सूनी निगाहों से और मैंने ऐसा अनुभव किया जैसे नीरा की उन निगाहों में सैकड़ों प्रश्न नाच रहे हों! धीरे से वह बुदबुदा उठी—"कितने जल्लाद होते थे मुसलमान बादशाह जिनके दिलों में ज़रा भी दया नहीं थी। खास अपने भाई-भतीजों तक का खून करने में नहीं चूकते थे। हद हो गई मानवता की··· !"

कुछ देर चुप रहने के पश्चात् बोली—"क्योंजी, यह बिल्लोचपुरा किधर है?"

मैंने कहा—"मेंटल हास्पीटल से शहर की ओर जो तालाब है उसके किनारे कच्चे मकानों की जो उजड़ी हुई-सी एक बस्ती दिखती है, वही बिल्लोचपुरा है। सैकड़ों वर्ष पुरानी है यह बस्ती और न जाने कितनी बरसातें उतर चुकी हैं उन कच्ची दीवालों पर होकर।"

आगे चलकर हम दोनों मकबरे में घुस गए। हमारे साथ-साथ कुछ और भी लोग थे। नीचे की मंजिल में अकबर की समाधि देखी जहाँ नीरवता का अखंड साम्राज्य था। एक मुसलमान बैठा था वहाँ लाल-टेन लिए हुए जो समाधि पर चढ़े हुए पैसों को शायद एकत्रित करता था।

दूसरी, तीसरी और चौथी मंजिल पर होते हुए हम पाँचवीं मंजिल पर पहुँचे। यह मंजिल संगमरमर की बनी हुई है। कहते है, अकबर ने इसे भी लाल पत्थर का ही बनवाया था लेकिन बाद में औरंगजेब ने उसे तुड़वाकर सगमरमर का रूप दे दिया। इसके चारों ओर की दीवालें संगमरमर की जालियों से बनी हैं जो पच्चीकारी का सुन्दर नमूना पेश करती है। वहीं एक अग्रेज युवा दम्पत्ति बड़े कुतूहल के साथ उन जालियों को हाथ से छू-छूकर देख रहे थे और आपस में न जाने क्या-क्या बातें कह रहे थे अग्रेजी में धीरे धीरे।

एक जगह जाली के सहारे वह अंग्रेज महिला खड़ी हो गई जिसके बाएँ कंधे पर एक कैमरा लटका हुआ था। उसके पति ने कुछ पीछे हट-कर अपनी आँखों के ठीक सामने कैमरा सटाकर एक 'शाट' ले लिया। अंग्रेज महिला मुस्कराकर वहाँ से हट गई।

नीरा ने एक क्षण उसकी ओर निहारा और मेरी आँखों में झाँकती हुई मुस्कराकर बोली—"एक 'शाट' मेरा भी ले लीजिए आप।"

"तुम्हारा 'शाट' रात को लिया जायगा।" मैंने भी हँसकर जवाब दे दिया।

नीरा शरमा उठी, बोली—"हटो जी, हमें ऐसी बात अच्छी नहीं लगती।"

"तो फिर बिना कैमरा के 'शाट' कैसे लिया जा सकता है, यह नहीं सोचा तुमने ?"

"मैंने तो वैसे ही कह दिया था हँसी-हँसी में !" नीरा ने उत्तर दिया।

मैंने कहा—"मजाक में तो मैंने भी कहा था लेकिन तुम सच कैसे मान गईं उमे ! क्या रात में भी 'शाट' लिया जा सकता है ?"

क्यों नहीं, 'थाउजेंड' वाट का बल्ब लगाकर खींचते नहीं हैं स्टूडियो वाले अँधेरे कमरों में ?"

"लेकिन देवीजी वहाँ अँधेरा कहाँ रहता है फिर, उजाला नहीं हो जाता है बिजली का।"

"बिजली तो अपने कमरे में भी है, लेकिन कैमरा कहाँ है आपके पास जो मेरा 'शाट' लेवें।"

"है ना देसी कैमरा अपने पास......।"

"कैसा है, मुझे दिखाइये न ?" नीरा मचल उठी।

मैंने सीढ़ियों की ओर बढ़ते हुए कहा—"चलो, तभी देख लेना जब तुम्हारा 'शाट' लूँगा।"

"क्या आपके घर रखा है ?" मेरे पीछे-पीछे चलती हुई नीरा बोली।

मैं झुँझला उठा—"नहीं री ! तुम तो हाथ धोकर पीछे पड़ जाती हो। औरत हो या पाजामा हो तुम।"

"हुँ-ह ! आप तो बेबात डाँटने लगते हैं। लीजिए, अब नहीं बोलूँगी आपसे।"

"क्यों ?"

"ज्यादा बात करती हूँ न।"

ज़ीने से नीचे उतरते हुए मैंने कहा—"लड़कियों को और खास तौर से जवान लड़कियों को तो अधिक बात करनी चाहिए। जानती हो जितनी चुलबुली, बार-बार रूठ जाने वाली और बात-बात पर नखरे करने वाली लड़की होगी, लड़के उसे ही पसन्द करते हैं और जो मिट्टी के धोंधा टाइप लड़की होती है, जिसका मुँह तोबरे की तरह फूला रहता है हर समय और जो भभके-से थूथड़े की होती है—लड़के उसे कोई लिफ्ट नहीं देते। ऐसी लड़कियाँ सिर्फ बच्चे पैदा करने की मशीन होती, हैं इससे अलग उनका कोई व्यक्तित्व नहीं होता, आगे चलकर उनके पति या तो उन्हें तलाक दे देते हैं अथवा उनकी तरफ से निराश होकर इधर-उधर ताका-झाँका करते हैं।"

नीचे उतरकर हम दोनों घास पर चलने लगे। मैदान के एक ओर काफी घनी झाड़ियाँ थीं, जहाँ कुछ फूल भी खिले हुए थे। दो-चार पत्थर की बैंच भी पड़ीं थीं वहाँ। उसी ओर संकेत करती हुई नीरा बोली—"अभी बस आने में देर लगेगी तब तक चलिये वहाँ बैठा जाय।"

मैं जाकर एक बैंच पर बैठ गया और नीरा झाड़ियों में फूलों से खेलने लगी। थोड़ी देर में वह आकर मेरी बगल में बैठ गई। हाथ में उसके एक सूरजमुखी का बड़ा-सा फूल था जिसे मेरी ओर बढ़ाती हुई बोली—"लीजिए, इसे मेरी चोटी में लगा दीजिये।"

वह होठों-ही-होंठों में मुस्करा रही थी!

मैंने कहा—"तुम्हारी सूरत तो इतनी अच्छी नहीं है कि जूड़े में सूरजमुखी का फूल लगाया जाय।"

चिढ़ गई नीरा, फूल को वापस अपनी ओर खींचती हुई बोली—"मत लगाइये।"

"और उसने फूल को तोड़-मरोड़कर घास पर फेंक दिया। शायद बुरी लगी थी उसे मेरी बात इसलिए मुँह फुलाकर बैठ गई।

मैंने आगे झुककर मसला हुआ फूल उठा लिया और नीरा की चोटी की ओर बढ़ाते हुए बोला—"लाओ नीरा लगा दूँ इसे!"

"नहीं लगवाती!"

"तो कब लगवाओगी?"

"कभी नहीं लगवाऊँगी!" एक झटके से मेरी ओर देखा और फिर दूसरी ओर देखने लगी।

"इसका मतलब है, नाराज हो गई हो तुम?"

"..........."

मैंने धीरे से मसला हुआ फूल फसा दिया उसकी चोटी में और दूसरे ही क्षण नीरा ने उसे निकालकर एक-एक पंखड़ी बिखरा दी जमीन पर।

"बाप-रे-बाप बड़ा 'हाई टेंपरेचर' हो रहा है तुम्हारा तो, दिखता है दूसरा ही फूल लाना पड़ेगा तुम्हारे लिए।" कहता हुआ मैं बैंच से उठ गया और एक बहुत ही बड़ा उसी तरह का फूल लाकर यथा-स्थान बैठ गया।

फूल को नीरा के सामने फिरकनी की तरह घुमाता हुआ बोला—"अगर तुमने इसे तोड़ा तो बहुत मारूँगा तुम्हें ! समझीं।"

नीरा ने हलकी-सी मुस्कराहट के साथ फूल की ओर झपट्टा मारा छीनने के लिए, लेकिन मेरी सावधानी से बच गया वह और नीरा मुस्करा उठी जोर से।

"अरे वाह ! तुमने तो कमाल ही कर दिया छीनने में, यह कहाँ से सीखा है झपट्टा मारना।"

"मुझे नहीं पता !"

"तो क्या मुझे पता है।" उसके कंधे पर हाथ रख दिया मैंने।

नीरा ने झटके से हटा दिया, बोली—"बड़े खराब आदमी हैं आप ?"

"यह तो तुम्हें ही पता होगा लेकिन तुम बहुत अच्छी लगा रही हो इस समय—गुलाब की पंखुड़ियों-जैसे गाल हैं तुम्हारे, पलाश के फूलों-जैसे लाल लाल होंठ हैं, मदिरा से छलकते हुए काले-काले नेत्र, सूआ-जैसी नाक, सावन की काली-काली घटाओं-जैसे बाल और चमेली के फूल-जैसी मुस्कराहट; फिर भला किसका दिल काबू में रह सकता है।"

"ये कविता करना ही आता है आपसे या और भी कुछ आता है।" माथे पर बिखरी हुई लटों को सम्हालती हुई नीरा बोली।

मैंने कहा—"देखो, यह फूल लगा रहा हूँ बड़ी तबियत से तुम्हारी चोटी में इसलिए फेंकना मत इसे वरना यहीं छोड़ जाऊँगा तुम्हें।"

"छोड़ जाइये न, धौंस किसे देते हैं आप ?"

"किसी को अपना ही समझकर दी जाती है नीरा, इतनी नाराज क्यों होती हो ?"

"आप काम ही ऐसा करते हैं !"

"अब ऐसी बदतमीज़ी नहीं करूँगा नीरा ।"

"हाँ, बड़े सीधे है न आप जो फिर नहीं करोगे !"

"तुम्हारी कसम अब नहीं करूँगा ।"

"मेरी झूठी कसम क्यों खाते हो ?"

"ये तो मेरा दिल ही जानता है कि तुम्हारी, झूठी कसम खा रहा हूँ या सच्ची ! तुम इस बात को क्या जानो नीरा ।"

फूल की ओर बढ़ती हुई नीरा बोली—"अच्छा लाइये मैं लगा लूँगी अपने आप ।"

"नहीं नीरा, मै लगाऊँगा ।"

धीरे से फूल नीरा की चोटी में लगा दिया मैंने लेकिन उसने कोई विरोध नहीं किया । दोनों हाथों से उसे सम्हालती हुई खुश हो गई वह । उसकी आँखें चमक उठीं अपनी विजय और मेरी पराजय पर लेकिन मैं पराजित होकर भी मुस्करा रहा था न जाने क्यों ?"

काफी समय प्रतीक्षा में बीत गया लेकिन कोई बस नहीं आई तो मैंने नीरा का हाथ पकड़कर उठते हुए कहा—"नीरा, यहाँ से लगभग दो मील के फासले पर एक बहुत ही सुन्दर और एकांतप्रिय जगह है जमुना नदी के किनारे, वहाँ चलोगी ?"

"क्या नाम है उसका ?"

"कैलाश कहते हैं उसे ।" मैंने बताया—"नदी किनारे एक छोटी-सी पहाड़ी है जिस पर बहुत सारे मंदिर बने हुए हैं—शिवजी, हनुमान, काली, गणेश, राम-कृष्ण और न जाने किस-किस के मंदिर हैं वहाँ, लेकिन सबसे अच्छा मंदिर शिवजी का है और उपासक भी वहाँ शिव के ही अधिक रहते हैं शायद इसीलिये उस रमणीक स्थान को कैलाश कहते

हैं। मंदिरों के आसपास कुछ आश्रम, गुफाएँ, इत्यादि बनी हुई हैं जिनमें साधु-महात्मा पड़े रहते है दिन-रात। इनके अतिरिक्त कुछ गृहस्थियों के मकान भी हैं जिनमें अधिकतर साहित्यकार, चित्रकार-जैसे लोग रहते हैं जिन्हें एकांत अधिक पसन्द होता है······।"

बीच ही में नीरा मेरी बात काटती हुई बोली—"तो अब समझी आप किस लिये वहाँ जाना चाहते हैं ?"

"क्या समझीं ?" मैंने उसकी ओर देखा।

बोली—"यही कि आप भी साहित्यकार हैं न इसलिये लिखने के लिये वहाँ से कुछ प्रेरणा मिल जाय, इस तलाश में आप जा रहे हैं वहाँ। लेकिन मुझे क्यों घसीटते हैं आप वहाँ के लिये, प्रेरणा आपको मिलेगी और परेशानी मुझे होगी।"

"अरे देवीजी, प्रेरणा तो हमेशा मेरे साथ रहती है। मैं किसी प्रेरणा की तलाश में नहीं जाता, उदाहरण के लिये अपने-आपको ही देख लो। क्या मैं तुम्हारी तलाश में गया था ? कभी नहीं, उलटी तुम्हीं मेरे पास आई थीं और अब मुझे तुमसे एक अच्छे से उपन्यास का 'प्लाट' मिल गया है।"

"क्या मतलब ?" नीरा ने भौं सिकोड़कर देखा मेरी ओर।

मैंने कहा—"यही कि अब तुम्हारे ऊपर एक अच्छा-सा रोमांटिक उपन्यास लिखूँगा, जिसे लोग पढ़ेंगे और तुम सब लोगों की जबान पर छा जाओगी। वे सब तुम्हारी प्रशंसा करेंगे और तुम्हें देखने के लिये तड़पेंगे। रोज मेरे घर के सामने चक्कर लगाया करेंगे भँवरा की तरह और तुम कमलिनी के फूल की तरह सिमटकर अंदर भाग जाया करोगी। फिर वे सब जला करेंगे मुझे देख-देखकर। सोचा करेंगे—इस सनकी लेखक को पत्नी कहाँ से मिल गई इतनी सुन्दर—चाँद का-सा टुकड़ा और दिल मसोसकर रह जाया करेंगे सब-के-सब।"

नीरा बोली—"क्या सचमुच आप मेरे ऊपर उपन्यास लिखेंगे ?"

"और क्या झूठ कह रहा हूँ।" मैंने कहा—"अगर विश्वास न हो तो देख लेना, तुम तो अब हमेशा मेरे साथ ही रहोगी न पत्नी की तरह।"

"हुंह ! कैसी मीठी मीठी बातें बनाकर मुझे बहका रहे हैं जैसे मैं कुछ जानती ही नहीं।"

"तुम क्या जानती हो ?"

"कुछ नहीं जानती आप जाइये यहाँ से, झूठमूठ की बातें बना-बनाकर मेरा दिमाग और खराब किये दे रहे है आप ?"

"तुम्हारी कसम नीरा मैं जो कुछ भी कहता हूँ उसे करके दिखा देता हूँ। चलो, कैलाश में शिव-पार्वती के सामने हम दोनों जीवन भर साथ-साथ रहने और साथ साथ मरने की प्रतिज्ञा करेंगे; फिर तो शायद तुम्हें विश्वास हो जायगा मेरी बात का, अब लाओ इसी बात का एक 'किस' ले लेने दो।"

नीरा तुनक उठी—"फिर वही अपने मतलब की बात की आपने।"

"भई इसमें मतलब की क्या बात है, मजा तुम्हें भी आयगा और थोड़ा-सा मुझे भी आ जायगा। भला, इसमें बुरी बात क्या है ?"

नीरा की शायद तबियत आ गई थी, धीरे से बोली—"लेकिन आसपास के लोग देखेंगे तो क्या कहेंगे।"

"अरे कोई नहीं देखेगा, झाड़ियों की ओट में तो खड़े हैं, जल्दी करो।"

और मैंने जैसे ही दोनों हाथ नीरा को पकड़ने के लिये बढ़ाये, उसने शरमाकर दोनों हाथों से अपना चेहरा छुपा लिया और उँगलियों के बीच से झाँकने लगी। लज्जा उसके होठों पर थिरकने लगी हँसी के रूप में।

जैसे ही मैंने उसके कंधे पकड़कर दाहिने हाथ से उसका बायाँ हाथ चेहरे से अलग किया और 'किस' लेने के लिये आगे मुँह झुकाया वैसे ही पास की झाड़ी में खड़खड़ाहट हुई। मैं चौंककर अलग हट गया।

नीरा भी सतर्क होकर झाड़ी की ओर देखने लगी। दूसरे ही क्षण एक भूरा कुत्ता जमीन सूंघता हुआ हमारे सामने आ गया। उस समय कितनी गुस्सा आई मुझे उस बेवकूफ कुत्ते पर कि बस पूछो मत और नीरा तो हँसते-हँसते पागल ही हुई जा रही थी। पास ही पड़ा हुआ ईंट का एक टुकड़ा उठाकर मैंने कुत्ते में जो खींचकर मारा तो 'काँय ! काँय ! काँय !' करता हुआ एक ओर भागा और नीरा मुँह पर आँचल लगा कर हँसते-हँसते जमीन पर बैठ गई।

उसकी हँसी का दौर जब समाप्त हो गया तो नीरा खड़ी हो गई। मेरे चेहरे की ओर देखती हुई बोली—"क्योंजी, उस कुत्ते पर ही सारी गुस्सा उतार दी आपने तो ?"

मैंने कहा—"कम्बख्त न जाने कहाँ-कहाँ से आ मरते हैं। सब मजा किरकिरा कर दिया उल्लू के पट्ठे ने ।"

"आप तो बिलकुल दीवाने हुए जा रहे हैं। इसमें उस बिचारे का क्या दोष था जो आपने खामखाँ उसकी मरम्मत कर डाली। कहीं जाकर अपनी कुतिया से कहेगा तो मन-ही-मन कितनी गालियाँ देगी वह आपको। अपनी खोपड़ी को तो दोष देते नहीं आप जिसमें टाइम-बेटाइम न जाने क्या-क्या खुराफातें सूझने लग जाती हैं। इतना भी सब्र नहीं आपको। रात ही काफी है ऐसे कामों के लिये फिर······।"

"इधर आओ।" मैंने कहा।

बोली—"क्या करोगे ?"

"वही जो पहले करने जा रहे थे।"

"नहीं ! अब नहीं !" वह हाथ हिलाती हुई बोली—"फिर कभी ले लेना।"

"नहीं, तबियत तो अभी है, फिर कब ले लेना।"

"शादी हो जाने के बाद···।"

"शादी तो होती ही रहेगी···।"

"तो यह भी होता ही रहेगा !"

"नहीं मानोगी ।"

"नहीं मानती, कर लीजिये आपको जो कुछ करना है ।"

"जबरदस्ती ·····।"

"पुलिस के हवाले नहीं कर दूँगी आपको, जो हवालात के सींखचों के पीछे खड़े-खड़े रोया करना ।"

"अरी, कलाकार लोग कभी रोया नहीं करते, दूसरों को रुलाया करते हैं ।"

"···और लड़कियाँ भी आप-जैसे दीवानों को जिन्दगी-भर रुलाया करती हैं, वे भी किसी कलाकार से कम नहीं । उनके एक इशारे पर आप-जैसे लोग फिरकनी की तरह नाचा करते हैं ।"

"ये बात है ।"

"और नहीं तो ।"

"अच्छा चलो कैलाश फिर वहाँ मजा चखाऊँगा तुम्हें ।"

"क्या मजा चखाओगे ?" नीरा ने हँसते हुए प्रतिवाद किया ।

मैंने कहा—"उठाकर नदी में पटक दूँगा तुम्हे ।"

"और नहीं पटका तो ?"

"तो जो तुम चाहोगी वही करूँगा ।"

"अच्छा चलिये । यही बात रही ।"

कहते हुए हम दोनों ताँगा स्टेंड पर आये, चूँकि बस कैलाश तक नहीं जाती थी इसलिये एक ताँगा ही किराये पर ले लिया और चल दिये कैलाश की ओर । सिकंदरा से कैलाश तक की सड़क डामर की न होकर खाली कंकड़ों की बनी हुई है, वह भी बरसात में जगह-जगह इतनी खराब हो जाती है कि इक्के-ताँगे का वहाँ तक पहुँचना मुश्किल हो जाता है ।

कैलाश के निकट पहुँचकर हम ताँगे से उतर गये और थोड़ी दूर तक पैदल-पैदल करील की घनी झाड़ियों के बीच से दौड़ती हुई पगडंडी पर होते हुए उस रमणीक स्थान पर पहुँच गये जहाँ दिन-रात चिड़ियाँ

चहचहाया करती हैं, नदी के किनारे उगी हुई दूब पर हिरणों की टोलियाँ उछल-कूद किया करती हैं और जमुना का छल-छल करता हुआ नीला पानी कगारों से टकराकर संगीतमय कर देता है वहाँ के शान्त वातावरण को। उस समय हिमालय की गोद में स्थित मानसरोवर झील का चित्र आँखों के सम्मुख साकार हो उठता है और टीले पर बने हुए मंदिरों से उठने वाली घंटियों की आवाज ऐसी लगती है जैसे स्वर्ग में परियों का नृत्य हो रहा हो।

टीले के दाहिनी ओर समतल भूमि पर पाँच-सात मकानों की एक छोटी-सी बिखरी हुई बस्ती है। उस बस्ती के ठीक सामने कुछ गजों के फासले पर बल खाती हुई जमुना की धारा आगरा की ओर बह रही है। उन्हीं मकानों की ओर चलते हुए नीरा ने एक बार टीले पर स्थित मंदिरों के शिखरों पर लहराती हुई लाल रंग की ध्वजाओं की ओर निहारा और उसी ओर देखती हुई बोली—"बहुत सुन्दर स्थान है यह तो?"

"इसीलिये तो यहाँ लाया हूँ तुम्हें।"

"लेकिन इधर कहाँ जा रहे हैं आप, चलिये ऊपर मंदिरों की झाँकियाँ देखेंगे।" नीरा ने मेरी ओर देखा।

मैंने कहा—"यहाँ अपनी जान-पहचान के एक लेखक रहते हैं—रावीजी, उनसे मिलने के बाद चलेंगे मंदिरों में।"

"ये रावीजी क्या नाम होता है?" नीरा ने भौं सिकोड़कर आश्चर्य प्रगट किया।

मैंने बताया—"रावीजी इनका संक्षिप्त नाम है, वैसे पूरा नाम है रामप्रसाद विद्यार्थी। इन दोनों शब्दों के प्रथम अक्षरों को लेकर उन्होंने अपना यह छोटा-सा साहित्यिक नाम रख लिया है और इसी नाम से वे हिन्दी साहित्य जगत् में प्रसिद्ध हो गये हैं। आगरा की चहल-पहल उन्हें पसन्द नहीं थी इसलिये कई वर्षों से यहीं एकान्त में पड़े-पड़े साहित्य-साधना किया करते हैं।"

"उनके बीवी-बच्चे कहाँ रहते हैं फिर ?" नीरा ने पूछा—"या शादी ही नहीं की है उन्होंने ?"

मैंने कहा—"भला तुम्हीं बताओ शादी के बिना कोई लेखक भी बन सकता है ? जब तक उसकी प्रिय पत्नी हमेशा उसके साथ नहीं रहेगी तो लिखने की प्रेरणा कहाँ से मिलेगी उस लेखक को।"

नीरा मुस्कराती हुई बोली—"लेकिन आपकी शादी तो हुई नहीं अभी फिर लिखने की प्रेरणा कौन देता है आपको ?"

"तुम जैसी 'टेंपरेरी' पत्नियाँ ·····।"

"हुँह ! मुझे आपकी ऐसी बात अच्छी नहीं लगती। क्या लड़कियों को आपने बाजार में बिकने वाली गाजर-मूली समझ रखा है जिसे जब चाहा खरीद लिया और खाकर फेंक दिया कूड़ेदान पर !"

"अभी तक तो मेरा ऐसा ही विचार था कि औरत की इस दुनियाँ में गाजर-मूली से अधिक कीमत नहीं और विश्वास न हो तो चलो फुलट्टी बाजार और सेब के बाजार में तुम्हें गाजर-मूली की तरह दो-दो रुपये में बिकती हुई औरतें दिखा सकता हूँ। कितनी सस्ती कीमत है औरतों की इस दुनियाँ में और उन्हें खरीदने वाले समाज के भूखे भेड़ियों का रूप देखना चाहती हो तो रात को उन बाजारों से गुजरकर देख लेना। कितने अजीब-अजीब दृश्य दिखाई देंगे वहाँ, जिन पर सहसा तुम्हें विश्वास नहीं होगा नीरा ! उन कोठों पर बैठने वाली पाउडर और लिपस्टिक में पुती हुई समाज की गंदगी कैसी मीठी मुस्कान देती है कि आदमी अपने-आपको रोक नहीं पाता और उस सड़ाँध में जाकर महकते हुए फूलों की सुगन्ध खोजने की कोशिश करता है। कितना भोला है यह पुरुष, जिसमें सुगंध और दुर्गन्ध तक पहचानने की शक्ति नहीं रही। लेकिन रूप का नशा ही ऐसा होता है जिसमें सब-कुछ भूल जाता है आदमी जिसने एक बार भी ऐसी भूल कर दी समझ लो उसका सारा जीवन ही उन भूलों की एक दर्द-भरी कहानी बनकर रह जाता है।

जीवन के अंतिम क्षणों तक उस पाप की पुनरावृत्ति होती ही रहती है और उस पुनरावृत्ति में ही उसका अवसान हो जाता है।"

नीरा के चेहरे पर अनगिनत भाव उर्मियाँ झील के शान्त वक्षस्थल पर थिरकने वाली छोटी-छोटी तरंगों की भाँति उठकर गिर रही थीं और मैं उस परिवर्तन को देखता जा रहा था उसके साथ-साथ। सहसा नीरा ने संदेह की दृष्टि से मुझे देखा और बोली—"क्या आप भी जाते हैं उन बाजारों में ?"

"क्यों नहीं !"

"क्यों जाते हैं आप ?" एक अपनत्व का भाव था उसके इन शब्दों में।

मैंने कहा —"कुछ खरीदने ही जाता हूँ मैं भी, बेकार तो घूमा नहीं करता।"

"क्या खरीदने जाते हो ?"

"जो भी काम की चीज मिल जाती है वही खरीद लेता हूँ। कुछ नहीं तो उपन्यास लिखने का 'प्लाट' ही मिल जाता है वहाँ, बस और क्या चाहिये मुझे। कभी-कभी जी चाहता है तो······।"

"आग नहीं लग जाय आपके जी में" नीरा गुस्से में आकर बोली—"ऐसी बातें कहते हुए शर्म नहीं आती आपको, जान-बूझकर अपना जीवन बर्बाद करने की कोशिश कर रहे हो।"

"लेकिन नीरा तुमने यह नहीं सोचा कि एक जीवन बर्बाद होने से अगर बहुत सारे भटके हुए जीवनों को सही रास्ता मिल जाय तो मैं उसे बर्बादी न कहकर कुछ और ही कहूँगा।"

"क्या खाक कहोगे···बड़े बने हैं परोपकारी के बच्चे।" नीरा विष का-सा घूँट पीकर चुप हो गई।

चलते-चलते रावीजी के मकान के सामने पहुँचे तो एक बड़ा-सा ताला वहाँ झूलता हुआ देखकर तबियत खिन्न हो गई।

मैंने नीरा की ओर देखा जिसका चेहरा अभी भी गुस्से में लाल हो रहा था, धीरे से बोला—"शायद रावीजी कहीं बाहर गये हुए हैं, चलो तब तक नदी के किनारे बैठेंगे।"

हम दोनों नदी के किनारे-किनारे बस्ती से थोड़ी दूर निकल गये। आकाश में काले और भूरे बादल घिरे हुए थे जिनकी वजह से आसपास के वातावरण में एक ठंड-सी महसूस हो रही थी। हरे-हरे पेड़-पौधे और लम्बी-लम्बी घास वायु के संकेत पर लहरा रहे थे और नदी के उस पार का हरा-भरा मैदान ऐसा लगता था जैसे मीलों में फैला हुआ कोई चरागाह हो। पानी के चंचल धरातल पर वृक्षों की परछाइयाँ रबड़ की तरह फैलती और सिकुड़ती नजर आ रही थीं और नदी की गोद में काले-काले बादलों का समूह एसा लगता था जैसे समूचा नीलमणि पर्वत जल-मग्न हो गया हो।

पानी के किनारे एक पत्थर पर जाकर हम दोनों बैठ गये। कहने को नीरा बैठ तो गई मेरी बगल में लेकिन बोली कुछ नहीं रास्ते-भर और अब भी वह सूनी-सूनी निगाहों से नदी के उस पार देख रही थी न जाने क्या?

मैं पत्थर पर कुहनी के सहारे अर्द्ध लेटावस्था में बैठ गया। नीरा के फूले हुए चेहरे की ओर देखता हुआ बोला—"कैसे नाराज हो गई मेरी सरकार?"

लेकिन कोई जवाब नहीं मिला जैसे उसने सुना ही न था। बराबर देखे जा रही थी निर्निमेष नदी के दूसरे किनारे को।

अबकी बार मैंने उसे गुदगुदी करके छेड़ दिया तो बिगड़ उठी—मुझे आप-जैसे आदमियों से सख्त नफरत है।"

"वह तो मुझे भी पता है!" मैंने कहा—"नफरत के सिवाय आप-जैसी लड़कियों के पास प्यार-जैसी कोई चीज हो ही नहीं सकती; फिर होगी भी क्या तुम किसी की।"

"आपके पास तो है जो कोठों पर बाँटते फिरते हो।"

"शाब्बास" मैंने कहा—"अब समझा कि आप किसलिये मुँह फुलाये बैठी हैं। देवीजी तुम्हें यह विश्वास कैसे हो गया कि मैं कोठों पर जाता हूँ ?"

"मुझे क्या पता अपने दिल से ही पूछकर न देखो।"

"दिल तो मेरा शीशे की तरह साफ है जिसमें हर कोई झाँककर मेरी अच्छाइयाँ और बुराइयाँ देख सकता है, न मानो तो तुम स्वयं देख लो" कहता हुआ मैं उछलकर ठीक नीरा के सामने बैठ गया और उसके चेहरे को अपनी दोनों ह लियों के बीच साधकर बोला—"अब देखो मेरी आँखों में झाँककर कितना सच्चरित्र व्यक्ति हूँ मैं, बोलो कुछ दिखाई दिया ?"

"सब दिखाई दे गया।" मेरे हाथ हटाने की कोशिश करती हुई वह बोली।

'क्या दिखाई दे गया ?"

"कुछ नहीं ! पहले आप छोड़िये तो सही।"

"नहीं, पहले बताओ ?"

"हाय राम ! आप आदमी हैं या हैवान हैं ?"

"चलो यही बताओ ?"

"क्या बताऊँ ?"

"यही कि मैं आदमी हूँ या हैवान हूँ ?"

"मैं तो ऐसे आदमी को हैवान ही कहूँगी जिसके हृदय में ज़रा भी दया नहीं।"

"मैंने कौनसी निर्दयता की है तुम्हारे साथ ?"

"तो छोड़ते क्यों नहीं फिर····।"

"यह निर्दयता है।" मैंने पूछा—"किसी को प्यार से पकड़ लेना निर्दयता है तो फिर प्यार कैसे किया जाता है ज़रा बताना ?"

"अभी बताती हूँ आप छोड़िये तो सही ?"

मैंने छोड़ दिया नीरा को तो वह सम्हलकर बैठती हुई बोली—"अच्छा आप लेट जाइये पहले ?"

उसकी आज्ञानुसार मैं चट्टान पर चित्त लेट गया नीरा की ओर सर करके तो वह बोली—"ऐसे नहीं, लाइये आप अपना सर मेरी गोद में रखिये।"

और नीरा ने उठाकर मेरा सर अपनी गोद में रख लिया, बोली—"अब कैसा लगता है आपको ?"

"बहुत बुरा।"

मेरे बालों में अपनी उँगलियाँ फँसाकर सहलाती हुई बोली—"अब ?"

"अब तो और भी बुरा लगता है नीरा।"

मैंने ऊपर की ओर देखा तो नीरा मुस्करा रही थी। दोनों हाथ ऊपर उठाकर मैंने नीरा की गर्दन अपने दोनों हाथों के बीच में ले ली और अपनी ओर खींचने लगा। वह झुकती गई, झुकती गई और दोनों के होंठ परस्पर मिल गये। नीरा पुलकित हो गई। उसने दोनों आँखें बंद कर लीं।

काफी देर पश्चात् जब उसे मेरी भुजाओं के बन्धन से मुक्ति मिली तो शरमाती हुई सीधी बैठ गई। मैंने कहा—"तुमसे प्यार करना तो बहुत अच्छा आता है नीरा।"

"देख लीजिये मुझे सब-कुछ आता है।"

"लेकिन यह प्यार करने की प्रेक्टिस कहाँ की थी पहले ?"

"प्यार करने की प्रेक्टिस भी की जाती है ?"

क्यों नहीं। मेरे कहने का मतलब है कि प्यार करने की ट्रेनिंग किसने दी थी तुम्हें !"

"नीरा बोली—"सच-सच बता दूँ आप नाराज तो नहीं होंगे।

"नहीं !"

"दिल्ली में जिस मुहल्ले में हमारा मकान था, वहीं पर एक लड़का रहता था बहुत सुन्दर, मोटा-ताजी शायद किसी कालेज में पढ़ता था वह और उसकी सूरत बिलकुल देवानंद से मिलती थी। उसका घर भी ठीक हमारे घर के सामने था। घर वालों की आँख बचाकर मैं ऊपर के कमरे में चली जाती थी और वह भी ऊपरी मंजिल की गौख में आकर खड़ा हो जाता था। फिर मैं अपने कमरे की खिड़की थोड़ी-सी खोलकर घंटों उसे देखा करती थी और वह भी पागलों की तरह मझे न जाते क्यों देखा करता था घूर-घूरकर। धीरे-धीरे उसने हाथों से इशारेबाजी शुरू कर दी। इस पर मैं झट से खिडकी बंद करके अपने पलंग पर आ लेटनी और बहुत देर तक मीठी-मीठी कल्पनाएँ किया करती अपने और उसके बारे में, लेकिन कुछ ही देर में जी-सा घबड़ाने लगता उस अँधेरे कमरे में तो मैं जाकर फिर से खिड़की खोल देती और छुप-छुपकर उसे देखा करती। लेकिन वह इतना बेशर्म था कि एक टक देखता ही रहता था मेरी ओर दीवानों की तरह। उसे इतना भी ध्यान नहीं रहता था कि कौन आया और कौन गया। एक दिन हुआ भी ऐसा ही कि मैं खिड़की पर खड़ी हुई उस लड़के की ओर देख रही थी और वह भी सामने ही खड़ा था कि मेरी माताजी कमरे में घुस आईं। पीछे से आकर उन्होंने हम दोनों को आमने-सामने खड़ा हुआ देखा तो उबल पड़ीं—'क्यों, इसलिए आती होगी बार-बार नीचे से पढ़ने का बहाना करके, यह तेरी पढ़ाई हो रही होगी! बेशर्म, बेहया तुझे मौत भी नहीं आती! अच्छा नाम उछालेगी तू हमारा। अब आने तो दे तेरे बाप को फिर देखना तेरे क्या-क्या फजीते करवाती हूँ। चुड़ैल तू नाक कटवा के छोड़ेगी हमारी इस मुहल्ले में, इससे तो अच्छा था कि तू पैदा होते ही मर जाती तो मुझे संतोष तो हो जाता। तू कहीं भी चैन से हमें दो रोटी नहीं खाने देगी। राँड तुझे यही सिखाया जाता होगा कालेज में कि दीदे मटकाया कर लड़कों के सामने। बड़ी जवानी में आग लग रही है तेरी में। अगर ऐसा ही है तो शादी क्यों नहीं करवा

लेती बेहया। तुझे तो ज़रा भी शर्म नहीं रही! इसीलिए रोज़-रोज़ क्रीम पाउडर लगाती होगी घंटों यहाँ बैठकर। तेरा जन्म जले तेरा। हद हो गई! हाय! अब मैं क्या करूँ तेरे लिए? जी में आता है कि तेरा गला घोंट दूँ। हमने भी यह जवानी देखी थी कभी, लेकिन तेरी तरह यह ताका-झाँकी कभी नहीं की थी हमने। इससे तो अच्छा है कि तू किसी कुएं-पोखर में जाकर मर जा, फिर यह रोज-रोज के चला-चैत्तर तो नहीं मिलेंगे देखने को।' इसके बाद माँ ने लात-थप्पड़ों से मुझे इतना मारा था कि आज भी याद कर लेती हूँ तो किसी लड़के की तरफ देखने की हिम्मत नहीं होती। पिताजी ने भी उस दिन इतना फटकारा था कि कई हफ्ते तक मैं उनके सामने नहीं आई। घंटों नीचे के कमरे में पड़ी-पड़ी सिसक-सिसककर रोया करती थी अपनी गलती पर और बेहद अफसोस होता था मुझे। उसी दिन से माँ ने उस खिड़की में हमेशा के लिए ताला डाल दिया और वह लड़का भी कुछ दिन बाद न जाने कहाँ चला गया।"

मैं चुपचाप नीरा की गोद से उठकर अलग बैठ गया। न जाने क्यों नीरा की यह कहानी रह-रहकर मुझे खटक रही थी और गुस्सा भी आ रहा था नीरा के ऊपर।

"क्यों, चुप कैसे बैठ गये?"

"तुम-जैसी बदमाश लड़कियों से मैं बात नहीं करना चाहता हूँ।" उसकी ओर बिना देखे ही मैंने कहा।

"देखिये, मैंने पहले ही कहा था कि आप नाराज हो जायेंगे!"

"हूँह! मैं क्यों नाराज होने लगा। मेरी बला से तुम भले ही कोठे पर बैठना शुरू कर दो। रोज बहुत सारे देवानन्द, दिलीपकुमार और राजकपूर आया करेंगे तुमसे मिलने, तुम्हारे कदमों पर अपना सर झुकाने, फिर जी चाहे जो किया करना। नोटों की बरसात हुआ करेगी तुम्हारी इस अल्हड़ जवानी पर और फिर तुम मेरी लगती ही कौन हो जो मैं तुम्हारी चिंता करने लगा।"

"कोई भी नहीं लगती, बस रहने दीजिए आप। एक छोटी-सी बात कहदी तो गुस्सा हो गये और स्वयं न जाने क्या-क्या कहते रहते हैं मुझसे, जैसे मैं तो पत्थर की ही बनी हूँ, मुझे किसी बात का खयाल नहीं आता। अगर मैं नाराज भी हो जाऊँगी तो क्या बिगाड़ लूँगी आपका, यही बात है न।"

"नहीं नीरा तुम्हारा खयाल ग़लत है, मैं नाराज़ नहीं हूँ। यह मानव-मन ही ऐसा है कि जिसे वह अपना समझने लगता है उसके मुँह से किसी दूसरे की प्रशंसा सुनकर न जाने क्यों बुरा-सा महसूस होने लगता है। इसमें हमारा-तुम्हारा कोई दोष नहीं, मानव-मनोविज्ञान का यह अटल सत्य है जिसमें हम और तुम कोई बाधा नहीं दे सकते। जिस तरह तुम मुझ पर एकाधिकार चाहती हो उस तरह मैं भी चाहता हूँ कि तुम सिर्फ मेरी ही रहो, मेरी आँखों से एक पल के लिए भी दूर न हो और मेरे अतिरिक्त कोई दूसरा तुम्हें देख भी न सके। हमेशा तुम मेरे सपनों की रानी बनी रहो। बस, यही मैं चाहता हूँ। इतने दिनों से मैं इसीलिए मानसिक विशृंखलता का अनुभव करके परेशान रहता हूँ कि मुझे कोई अपना कहने वाला नहीं दिखता इतनी बड़ी दुनियाँ में। घर वाले भी न जाने क्यों मेरी शादी नहीं करना चाहते और पिताजी का तो कहना है कि जब तक चार-पाँच साल सर्विस करके मैं पाँच-सात हज़ार का अपना स्वयं का 'बैंक बैलेंस' नहीं कर लूँ तब तक शादी ही न करूँ मैं। भला यह भी कोई शर्त होती है! तुम्हीं सोचो, जब बूढ़े होकर शादी की तो क्या मजा रहेगा उसमें। बीबी क्या नोट की गड्डियाँ देख-देखकर पेट भर लिया करेगी। इसलिए मैंने सोचा है कि घर वालों की अब एक भी नहीं सुनूँगा। जो लड़की मुझे पसंद आ जायगी उसी से शादी कर लूँगा। भले ही वह हिन्दू मुसलमान या ईसाई कोई भी हो। जाति-पाँति में मुझे तनिक भी विश्वास नहीं। हाँ, मेरी भावी पत्नी 'लिटरेरी-टेस्ट' की ज़रूर होनी चाहिये जो दिन-रात मेरी ही तरह कहानी और उपन्यास लिखा करे।"

"आपके पिताजी क्या करते हैं ?" नीरा ने प्रश्न किया ।

मैंने कहा—"एक कालेज में 'इकनामिक्स' के प्रोफेसर हैं ।

"और कोई नहीं है आपका ?"

"हैं न बड़े भाई साहब, वे भी इंगलिश के प्रोफेसर हैं एक कालेज में, लेकिन मज़े की बात तो यह है कि उनकी भी शादी नहीं हुई अभी तक !"

नीरा मुस्कराती हुई बोली—"हाय ! तब तो बड़ा अन्याय कर रहे हैं आपके घर वाले आप दोनों भाइयों के साथ ।"

"लेकिन मैं तो परवाह नहीं करता इस अन्याय की । जिस दिन तबियत आयेगी उसी दिन शादी कर लूँगा तुम से ।"

नीरा शरमा उठी, बोली—"तो आप समाज के नियमों को तोड़ देंगे ?"

'क्यों नहीं. लेखक पैदा ही इसीलिए होते हैं कि वे समाज की सड़ी-गली परम्पराओं पर अपनी लौह-लेखनी से कुठाराघात करके उन्हें समूल उखाड़ फेंके और उनकी जगह नई-नई मान्यताएँ स्थापित करें । समाज के हर नियम का पालन आँख मूँद कर गधे किया करते हैं लेकिन मैं तो गधा नहीं हूँ । गधों के बाप-का-बाप हूँ ।"

नीरा खिलखिलाकर हँस पड़ी । जब हँसी का दौर समाप्त हुआ तो मेरी ओर देखकर बोली—"सचमुच आपकी सूरत भी कुछ-कुछ गधों से मिलती है !"

और वह फिर हँसने लगी ।

मैंने उसके बायें गाल पर एक हलकी-सी चपत लगाते हुए कहा—"गधे की बच्ची, तुम्हारे अंदर तमीज़ नहीं है बात करने की, जो मन में आया बक दिया ?"

"आपने ही तो कहा था अपने आप कि ···· ।"

"अरी, वह तो सिर्फ हँसाने के लिए कहा था !"

"······और मैं क्या रो रही हूँ ?"

"अच्छा, अब चुप रहो ज्यादा बात मत करो नहीं तो उठाकर नदी में पटक दूँगा।"

"पटककर दिखाइये न। तब तो जानूँ कि आप हिम्मत वाले हैं, यह खाली-पीली रौब दिखाने से डरने वाली नहीं मैं।"

और सचमुच ही मैंने उठा लिया उसे अपनी गोद में उसका सारा शरीर मेरी दोनों भुजाओं पर झूल रहा था। थोड़ी देर तक तो वह हँसती रही और जैसे ही उसे लेकर मैं नदी के कगार पर जा खड़ा हुआ तो वह सिहर उठी। नीचे ही पानी में बड़े-बड़े कुएँ-जैसे भँवर पड़ते हुए देखकर तो वह भयभीत हो गई। लपककर उसने अपनी दोनों भुजाएँ मेरे गले में डाल दीं और चिपट गई मेरे शरीर से उसी तरह जैसे कोई बेल किसी वृक्ष के तने से लिपट जाती है। किनारे पर झुककर मैंने अपनी बाँहें शिथिल करना शुरू कर दिया तो वह गिड़गिड़ा उठी—"हाय, मैं मर जाऊँगी, आप यह क्या कर रहे हैं। सचमुच ही आप तो गिराने लगे मुझे?"

"गिरा नहीं रहा हूँ तुम्हें जल-समाधि दे रहा हूँ हमेशा के लिये और नीचे देखो ये बड़े-बड़े कछुए तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे हैं देवीजी! भूखे दिखते हैं बिचारे। दिखता है बहुत दिन से कोई शिकार नहीं मिला इन्हें।" और कछुओं की ओर देखकर बोला—"प्यारे, फिकर मत करो तुम्हारे लिये वो मीठे गोश्त की शिकार भेज रहा हूँ कि तुम भी जिंदगी-भर क्या याद करोगे कि कोई बाबूजी आये थे यहाँ।"

ज़रा-सी गर्दन घुमाकर नीरा ने किनारे पर डूबते-उतराते हुए बड़े-बड़े कछुओं की ओर देखा तो दूसरे ही क्षण फिर बुरी तरह चिपट गई मेरे सीने से। करुणा भरी दृष्टि मेरे चेहरे पर जमाती हुई बोली—"आपको मेरी कसम है मान जाइये, नहीं मेरा 'हार्ट फेल' हो जायगा। मुझे पानी से बहुत डर लगता है!"

"पानी की मौत तो सबसे ही अच्छी होती है नीरा। ठंडा-ठंडा

पानी पीते जाओ और मरते जाओ धीरे-धीरे, फिर देखो क्या मजा आता है ?"

"आपको हर चीज में मजा आता है। किसी की तो जान चली जाय और आपके लिए सिर्फ मनोरंजन का साधन बनकर रह जाय उस बिचारे की मौत। भगवान् न करे कोई आग में जलकर या पानी में डूबकर मरे ! बड़ा दुख देती है इस तरह की मौत।"

"तो क्या प्रेक्टीकल अनुभव किया है तुमने कभी ?"

"नहीं, सिर्फ सुना है कि बड़ी तकलीफ होती है। हाँ, पिछले वर्ष ही हमारे मुहल्ले में एक लड़की जरूर मरी थी इस तरह ! उसने अपने सारे कपड़ों में मिट्टी का तेल छिड़ककर आग लगा ली थी। हमने जब सुना तो उसके घर देखने गये। हाय ! उसका रूप कितना वीभत्स हो गया था ? सारे शरीर पर बड़े-बड़े फफोले पड़ गए थे। जगह-जगह से सफेद चमड़ी निकल आई थी। मैं तो वहाँ एक मिनट भी नहीं रुक सकी और जी-सा घबड़ाने लगा तो भागी अपने घर को। कुछ देर जीवित रहने के बाद वह मर गई।"

"कुँआरी थी या शादी हो गई थी उसकी ?" मैंने पूछा।

नीरा बोली—"पहले जमीन पर उतार दीजिये मुझे तब बताऊँगी।

मैंने उसे और भी दबोच लिया और बोला—"पहले मेरे सवाल का जवाब दो इसके बाद उतारूँगा !"

"कुँआरी थी !" नीरा मुस्करा उठी।

मैंने कहा—"तब तो बहुत ही बुरा हुआ, एक अछूती जवानी उठ गई इस दुनियाँ से बिना किसी का दिल बहलाये। सचमुच नीरा जब किसी कुँआरी लड़की के मरने की खबर मुझे मिलती है तो दिल में कुछ ऐसा होता है कि बस पूछो मत। फिर तो इस भगवान् के बच्चे पर मुझे इतनी गुस्सा आती है कि कहीं मिल जाय तो उसका गला ही घोट दूँ।"

"बहुत गुस्सेवाज आदमी हैं आप इसका मतलब है।" नीरा बोली—"लेकिन वह अछूती नहीं मरी थी। मुहल्ले में ही किसी कालेज के लड़के से फसी हुई थी और जब उसके घर वालों ने कहीं दूसरी जगह उसकी शादी तै कर दी तो बरात आने के चार-पाँच दिन पहले ही मरी ने आग में जलकर जान दे दी।"

मैंने कहा—"अब तुम्हारा मरने का नम्बर है नीरा। वह तो आग में जलकर मरी थी और तुम पानी में डूबकर मरो।"

"लेकिन मैं मर जाऊँगी तो आपके दिल में ऐसा-ऐसा कुछ नहीं होगा ?"

"नहीं !"

"क्यों !"

"इसलिए कि तुम अछूती थोड़े मरोगी। मेरा दिल बहलाने के बाद ही तो मर रही हो।"

"लेकिन अच्छी तरह दिल कहाँ बहलाया है मैंने अभी आपका। देखते तो जाइये कितना प्यार करूँगी आपको। अभी से अगर बे-मौत मार दिया मुझे तो चुड़ैल बनकर बहुत परेशान किया करूँगी आपको···।"

"बाप-रे-बाप तब तो नहीं मारूँगा तुम्हें। भूतनी बन गईं तो हिंदी साहित्य के एक लेखक की ऐसी कम तैसी हो जायगी।" और मैंने धड़ाम से पटक दिया नीरा को पत्थर पर जाकर।

वह अपनी कमर पर हाथ रखकर रूआँसे स्वर में बोली—"हम नहीं जी, देखते नहीं कितनी जोर से लग गई है मेरे, आप आदमी हैं या जल्लाद है।"

"कहाँ लग गई है दिखाना ज़रा।" मैं उसकी बगल में बैठता हुआ बोला—"लाओ ठीक कर दूँ।"

"बस रहने दीजिये माफी चाहती हूँ।"

"जैसी तुम्हारी इच्छा ·······।"

"और मैं चुपचाप बैठा गया।

कुछ देर बाद नीरा बोली—"क्योंजी आप कैसी लड़की से शादी करना चाहते है ?"

"तुम-जैसी से।" मैंने कहा।

"नहीं, मेरे कहने का मतलब है कि कौन-कौनसी विशेपताएँ आपकी पत्नी में होनी चाहिये ?"

"कितनी बार तो बता चुका हूँ तुम्हें फिर भी पूछ रही हो ?"

"अच्छा, एक बार और बता दीजिये मेरी 'रिक्वैस्ट' पर······।" वह आग्रहपूर्वक बोली।

मैंने कहा—"अच्छा सुनो—नम्बर एक मेरी पत्नी चश्मा लगाती हो मेरा ही जैसा प्लास्टिक के फ्रेम का, गोल्डन फ्रेम नहीं।"

"क्यों ?"

"क्यों क्या, गोल्डन फ्रेम वाली जवान लड़कियाँ भी दूर से बुढ़िया जैसी दिखती हैं। इसलिये मुझे सख्त नफरत है गोल्डन फ्रेम से। पिछली साल ही मेरे साथ एक लड़की पढ़ती थी प्रमिला जो मुझे बहुत पसंद थी और मैं जी-जान से उसे चाहता था; क्योंकि वह प्लास्टिक के फ्रेम का चश्मा लगाती थी लेकिन न जाने क्यों वह हमेशा ही मुझे नफरत की दृष्टि से देखा करती थी। प्यार तो जैसे उसके सीने में था ही नहीं और एक मैं था जो हर समय उसके पीछे दीवानों की तरह चक्कर लगाया करता था। शाम को कालेज से जब वह साइकिल पर अपने घर जाती तो मैं भी अपनी साइकिल उठाकर उसके पीछे-पीछे उसके घर तक चला जाता और उसके घर से थोड़ी दूर उतरकर खड़ा हो जाता। जब वह साइकिल लेकर अपने घर में घुस जाती तो घण्टों पागलों की तरह खड़ा-खड़ा मैं उसके घर की ओर निहारा करता। अंत में अपना-सा मुंह लेकर वापस आ जाता।"

नीरा बोली—"किसी दिन चप्पल लगाई थीं उसने आपके ?"

"हाँ, एक दिन ऐसी भी शुभ घड़ी आ गई थी। बात असल में यह थी कि मेरे विश्वास के अनुसार लड़कियों का घृणा करना प्यार करने

की प्रथम मंजिल होती है और जो इस मंजिल को पार कर जाता है वह उस लड़की को हमेशा के लिये अपना बना सकता है। तो मैंने भी ऐसा ही किया। सोचा शायद प्रमिला दिखाने के लिये ही मुझे नफरत किया करती है—एक दिन यह प्यार जरूर करेगी और ऐसा करेगी कि फिर जीवन-भर कभी नहीं छूटेगा। सो एक दिन ऐसा हुआ कि सब लड़के-लड़कियाँ कालेज समाप्त होने पर क्लास से बाहर निकल गये। जो वहाँ रह गये थे उनमें प्रमिला और उसकी दो साथी लड़कियाँ थीं और लड़कों में सिर्फ मैं रह गया था बैठा हुआ यह सोचकर कि प्रमिला शायद मुझसे बात करेगी इसीलिए वह रुक गई है, अतः मुझे भी रुक जाना चाहिए। थोड़ी देर बाद वे तीनों लड़कियाँ आपस में कुछ लिखा-पढ़ी करके उठ गईं। प्रमिला उनमें सबसे पीछे चलने लगी। जैसे ही वे मेरे डैक्स के सामने से गुजरीं, मैं भी फौरन प्रमिला के पीछे हो लिया और कमरे के बाहर निकलने से पहले ही मैंने उसकी साड़ी का आँचल खींचकर 'छी ! छी ! छी ! छी !' कर दिया।

"फिर जानती हो इसकी प्रतिक्रिया क्या हुई उस पर ? नागिन की तरह पलटकर उसने लाल-लाल आँखों से मेरी ओर देखा और कड़क कर बोली—"शर्म नहीं आती है बदतमीज् कहीं के ?"

लड़कियाँ भी एक दम रुक गईं। वे सब मेरी ओर संदेह की दृष्टि से देखने लगीं।

मैंने कहा—"जी, मैंने कौनसी बदतमीज़ी की है आपके साथ ?"

"साड़ी का पल्ला क्यों खींचा था ?" बिगड़ उठी वह।

"जी, अपना ही समझकर खींचा था।" मैंने कहा।

"क्या मतलब ?"

"यही कि किसी को अपना ही समझकर छेड़ा जाता है।"

"किसी को अपना बनाने लायक तुम्हारी सूरत है ?"

"जी, सूरत तो कोई खास खराब नहीं है, हम दोनों ही चश्मा लगाते हैं और ......।"

"शट अप''''''नानसेंस' कहीं के, न जाने कहाँ-कहाँ से कालेज में आ मरते हैं गँवार कहीं के। बात करने की तमीज़ नहीं और चल दिये कालेज में पढ़ने जैसे इनके बाप का बनवाया हुआ है।"

"जी, मेरे बाप का तो नहीं लेकिन हो सकता है महादजी सिंधिया आपके बाप होंगे जिन्होंने यह आगरा कालेज बनवाया था, तभी तो आपने यहाँ एडमीशन लिया है।"

" चुप रहो, "वह कड़ककर बोली—"चप्पल के मारे सर तोड़ दूंगी अगर आगे कुछ कहा तो। गाँव के गमरे''''''।"

"बस चप्पल ही लगा सकती हो।" मैंने कहा—"वह तो मेरे सर पर फूल की तरह बरसेंगी। हाँ, चाहो तो छुरी चला दो मेरे सीने पर, मेरी जान''' ।"

"और देखते-ही-देखते चप्पल उतारकर उसने तीन-चार जड़ दीं मेरे मुँह पर तड़ातड़-तड़ातड़ जैसे ओले पड़ गये हों। दो चप्पलें मेरी नाक पर ऐसी पड़ीं कि नक्की छूट निकली। खून की बूंदें टपटप-टपटप फ़र्श पर गिरने लगीं। ऐसा लगता था जैसे नाक से खून के आँसू गिर रहे हों। सीने पर कमीज भी खून से तरबतर हो गई और वे तीनों लड़कियाँ घबड़ा गईं। प्रमिला की तो हालत ही बिगड़ गई यह देखकर। गुस्सा न जाने कहाँ रफूचक्कर हो गया उसका। अपनी कमर से खुसा हुआ रूमाल निकालकर मेरी ओर बढ़ती हुई बड़ी नम्रतापूर्वक बोली—'ये लीजिये रूमाल'''''' ।"

"जी, आपका रूमाल खराब हो जायगा।"

"हो जाने दीजिये '''''।"

और मैंने खून से लथपथ दाहिना हाथ उसकी ओर बढ़ा दिया।

"हाः! कितना खून बह रहा है!" प्रमिला बुदबुदा उठी।

मैंने कहा—"यह आपकी ही मेहरबानी है। खैर, अच्छा ही हुआ आपने भविष्य के लिए मुझे एक शिक्षा दे दी। अब कभी नहीं भूल सकूंगा आपको। आज की बदतमीज़ी के लिए आपसे क्षमा चाहता हूँ

और आशा है आप जरूर क्षमा कर देंगी। आगे कभी ऐसी हरकत नहीं करूँगा अब। बहुत दिन से आपको गलत समझे हुए था मैं। खैर, मुझे आप विश्वास दिला दीजिये कि प्रिंसिपल से शिकायत तो नहीं करेंगी, वरना देखिये मेरा 'रस्टीकेशन' हो जायगा और भविष्य के सारे अरमान मिट्टी में मिल जायेंगे।"

"नहीं ! नहीं ! आप मुझे गलत समझने की कोशिश मत करिये। मैं प्रिंसिपल से शिकायत करने लायक नहीं रही। गलती मेरी है इसी-लिये उलटी मुझे आपसे माफ़ी माँगनी चाहिए। आप अभी डाक्टर के यहाँ चले जाइये वरना देखिये बहुत सारा खून निकल जायगा आपका···।

"निकल जाने दीजिये।" मैंने लापरवाही से कहा—"यह तो गँवार खून है जिसे निकल जाना ही चाहिए। इसकी जगह शहरी सभ्यता का खून तब भी आ जायगा और तभी मैं एक गमरे से सभ्य व्यक्ति बन सकूंगा।"

प्रमिला तड़प उठी मेरा व्यंग सुनकर।

मैंने कहा—"आप लोग जाइए। थोड़ी देर में यहीं मेज़ पर आराम करूँगा। खून अपने-आप बन्द हो जायगा।"

इसके बाद वे तीनों लड़कियाँ चली गईं वहाँ से और मैं थोड़ी देर आराम करने के बाद घर चला आया। इस घटना के बाद चार दिन तक मैं कालेज नहीं गया। पाँचवें दिन जब क्लास में पहुँचा तो सभी लड़कियाँ मेरी ओर घूर-घूर कर देखने लगीं। शायद सब को पता चल गया था उस घटना के विषय में और मैं नीचा मुँह किए सबसे पीछे की सीट पर बैठ गया जाकर।

उस दिन से वही प्रमिला जो मुझे घृणा करती थी ऐसी पटी, ऐसी पटी नीरा कि बस पूछो मत। पूरी साल वह मेरे चक्कर में आकर कुछ भी न पढ़ सकी। आखिर में फेल ही हो गई एम० ए० में और मैं जो फर्स्ट क्लास की 'होप' किये हुए बैठा था—थर्ड क्लास में पास हुआ। क्या कहूँ, सारा कैरियर खराब कर गई बदमाश कहीं की ·····।"

नीरा चिढ़कर बोली—"मेरे तो मन की-सी तभी होती जब आप फेल ही हो जाते बिलकुल।"

"तुम्हें क्या मिल जाता ?"

"मुझे क्या, आपको तो मिल जाता सभी लड़कियों से छेड़ने का मजा। न जाने कितनी बदमाशियाँ की होंगी आपने अपनी 'स्टूडेंट लाइफ' में। वैसे देखने में कितने 'इन्नोसेंट' लगते हो जैसे कुछ जानते ही नहीं।

"सचमुच नीरा मैं कुछ भी नहीं जानता लेकिन पता नहीं ये लड़कियाँ न जाने क्यों मुझ पर मरा करती हैं ? तुम्हीं बताओ तुम क्यों मरी थीं मेरे ऊपर······।"

"मेरी मरती है बला आपके ऊपर।" नीरा अकड़कर बोली।

मैंने कहा—"खैर, कोई बात नहीं अब सुनो मेरी भावी पत्नी की अन्य विशेषताएँ······।"

"मुझे नहीं सुननी।" बीच ही में अकड़कर बोली नीरा।

"वाह ! पहले तो 'रिक्वैस्ट' करती हो और जब 'रिक्वैस्ट' मंजूर हो जाती है तो अकड़ने लगती हो। तुम औरत हो या बवाल हो। मत सुनो, हम तो नदी को सुनाएँगे ! हाँ, तो मेरी पत्नी न बहुत लम्बी हो और न बहुत ठिगनी ही—कम-से-कम पाँच फुट दो इंच की तो होनी ही चाहिये। क्योंकि मैं पाँच फुट छः इंच का हूँ। दूसरी बात न पतली हो न बहुत मोटी, तकरीबन सौ पौंड की तो होनी चाहिये क्योंकि मैं एकसौ तीस पौंड का हूँ। तीसरी बात काली हो या गोरी दोनों तरह की चलेगी क्योंकि जवानी में दोनों ही तरह की लड़कियाँ खूबसूरत लगती हैं। हाँ, चौथी शर्त जरा कठिन है वो यह कि मेरी पत्नी को हर साल एक 'मोस्ट ब्यूटीफुल' लड़का पैदा करना पड़ेगा और इस तरह छः साल में आधा दर्जन 'मॉडल' बन जाने के बाद हमेशा के लिये उसकी छुट्टी कर दूँगा। फिर सब लौंडों को दूध और 'टानिक्स' पिला-पिला के बड़ा कर दूँगा। कालेज में पढ़ने के बाद एक को डाक्टर, दूसरे को इन्जीनियर, तीसरे को ओफेसर, चौथे को वकील, पाँचवे को फिल्म

एक्टर और छटे को उस्ताद यानी आगरे का माना हुआ दादा बनाऊँगा जो छोकरियाँ पटाया करेगा ।"

"आपकी ही तरह, क्यों ?" नीरा बोली ।

मैंने कहा—"हाँ, बाप का भी तो गुण आना चाहिये एक लड़के में। लेकिन गलती हो गई नीरा एक लड़के को लेखक भी तो बनाना है ।"

"फिकर मत करिए वो दादा ही आगे चलकर लेखक बन जायगा।" मुस्करा उठी नीरा।

मैंने कहा—"नहीं नीरा उसे तो दादागिरी से ही फुर्सत नहीं मिलेगी, लिखेगा कब फिर ? इसलिये एक साल के लिये मुझे फिर से 'वर्कशाप' चालू करना पड़ेगा—एक लेखक पैदा करने के लिये ।"

"हाय बड़े बेशर्म हैं आप तो ?" नीरा ने कहा—"लड़कों की बजाय लड़कियाँ पसंद नहीं हैं आपको ?"

"बिल्कुल नहीं, मैं एक भी लड़की का बाप नहीं बनना चाहता। कौन लड़कियों की इल्लत अपनी खोपड़ी पर ले ·· ···।"

" ·· और आपकी धर्मपत्नीजी ने सात लड़कों की बजाय सात लड़कियाँ ही पैदा कर दीं तो ?" नीरा ने हँसकर पूछा ।

मैंने कहा—"तो बिना अल्टीमेटम दिये उसे फौरन तलाक दे दी जायगी ।"

"हाय तब तो कोई लड़की इस शर्त पर आपसे शादी करने को तैयार न होगी ।"

"न होगी तो न सही, अपनी तो इधर-उधर की ताका-झाँकी जिंदावाद रहे !" मैंने कहा—"लेकिन तुम तैयार हो मुझसे शादी करने के लिये फिर क्या चाहिए मुझे ।"

"आपकी होने वाली पत्नी की सारी विशेषताएँ मुझमें हैं ?" नीरा ने पूछा ।

मैंने कहा—"हाँ क्यों नहीं, तुम चश्मा लगाती हो, छरहरे बदन की हो, पतली कमर है, तिरछी नजर है, गाल फूले हुए कचौड़ी जैसे हैं, काश्मीरियों जैसा रंग है और क्या चाहिए मुझे ?"

"लेकिन आपकी आखिरी शर्त तो मैं ही क्या, कोई भी लड़की पूरा न कर सकेगी ।"

"क्यों ?" मैंने पूछा ।

वह बोली—"इसलिये कि जो औरत हर साल एक बच्चे की माँ बनेगी, वह सात साल तक जिंदा रह सकती है ?"

"क्यों नहीं. औरतें तो एक-एक साथ पाँच-पाँच बच्चे देती हैं, और जिंदगी भर देती ही रहती हैं लेकिन वे क्यों नहीं मरतीं ?"

नीरा हँस पड़ी, बोली—"वे मरेंगी कैसे ? पिछले जन्म की सूअरिया जो होंगी तभी तो इतनी औलाद पैदा करती हैं, लेकिन जो असली औरत होगी वह तीन साल में एक बच्चे की माँ बनेगी ।"

"शाब्बास ! तब तो मुझे इक्कीस साल तक प्रतीक्षा करनी पड़ेगी, लेकिन इससे पहले ही मर गया तो ? नहीं ! नहीं ! ऐसी लड़की से तो मैं शादी करूँगा ही नहीं नीरा वरना मेरे सब अरमान मेरी मौत के साथ चिता में भस्म हो जायेंगे ।"

"बड़े अजीब आदमी हैं आप भी, भला यह भी कोई अपने हाथ की बात होती है । मनुष्य के भाग्य में जो कुछ लिखा होता है वैसा ही होता है । मेरे और आपके चाहने से कुछ नहीं हो सकता ।"

"होगा कैसे नहीं !" मैंने कहा—"कर्म करो तो उसका फल जरूर मिलता है । तुम्हारे इस भाग्यवाद में मुझे तनिक भी विश्वास नहीं ।"

"हाय भगवान् आप जैसे दस-बीस सिर-फिरे लेखक इस दुनियाँ में पैदा हो जायँ तो बिचारी औरतों की तो मौत ही आ जाय । आखिर इन शेखचिल्ली के सपनों में क्या मजा आता है आपको ?"

"बस ये मत पूछो नीरा ? जिन्हें तुम शेखचिल्ली के सपने कहती हो उन्हीं पर सारी दुनियाँ स्थिर है अन्यथा कभी का अन्त हो गया होता

इसका। कोई भी कुँआरा युवक या युवती ऐसा न होगा जो अपने होने वाले जीवन-साथी के विषय में सुन्दर-सुन्दर कल्पनाएँ न किया करता हो दिन-रात। यही तो जीवन का रहस्य है जिसे कोई भी नहीं सुलझा सका।"

"लेखक और कवि शायद इसी मर्ज़ की दवा हैं।" नीरा ने कहा—"वे सुलझाते तो हैं ऐसी समस्याएँ ?"

"कोशिश जरूर करते हैं, लेकिन ये दुनियाँ वाले उन्हें बेवकूफ, पागल और सिरफिरे की उपाधि से जो विभूषित कर देते हैं। ये तो इज्जत रह गई है विचारों की।"

"इसीलिये तो कहती हूँ कि आप लेखक बनने का विचार छोड़ दीजिये।"

मैंने कहा—"सर्विस मिलने पर छोड़ दूँगा, फिलहाल तो नहीं छोड़ सकता। हाँ, तो शादी के विषय में क्या सोचा है तुमने ?"

"सोचा क्या है।" नीरा बोली—"न तो सात-सात साल में सात लड़के पैदा होंगे मुझसे और न शादी ही होगी।"

"अच्छा तो कितना 'पीरियड' चाहिये तुम्हें ?"

"इक्कीस साल !" कहकर मुस्करा गई वह।

मैंने कहा—"इक्कीस साल तो बहुत अधिक होते हैं नीरा। तुम चाहो तो बीच-बीच में एक साल का 'गैप' मिल सकता है तुम्हें। बस इससे अधिक रियायत नहीं की जा सकती तुम्हारे साथ। मेरे विचार से चौदह साल काफी हैं, बोलो क्या सोचा है ?"

"देखिये जी, मैं तो अपनी तरफ से भरसक कोशिश करूँगी लेकिन आप""""मुझे तो शर्म आती है ऐसी गंदी बातें करते हुए। भला ये भी कोई पूछने की बातें हैं। कहीं एकाध लड़की हो गई तो आप मुझे तलाक़ ही दे देंगे इसलिये बाबा मुझे आप से शादी-वादी नहीं करनी।" सिर हिलाती हुई बोली नीरा।

मैंने कहा—"बीच-कूच में एकाध लड़की चल जायगी, बस अब तो राजी हो। चलो, बहुत देर हो गई यहाँ बैठे-बैठे।"

और नीरा का हाथ पकड़कर मैं खड़ा हो गया।

मन्दिर में पहुँचकर शिव-मूर्ति के सामने हम दोनों हाथ जोड़कर बैठ गये। नीरा आँखें मूँदकर ध्यान-मग्न हो गई। मैं कभी उसकी ओर देखता तो दूसरे ही क्षण शिव-मूर्ति पर मेरी दृष्टि स्थिर हो जाती। अगरबत्ती की महक से मन्दिर का कोना-कोना सुवासित था। मूर्ति के आस-पास ढेर सारे बेलपत्र के पत्ते पड़े थे। गेंदे की कुछ फूल-मालाएँ शिवकंठ में सुशोभित थीं और दो-चार उनके सामने रखी थीं। तिपाई पर रखे हुए घड़े के पेंदे से टप-टप-टप-टप बूँदें गिर रही थीं मूर्ति के ऊपर। शिवजीके सामने संगमरमर का नादिया इस तरह बैठा था जैसे खाना खाते समय आदमी के सामने कुत्ता बैठ जाता है रोटी की आस लगाये।

नीरा की समाधि टूटी तो उसने एक अजीब भाव से मेरी ओर देखा—कितनी पवित्रता थी उसके उन नेत्रों में? गेंदे की एक फूलमाला उठाकर उसने मेरे गले में डालते हुए कहा—"आप शिवजी के सामने सच्चे हृदय से इस बात की सौगन्ध खाइये कि जीवन में कभी धोखा तो नहीं दोगे?"

मैं मुस्करा उठा नीरा के भोलेपन पर। एक माला मैंने भी उठा ली और नीरा के गले की ओर बढ़ाते हुए कहा—"नीरा, ईश्वर इस बात का साक्षी है कि मैं तुम्हें कभी धोखा नहीं दूँगा। दोनों साथ-साथ जियेंगे और साथ-ही-साथ मरेंगे। मौत भी हम दोनों को अलग-अलग न कर सकेगी।"

नीरा मेरी माला का दोनों हाथों से विरोध करती हुई बोली—"आप रहने दीजिये। लड़के नहीं पहनाया करते कभी।"

"ऐसा कौनसे धर्मशास्त्र में लिखा हुआ है कि पति पत्नी के गले में माला नहीं डाल सकता।"

"लिखा हुआ नहीं, अपने समाज की परम्परा है।"

"परम्परा की ऐसी-कम-तैसी !" मैंने कहा—"मैं लकीर-का-फकीर नहीं हूँ। मैं तो जरूर डालूँगा।"

"आप मन्दिर में गाली क्यों दे रहे हैं ?"

"आदत से मजबूर हूँ नीरा !"

"ऐसी भी क्या मजबूरी, कम-से-कम इस वक्त तो ऐसे बुरे शब्द मुँह से मत निकालो।"

"अच्छा, अब नहीं कहूँगा, लेकिन माला तो डालने दो मुझे ?"

"आप तो हर चीज की ज़िद करते हैं। नहीं मानते तो पहना दीजिये।"

मैंने धीरे से माला नीरा के गले में डाल दी। क्षण-भर को वह पुलकित हो गई जैसे तीनों लोकों का राज मिल गया हो उसे। अपनी दोनों हथेलियों के बीच उसका चेहरा दबाकर मैंने कहा—"बहुत सुन्दर लग रही हो इस समय तुम ?"

नीरा ने नीचे की ओर पलकें झुका लीं। लज्जा से उसका चेहरा सुर्ख हो गया लेकिन बोली नहीं वह।

तभी एक बूढ़ा-सा पुजारी अन्दर घुस आया। मैंने मुड़कर उसकी ओर देखा तो लगा जैसे उसकी आँखें अंगारे की तरह जल रही थीं। शायद भंग की गोली चढ़ा रखी थी उसने। कमर पर हाथ रखकर बड़े लहजे से बोला—"बहुत देर से देख रहा हूँ यह क्या नाटकबाजी हो रही है ?"

मैं फौरन खड़ा हो गया और गुस्से में आकर बोला—"आँख तो नहीं फूट गई हैं तेरी। दिखता नहीं क्या हो रहा है।"

"सब दिखता है मुझे। बोलो भगवान् की ये फूलमालाएँ क्यों पहनी हैं तुमने।"

"तेरे बाप की फूलमालाएँ हैं जो अकड़ रहा है खाँमखाँ। दो झापड़ के मारे आँख निकाल दूँगा तेरी।"

"बाबू जबान सम्हालकर बात करो।"

"जा ! जा ! जबान का बच्चा, मरना तो नहीं चाहता है मेरे हाथों से।"

"मैं तो क्या मरूँगा बाबू लेकिन ठीक-ठीक बता दो यह मामला क्या है।"

"अबे उल्लू के पट्ठे दिखता नहीं शादी हो रही थी ?"

"गाली क्यों देते हो, जानते नहीं मैं पुजारी हूँ यहाँ का, चुटकियों में उड़वा दूँगा तुम दोनों को।"

"अरे तेरी जात का पुजारी मारूँ तेरी का, साले एक चाँटे के मारे पानी माँग जायगा।"

"मैं कहता हूँ गाली मत बको वरना तुम्हारे हक़ में ठीक नहीं होगा।" पुजारी कड़ककर बोला—"बताओ यह चिड़िया कहाँ से उड़ा कर लाये हो। मैं सब सुन रहा था नदी के किनारे तुम्हारी बातें। अभी पुलिस को इत्तला करवाता हूँ।"

एक मिनट को नीरा घबरा गई। मेरी ओर देखकर बोली—"हे भगवान् यह क्या मुसीबत आ गई, आप ही चुप हो जाइये न।"

"तुम चिंता मत करो नीरा। औरों के टुकड़ों पर पलने वाले ऐसे कुत्तों से मैं कभी नहीं डरता। ये सिर्फ भूँकने वाले कुत्ते हैं, काटने वाले नहीं।"

"बकवास बन्द करो !" पुजारी फिर दहाड़ा।

मैंने पास ही पड़ा हुआ घड़ियाल बजाने का लोहे का डंडा उठाकर जो खींचकर मारा पुजारी की खोपड़ी पर तो खून की तिल्ली छूट गई और वह हाथों से सर थामकर बैठ गया दीवाल के सहारे। इससे पहले कि वह शोर मचाता, मैंने तीन-चार डंडे और दिये उसकी चिकनी खोपड़ी पर, फिर तो वह लम्बा-लम्बा लेट गया जमीन पर बेहोश होकर। मन्दिर का फर्श भी रक्त से लाल हो गया।

हम दोनों ने जल्दी-जल्दी मालाएँ उतारकर वहीं फर्श पर पटक दीं और मन्दिर से बाहर आ गये। इधर-उधर झाँककर देखा लेकिन काफी दूर तक कोई भी व्यक्ति न दिखा तो मैंने आगे बढ़कर मन्दिर का दरवाजा बन्द कर दिया और कुण्डी लगाकर ताँगा स्टेण्ड की ओर चल दिये करील की सुनसान झाड़ियों में होते हुए। सोचता जा रहा था कि जब तक साले को होश आयेगा तब तक तो हम आगरा शहर की चहल-पहल में ऐसे खो जायेंगे कि वह तो क्या उसका बाप भी नहीं ढूँढ सकेगा।

ताँगा स्टेंड से एक अच्छा-सा ताँगा सिकन्दरा तक के लिये पकड़ा और वहाँ से बस में बैठकर होटल वापस आ गये। हारी-थकी सी नीरा आते ही पलंग पर गिर गई और मैं कुर्सी खिसकाकर उसके पास बैठ गया।

नीरा चिंतित-सी होकर बोली—"हाय कहीं मर नहीं गया हो ?"

"अरे मर जाने दो साले को।" मैंने लापरवाही से कहा—"एक ऐसा ही पुजारी मुझे आबू पहाड़ पर भी मिला था। कितने नीच होते हैं ये कमीने। ओफ़ ! मेरा बस चले तो एक-एक को बीनकर मार डालूँ।"

नीरा ने बाएँ हाथ से चश्मा उतारकर लेटे-ही-लेटे साड़ी के आँचल से मुँह का पसीना पोंछा और निराश-सी होकर बोली—"मरे ने शुभ काम में पहले से ही अपशकुन कर दिया। आगे चलकर न जाने क्या होगा ?"

"होगा क्या ? आराम से जिंदगी गुजरेगी हँसते-गाते। ऐसी घटनाएँ तो होती ही रहती हैं जीवन में। इस तरह एक-एक के विषय में सोचा जाय तो सोचने का ही हो गया इन्सान तो ?" मैंने नीरा को समझाया।

वह बैठती हुई बोली—"अच्छा, अब जाने भी दीजिये, भाग्य में लिखे को तो कोई मिटा नहीं सकता, जो होगा, देखा जायगा। अब

खाना-वाना खाना है या ऐसे ही बैठे रहोगे। एक बजने को आ रहा है।"

मैंने पहाड़ी नौकर को बुलाकर दो थाली खाना लाने को कहा तो नीरा बोली—'आप अपने लिये ही मँगा लीजिये; इस समय मुझे भूख नहीं है ज़रा भी ?"

"क्यों ?"

"ऐसे ही जी नहीं कर रहा खाने को।"

"खाना देखकर जी करेगी या पहले से ही मना करने लगी।"

"मैं सच कहती हूँ ज़रा भी नहीं खाऊँगी, आप बेकार क्यों ज़िद कर रहे हैं।"

"अच्छा तुम मत खाना, मैं ही खा लूँगा तुम्हारी थाली का भी।" नौकर दो थाली लेने चला गया नीचे।

थोड़ी देर तक हम दोनों चुपचाप बैठे रहे। नीरा माथे पर हाथ रखे कुछ सोच रही थी और मैं देख रहा था नीरा के उतरे हुए चेहरे की ओर।

नौकर खाना लाया और मेज पर रखकर चला गया।

मैंने कहा—"ये सोचना बन्द करो नीरा, खाना ठंडा हो रहा है।"

"मैंने एक बार कह दिया कि नहीं खाऊँगी फिर भी आप जिद कर रहे हैं ?"

"अच्छा इस समय खालो : शाम को मत खाना भले ही। जल्दी करो मुझे जाना है अभी घर·········।"

"क्या करोगे जाकर ?"

"करना तो कुछ नहीं है लेकिन मकान-मालिक न जाने क्या सोचेगा। रात भी नहीं जा सका और अब ·····।"

"·············मैं यहाँ अकेली रह जाऊँगी फिर······"

"अरे एकाध घण्टे में आता हूँ चक्कर लगाकर तुम तब तक आराम करना।"

"अरे नहीं आये तो ?"

"तुम्हारा क्या ख़याल है ?"

"मेरा ख़याल है कि फिर आप वापस आने वाले नहीं।"

"अभी से मुझ पर इतना अविश्वाश करने लग गईं।" मैंने हँसकर कहा—"फिर तुम्हीं बताओ इसका क्या इलाज हो सकता है।"

नीरा बोली—"मैं बताऊँ, लेकिन आप मानेंगे तब न......।"

"भला तुम्हारी बात नहीं मानूँगा तो किसकी मानूँगा; बोलो क्या कहना चाहती हो ?"

"मैं चाहती हूँ कि अभी तो आप यहीं आराम करिए। शाम को होटल का हिसाब करके मुझे अपने घर ले चलिये। इस तरह यहाँ रह-कर बहुत रुपये बर्बाद हो जायेंगे।"

"लेकिन..... लेकिन नीरा मैं अभी नहीं ले जा सकता तुम्हें अपने घर क्योंकि......।"

"बस ! बस ! रहने दीजिये, यह तो मैं पहले से ही जानती थी कि आप क्या जवाब देंगे।"

"ओफ़ो तुम तो नाराज हो गईं जरा-सी बात पर। कम-से-कम पूरी बात तो सुन लिया करो या पहले से ही रूठना शुरू कर देती हो। तुम्हें पता है दो-चार दिन में भाई साहब आने वाले हैं। उनकी चिट्ठी आई थी परसों ही। इसलिये सोच रहा हूँ कि चार-छः दिन यहीं रुका जाय। जब वे वापस चले जायेंगे तो अपन दोनों घर पड़े-पड़े मस्ती मारा करेंगे। मैं नहीं चाहता कि उन्हें या घर के किसी और व्यक्ति को मेरी इस आकस्मिक खुराफात का पता चल जाय वरना मेरी खोपड़ी पर एक भी बाल साबुत नहीं बचेगा।"

"इसका मतलब है आप डरपोक भी हैं।" नीरा ने कहा—"कुछ देर पहले तो बड़ी ऊँची-ऊँची बातें कर रहे थे जैसे दुनियाँ में किसी से डरते ही नहीं—'तबियत आयेगी तब शादी कर लूँगा, चाहे जिस जाति

की लड़की हो ! घर वाले इस मामले में कुछ नहीं कह सकते' और न जाने क्या-क्या ऊट-पटांग कह रहे थे। अब थोड़ी ही देर में भाई साहब का डर लगने लग गया जैसे आपका कोई व्यक्तित्व ही नहीं। बिना पेंदे के लोटे की तरह कभी इधर लुढ़कते हो कभी उधर। आखिर लेखक और कवि जो ठहरे। कल्पना आपकी प्रेयसी है जो हमेशा आपके साथ रहती है। उसके लिए कुछ खर्चा नहीं करना पडता आपको। जब चाहते हो अपने पास बुला लेते हो। थोड़ी देर घुल-मिलकर बातें कर लेते हो और छुट्टी दे देते हो उसे। समाज और घरवाले कुछ नहीं कह सकते उस मामले में, लेकिन मैं रहूँगी तो आपको सभी बातों की चिंता करनी पड़ेगी—खर्चे के लिये रुपये कमाकर लाने पड़ेंगे, घर-गृहस्थी का सामान भी लाना पड़ेगा, घरवालों की फटकार भी मिलेगी, समाज वालों के व्यंग भी सुनने पड़ेंगे और भी न जाने क्या-क्या होगा। इसलिये आप क्यों मेरे चक्कर में पड़ते हैं बिना बात। कुछ लेना न देना एक मुसीबत और आपके सर पर आ जायगी। जब 'टेंपरेरी' पत्नियों से ही काम चल जाता है तो मेरे जीवन से खिलवाड़ करने की कोशिश क्यों कर रहे हैं आप? बोलिये! चुप क्यों हैं? हाय! न जाने कितनी भोली-भाली लड़कियों को ऐसे सुनहले सपने दिखा-दिखाकर उन्हें जीवन-भर रोने के लिये विवश कर दिया होगा आपने। क्या इसीलिये स्टेशन पर बैठा करते हो कि भोली-भाली लड़कियों को 'मिस गाइड' करो, उनकी मासूमियत का नाजाइज फायदा उठाओ और मुरझाई हुई कली की तरह उन्हें कुचलकर फेंक दो। यही आपने पढ़ा होगा एम० ए० तक, क्यों? मैं कुछ गलत तो नहीं कह रही हूँ?"

"तुम और गलत कहने लगो, ऐसा तो मैंने अभी तक नहीं सोचा, और न कभी सोचने की कोशिश ही करूँगा। और जो कुछ चाहो कह लो, मैं कभी बुरा नहीं मानूँगा। बुरा भी लगेगा तो मैं क्या बिगाड़ सकता हूँ तुम्हारा। हाँ, मैंने तुम्हें 'मिस गाइड' जरूर किया है और न जाने कितनी तुम-जैसी लड़कियों के जीवन के साथ खिलवाड़ किया है

और शायद आगे भी इसी तरह करता रहूँगा क्योंकि मेरे अंदर नैतिकता जैसी कोई चीज नहीं है। कितना 'मॉरली डिग्रेडेड' हूँ मैं! तुम्हारे साथ जो नीचता का व्यवहार मैंने किया है उसके लिये मुझे सख्त अफसोस है और आशा करता हूँ तुम मुझे क्षमा जरूर कर दोगी। काश कि मेरे हृदय में जो कुछ है उसे कोई समझने की कोशिश करता तो ये बातें कभी उसके होंठों पर न आतीं जिन्हें कहते हुए तुम्हें तनिक भी हिचकिचाहट नहीं हो रही!"

मैं नीचा सर झुकाए खाना खाता रहा। जब तक वह समाप्त नहीं हो गया, मैंने एक बार भी नीरा की ओर आँख उठाकर न देखा। इस बीच लगातार वह मेरी ओर ही देखती रही गुमसुम! थाली उसकी ज्यों-की-त्यों रखी थी लेकिन उसने एक टुकड़ा भी नहीं तोड़ा था उसमें से। खाना खाकर मैं पलंग पर लेट गया चादरा तानकर चुपचाप नीरा से बिना बोले। उससे मैंने खाना खाने के लिए एक बार भी नहीं कहा। लेटे-लेटे जब नींद-सी आने लगी तो किसी की सिसकियाँ सुनकर मैंने चादरा हटा दिया मुँह पर से। नीरा बैठी-बैठी आँचल में मुँह छिपाये रो रही थी। खाना अब भी ज्यों-का-त्यों रखा था उसके सामने। पलंग से उठकर मैं कुर्सी पर आ बैठा।

"नीरा तुम रो क्यों रही हो?" मैंने ही पूछा पहले।

लेकिन उत्तर में सिसकियाँ और तेज हो गईं।

मैंने फिर कहा—"अगर मेरी कोई बात तुम्हें बुरी लगी हो तो माफी चाहता हूँ नीरा लेकिन इस तरह रोओ मत।"

अबकी बार वह सिसकती हुई बोली—"माफी तो मुझे माँगनी चाहिये आपसे। गलती मेरी है। मैंने ही आपको न जाने क्या-क्या बुरा-भला कहा था। हाय! मैं कितनी बुरी हूँ जो जी में आता है कह जाती हूँ बिना सोचे-समझे। बेकार मैंने नाराज़ किया आपको इतनी देर तक।"

"लेकिन मैं तो नाराज़ नहीं हूँ।" उसके मुँह पर से आँचल हटाते

हुए मैंने कहा—"देखो मैं कितना खुश हूँ लेकिन यह खाना क्यों नहीं खाया अभी तक ?"

"ऐसे ही मुझे भूख नहीं है।" भीगी पलकों से नीचे की ओर देखती हुई वह बोली—"आप और खा लीजिए न।"

"अपनी टंकी फुल हो गई है अब ज़रा स्टेशन की तरफ जा रहा हूँ।"

"किसलिये जा रहे हो ?"

"ऐसे ही तुम-जैसी कोई मासूम लड़की मिल जायगी तो उसे 'मिस गाइड' करके लाऊँगा।"

"रुकिये थोड़ी देर, मैं भी चलती हूँ खाना खाकर।"

"तुम क्या करोगी वहाँ ?"

"ऐसे ही मुझे भी आप-जैसा कोई सीधा-साधा लड़का 'मिस गाइड' करके लाना है।"

"तुम क्या करोगी उस लड़के का ?"

"आप क्या करेंगे उस लड़की का ?"

"मैं तो प्यार करूँगा उससे……।"

"तो मैं भी प्यार करूँगी उससे……।"

"नहीं! नहीं! मैं तो किसी मोटी तोंद के लाला को हजार-दो-हजार में बेच दूँगा उसे, बोलो तुम क्या करोगी ?"

"मैं भी किसी को बेच दूँगी……।"

"अरी कोई उस्ताद मिल गया तो उलटा तुम्हें ही बेचकर खा जायगा। यह आगरा है आगरा, दिल्ली के धोखे में मत रहना।"

"अच्छा बाबा नहीं जाऊँगी अब चुपचाप सो जाओ।"

मैं फिर से चादरा तानकर पलंग पर लेटता हुआ बोला—"लेकिन तुम कहीं भाग मत जाना मेरे सो जाने के बाद।"

"आप फिर रुलाने की-सी बात कर रहे हैं।"

"इसलिये कि तुम्हारा मुँह छिपाकर रोना मुझे बहुत अच्छा लगता

है।" मैंने चिढ़ाते हुए कहा—"एक बार जोर से रोकर दिखाओ जरा। बहुत अच्छी 'प्रेक्टिस' है तुम्हें रोने की।"

"देखिये मुझे चिढ़ाइये मत वरना नाराज़ हो जाऊँगी।"

"लेकिन मुझसे मनाना भी तो आता है। तुम रूठ जाओगी मैं मना लूँगा। हाँ, अगर मैं रूठ गया तो तुम तो क्या दुनिया की सारी लड़कियाँ भी मिलकर मुझे खुश नहीं कर सकतीं, इस बुरी तरह नाराज होता हूँ मैं। इसलिये 'प्लीज नोट इट फार फ्यूचर' क्योंकि तुम्हें मेरे साथ जीवन भर रहना है।" मैंने कहा—"अच्छा अब सो सकता हूँ ?"

"ओ यस यू मे स्लीप।" नीरा मुस्कराती हुई बोली अंग्रेजी में।

मैंने कहा—"ओ० के० माइ डार्लिंग ·····।"

"नो मेंशन प्लीज़।"

[४]

"तुमने कभी फतहपुर सीकरी की शाही इमारतें देखी हैं नीरा ?" दूसरे दिन सुबह खाना खाते वक्त सामने बैठी हुई नीरा से अनायास ही मैंने जब यह प्रश्न किया तो वह आँखों की पुतलियों को एक अजीब अंदाजों से नचाती हुई बोली—"जी, अभी तक तो नहीं देखीं लेकिन जीवन में एक बार भारत की सम्पूर्ण ऐतिहासिक जगहों को जरूर देखूँगी घूम-घूमकर।"

"अब तक कितने 'हिस्टारीकल प्लेसेज़ विज़िट' कर चुकी हो तुम ?" मैंने दूसरा प्रश्न किया।

नीरा शायद कुछ सोचकर हँस पड़ी, बोली—"अभी तक तो मैंने सिर्फ दिल्ली की इमारतें ही देखी हैं। बाहर जाने का कभी अवसर ही नहीं मिला, इसलिये देखती भी तो कैसे ? दूसरी बात घूमने के लिये पैसे की अफ़रात होनी चाहिये, सो वह थी नहीं माँ-बाप के पास। कहने का

मतलब है कि लक्ष्मीजी हमेशा से ही नाराज रही थीं मेरे घर वालों से और अब तो आप जानते हैं कि मैं स्वतंत्र हो गई हूँ माँ-बाप के बंधनों से। जहाँ जी चाहेगा वहीं रहूँगी। वह तो परमात्मा ने मुझे पख नहीं दिये वरना कोयल की तरह उड़ती फिरती अमराइयों में कू-कू करती हुई......।"

"तो यहाँ से भी कहीं दूसरी जगह उड़ जाने का इरादा है क्या ?" मैंने उसकी बात काटते हुए कहा।

विनोद करती हुई बोली वह—"जी, अब कहाँ जाऊँगी उड़कर पंख तो मेरे कट ही गये। हाँ, यह शरीर जरूर बच गया है जो मैंने आपके हवाले कर दिया है।"

"किसने काट लिये हैं तुम्हारे पंख ?"

"मैंने स्वयं ही कैलाश में शिवजी के सामने काटकर आपके लगा दिये हैं।"

"ओह ! तब तो मैं जरूर उड़ जाऊँगा उनके सहारे किसी दिन ?"

"मैं उड़ने दूँगी तभी न।" नीरा मुस्कराती हुई बोली—"जाल जो फैला रखा है मैंने आपके ऊपर। लेकिन मैं भी कितनी बेरहम हूँ कि अपने फँसे हुए पंछी को अभी तक दाना नहीं दिया। सोचती हूँ कि दाना मिल जायगा, तो इस चमन में फिर नहीं रुकने का वह। इसलिये खूब तड़पा-तड़पाकर मारूँगी पंछीजी ! इस खयाल में मत रहिये कि जाल को ही लेकर उड़ जाऊँगा किसी दिन। मैं हर समय आपकी निगरानी रखती हूँ।"

"बाप रे, तब तो तुम बड़ी जालिम चिड़ीमार हो। पंछी को दाना नहीं दोगी तो वह कितने दिन जिंदा रहेगा। या तो वह तड़प-तड़पकर मर जायगा और मरा नहीं तो किसी दिन चिड़ीमार को सोता हुआ छोड़ कर पिंजड़े से उड़ जरूर जायगा कहीं दूसरी जगह दाने की तलाश में.......फिर नहीं आने का कभी वह लौटकर।"

"लेकिन चिड़ीमार रात को भी नहीं सोयेगा तब ?"

"तब तो कोई दूसरी तरकीब सोचनी पड़ेगी पंछी को · ।" मैंने मुँह में रोटी का टुकड़ा रखते हुए कहा—"चिड़ीमार बहुत जबरदस्त दीखता है ।"

"जाइये पक्षीराज गरुणजी जल्दी-जल्दी भोजन भक्षण करिए क्योंकि सरस्वतीजी को शीघ्र ही आपके ऊपर सवार होकर मृत्युलोक का 'इंस्पेक्शन' करने जाना है, वे आपकी प्रतीक्षा कर रही हैं सामने बैठी-बैठी ···· ।"

"ओ ये बात है ।" मैंने कहा—"तब तो आप उनसे कह दीजिये कि जल्दी ही खा-पीलें जो कुछ खाना है वरना मृत्युलोक में खाना तो दूर रहा मीठा पानी भी नहीं मिलता । जानती हो इसीलिये चारसौ साल से वह वीरान पड़ा हुआ है । वहाँ की भग्न प्राचीरों के लाल-लाल टूटे-फूटे पत्थर पिछले चारसौ वर्ष की दर्द-भरी दास्तान कहते हुए जान पड़ते हैं······।"

"लेकिन इस वक्त वे कुछ नहीं खायेंगी क्योंकि उन्हें ज़रा भी भूख नहीं है वहीं कुछ मिल गया तो······?"

"······वहाँ भैंस के अंडे मिलते हैं, खा लोगी ?"

"आप तो ऐसी उलटी-सीधी बात करते हैं । भला भैंस भी अंडे देती है कहीं ?"

मैंने हँसकर उसकी ओर देखा, बोला—"अभी-अभी पिछले हफ्ते देवलोक में ब्रह्मा, विष्णु और महेश तीनों ने एक गुप्त मीटिंग करके यह प्रस्ताव पास किया है कि सन् उन्नीस सौ इकसठ के बाद मृत्युलोक में जितने भी प्राणी हैं उन सबकी मादाएँ सिर्फ अंडे ही दिया करेंगी; क्योंकि बच्चे देने में उन्हें तकलीफ उठानी पड़ती है, अंडे ज़रा आसानी से हो जाते हैं ।"

"हाय ! तब तो औरतों के भी ·····।" और नीरा ने लजाकर आँचल में मुँह छिपा लिया ।

"क्यों नहीं ?" मैंने उसी तरह हँसते हुए कहा—"औरतें भी तो एक प्रकार की मादा जानवर हैं। इसलिये जो नियम औरों पर लागू होगा वह औरतों पर भी होगा। इसमें रिआयत की कौन-सी बात है, लेकिन नीरा तुम और किसी से मत कहना यह बात। इसे 'टाप सीक्रेट' ही रखना है। अगर कहीं सारी दुनियाँ की औरतों को पता चल गया तो वे भगवान् के यहाँ 'डेपूटेशन' लेकर पहुँच जायेंगी। फिर मेरी खैर नहीं नीरा। सर पर इतने जूते पड़ेंगे कि हरी-भरी खोपड़ी पिटते-पिटते डामर की तरह चमकने लगेगी।"

नीरा उसी तरह हँसती हुई बोली—"लेकिन मैं कहती हूँ कि ब्रह्मा, विष्णु और महेश तीनों की 'कान्फीडेंशियल' बातें आपको कैसे पता चल गईं ?

"यही तो बहुत बड़ा राज है नीरा तुम इसे नहीं समझ सकतीं।" मैंने उसके चेहरे पर आँखें गड़ाकर कहा—"बात असल में यह है कि एक दिन मैं रात को सो रहा था गहरी नींद में कि अचानक मेरा जीव शरीर से निकलकर आकाश की ओर उड़ने लगा और उड़ता-उड़ता वह एक ऐसे नगर में पहुँचा जिसकी विचित्रता देखकर मेरी आँखें चौंधियाँ गईं। आह ! नगर क्या था ? बिलकुल पेरिस की तरह जगमगा रहा था। ऊँचे-ऊँचे गगनचुम्बी प्रासाद और उनके बीच से दौड़ती हुई चौड़ी चौड़ी सुनहरी चमचमाती जयपुर की-सी सड़कें ? क्या बताऊँ नीरा मेरी तो दृष्टि ही नहीं ठहरती थी उन पर। सड़कों के दोनों ओर कई-कई मंजिलों ऊँची सफेद दूध में घुली हुई जैसी इमारतें थीं। कुछ भिन्न-प्रकार की रंग-बिरंगी पोशाकों में वहाँ के लोग सड़कों पर घूम रहे थे। उनमें सब-के-सब युवक और युवतियाँ ही थीं। बूढ़ा और बच्चा तो वहाँ एक भी नहीं दिखाई दिया मुझे। यह देखकर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ और सड़क के किनारे चुपचाप खड़ा होकर उनका आना-जाना बड़े ध्यान से देखता रहा। मेरे सामने से गुजरते हुए लोग एक बार मेरी ओर देखते और आगे बढ़ जाते लेकिन उनमें से कोई बात नहीं करता था मुझसे।

मज़े की बात तो यह थी कि वे आपस में भी बात नहीं कर रहे थे। ऐसा लगता था जैसे संगमरमर की बहुत सारी मूर्तियाँ इधर-से-उधर चल रही थीं किसी यंत्र के सहारे। उनमें से अधिकांश के सरों पर चमचमाते स्वर्ण-मुकुट बँधे हुए थे। युवतियों के मुकुट पुरुषों की अपेक्षा बहुत छोटे थे जो बहुत ही भले लगते थे। सहसा एक बहुत ही सुन्दर युवती मेरे सामने आकर खड़ी हो गई। सर से पैर तक मुझे संदेह की दृष्टि से देखती हुई बड़ी सुरीली आवाज़ में बोली—"तुम कहाँ रहते हो ?"

"जी···जी मैं यहीं रहता हूँ।"

"झूठ बोलते हो।" वह कुछ कठोर स्वर में बोली—"तुम्हारी सूरत तो यहाँ के आदमियों से नहीं मिलती। बोलो किस लोक से आये हो ?"

"जी, माफ़ करना मैं पृथ्वी लोक से आया हूँ, गलती हो गई मुझसे।" मैं कुछ विनम्र होकर बोला।

उसके लाल-लाल रक्तिम होंठों पर मुस्कराहट थिरक उठी। होंठ क्या थे ? ऐसा लगता था जैसे रेशम की दो सुर्ख डोरियाँ एक के ऊपर एक रखी थीं, बोली—"जानते हो यहाँ झूठ बोलने वाले आदमी को मृत्युदण्ड मिलता है।"

उसकी यह बात सुनकर मेरे हाथ-पैर फूल गये। गिड़गिड़ाता हुआ बोला—"जी, इस बार क्षमा चाहता हूँ भविष्य में ऐसी भूल नहीं करूँगा। लेकिन हमारे पृथ्वी लोक में तो झूठ बोलने वाले आदमियों का ही बोल-बाला है। ऐसे लोग ही वहाँ मौज उड़ा रहे हैं। राजनीति में भी उन्हीं लोगों की चलती है। जहाँ उन्होंने जनता की भीड़ में खड़े होकर उलटी-सीधी, झूठी-सच्ची बातें मिलाकर लेक्चरबाजी झाड़ दी, समझ लो दूसरे दिन ही वह कहीं-न-कहीं मिनिस्टर या एम० पी० बन जाता है और खुदा-न-खास्ता इनमें से कोई पदवी नहीं मिली तो एम०एल० ए० की जगह

तो कहीं गई नहीं उसके लिये। ऐसी अंधेरगर्दी चल रही है इस पृथ्वी लोक में ' ।"

युवती भौं सिकोड़कर बोली—"ये क्या कह रहे हो ? हमारी समझ में कुछ नही आता ?"

"जी, बिलकुल तो विशुद्ध हिन्दी में बात कर रहा हूँ फिर भी आपकी समझ में नहीं आता ?"

"नहीं ! नहीं ! मेरे कहने का तात्पर्य है कि ये मिनिस्टर, एम० पी० और एम० एल० ए० क्या मुसीबत होती है ?"

"तो आप अंग्रेजी बिलकुल नहीं जानतीं ?" मैंने आश्चर्य से उसकी ओर देखा।

वह बोली—"यह कौनसे जानवरों की भाषा है ? हमारे देवलोक में तो कोई नहीं जानता इसे।"

इसकी बात पर मैं जोर से हँस पड़ा, बोला—"ये फिरंगियों की भाषा है ?"

"फिरंगी क्या होते हैं ?" वह बोली—"क्या रंग-बिरंगे आदमियों को फिरंगी कहते हैं ?"

"जी नहीं।" मैंने उसे समझाया कि सात समुन्दर पार एक टापू में जानवरों की एक अजीब किस्म रहती है जो बड़े ही खूँखार होते हैं, इसीलिये हमारी भाषा में उनका नाम फिरंगी रख छोड़ा है।

"ओ ! तो अब समझी कि पृथ्वीलोक के जानवरों की एक किस्म है फिरंगी ?"

"जी हाँ ! जी हाँ !" मैंने उसकी हाँ-में-हाँ मिलाते हुए कहा—"लेकिन मुझे बड़ी जोर से भूख लग रही है इस समय, क्या आप कुछ खिला सकती हैं मुझे ?"

"ओ ! क्यों नहीं, चलो मेरे साथ।"

"कहाँ तक चलना होगा आपके साथ मुझे।" उसकी बगल में चलते ए मैंने पूछा।

एक बार मुस्कराकर उसने मेरी ओर देखा और बोली—"मेरे शीशमहल में। वहीं तुम्हें खाने को जो चाहोगे वही मिलेगा। बोलो क्या चीज पसंद है तुम्हें ?"

मैंने कहा—"खाने को तो मैं सब कुछ खा लेता हूँ लेकिन मिठाइयाँ मुझे विशेष रूप से पसंद हैं। उनमें से रसगुल्ले, बालूमाई, रबड़ी, गुलाब-जामुन, पेड़े, जलेबी, गाजर का हलुआ, कलाकंद, बर्फी और बकरे का माँस··· ।"

"एं, बकरे का माँस भी खाते हो। इसका मतलब है तुम राक्षस हो।"

"जी नहीं ! हमारे पूर्वज रावण जरूर राक्षस थे लेकिन हम लोगों ने बाद में अपने को मनुष्य योनि में 'कनवर्ट' कर लिया है।"

"अच्छा कोई बात नहीं। चले आओ तुम मेरे साथ-साथ।"

कहती हुई वह मुझे एक ऐसे महल में ले गई जिसकी सारी दीवालें रंग-बिरंगे काँच की बनी हुई थीं। कमरों में हजारों वाट् के बल्ब जैसा प्रकाश विकीर्ण करने वाली कई जगमगाती हुई गोल-गोल चीजें रखी थीं जिनका प्रकाश बहुत ही सफेद और आँखों को शीतलता प्रदान करने वाला था। बाद में जो मैंने उससे पूछा तो पता चला कि वे सूर्य मणियाँ थीं।

मैं जाकर एक गुदगुदे पलंग पर लेट गया और वह मेरे पास ही एक कुर्सी जैसी चीज पर बैठ गई। थोड़ी देर में एक युवती को बुलाकर उसने खाने का सामान मँगाया। तरह-तरह की मिठाइयों से भरी हुई कई प्लेटें उसने मेरे सामने लाकर रख दीं तो मैं उछल कर बैठ गया पलंग पर और आँखें गड़ा-गड़ाकर उन प्लेटों की ओर देखने लगा।

दूसरे ही क्षण मेरी दृष्टि उस देवी की ओर गई तो वह मुस्करा

रही थी मेरी ओर देख-देखकर। पल-भर के लिये मैं झेंप गया तो वह बोली—"खाइये, खाइये देख क्या रहे हो ?"

मैंने एक मिठाई को हाथ में लेते हुए कहा—"लेकिन मैं तो इनमें से एक का भी नाम नहीं जानता। हमारे यहाँ तो ऐसी मिठाइयाँ नहीं होतीं।" और जैसे ही मैंने उसे अपने मुँह में रखा तो बिना होंठ चलाए ही वह गले से नीचे उतर गई। कितना अच्छा स्वाद था उसका ? झूम-झूमकर मिठाइयाँ खाने लगा मैं।

"खाते-खाते मैंने पूछा उससे—"क्यों भई, इस शहर का नाम क्या है ?"

"इंद्रपुरी।" उसने मुस्कराकर उत्तर दिया।

मैंने कहा—"वही इन्द्रपुरी तो नहीं जहाँ देवराज इंद्र रहते हैं ?"

"हाँ ! हाँ ! वही है।"

"तब तो यहाँ मेनका, उर्वशी और रम्भा, जैसी अप्सराएँ भी रहती होंगी ?"

"जी, मेरा ही नाम उर्वशी है।" युवती ने अपने वक्ष पर हाथ रखते हुए कहा।

उसका नाम सुनकर तो मेरी रूह-रूह खिल उठी। मारे खुशी के उछल पड़ा मैं, बोला –"तब तो आपका नृत्य जरूर देखूँगा मैं। अगर आपको तकलीफ न हो तो ज़रा नाचकर दिखाइये न ?"

"यह कोई नाचने की जगह नहीं है। नाच देखना ही है तो संन्ध्या को आप मेरे साथ रथ में बैठकर इन्द्र-सभा में चलना। वहीं बहुत-सी अप्सराओं के साथ मेरा भी नाच होगा।"

वह कुछ रुककर फिर पूछने लगी—"क्या आपके यहाँ भी नर्तकियाँ होती हैं ?"

"क्यों नहीं, भारत देश में तो नृत्य-कला अपनी चरम सीमा पर पहुँची हुई है।"

"तो आप भारतवर्ष के रहने वाले हैं ?"

"जी हाँ ! क्या आपने उस देश का नाम सुना है ?"

"हाँ, मैनका ने एक दिन इस देश के विषय में बताया था कि वहाँ के ऋषि लोग बड़े बुरे होते हैं।"

"क्या मतलब ?" मैंने पूछा—"हमारे यहाँ के ऋषि और बुरे होते हैं। कहीं उर्वशीजी आपको ग़लतफ़हमी तो नहीं हो गई।"

"नहीं ! नहीं ! बात असल में यह हुई कि एक बार देवराज इंद्र ने मैनका को ऋषि विश्वामित्र का तप डिगाने के लिये भारत-भूमि पर भेजा था और यह आदेश दिया था कि उनकी तपस्या भंग करके वापस इंद्रपुरी आ जाना। लेकिन परी मैनका उस महात्मा के चक्कर में ऐसी पड़ी कि वापस इंद्रपुरी लौटने का ध्यान ही नहीं रहा उसे और उस महात्मा के साथ साल-भर तक मस्ती मारती रही। जब मरी के पेट रह गया तो एक लड़की को वहीं जन्म देकर तपोवन में पटककर भाग आई। इधर देवराज इन्द्र को जब इसका पता चला तो वे मैनका पर बहुत क्रोधित हुए और अपने अनुचरों को आज्ञा दी कि जहाँ-कहीं भी भारतवर्ष का कोई व्यक्ति मिले तो फौरन ही उसकी बलि चढ़ा दो, इसलिये आप……।"

"नहीं ! नहीं ! उर्वशीजी आप मुझे बचा लीजिये वरना मेरी पत्नी वहाँ प्रतीक्षा करते करते मर जायगी। मैं आपका आभारी हूँगा।"

"आप घबराइये नहीं।" उर्वशी मुस्कराती हुई बोली—"देवराज इंद्र का ऐसा कोई आदेश नहीं। वह तो मैंने सिर्फ आपको डराने के लिये कहा था।"

"तो क्या आप मुझे निरा डरपोक समझती हैं ?"

"नहीं ! नहीं ! आप तो बहुत साहसी हैं, भला डरपोक आदमी भी आ सकता था इंद्रपुरी में।"

अपनी प्रशंसा उसके मुँह से सुनकर मैं मन-ही-मन न जाने कितना प्रसन्न हुआ। मिठाई का एक टुकड़ा अपने मुँह में रखते हुए मैंने पूछा—

"क्यों उर्वशीजी क्या आप यह बताने का कष्ट करेंगी कि सब-के-सब तरुण व्यक्ति ही क्यों हैं यहाँ ? बूढ़ा या बच्चा तो एक भी दिखाई नहीं देता ?"

पहले तो वह मुस्कराई फिर बोली—"यहाँ बूढ़े, बच्चों का क्या काम ? भला युवावस्था को छोड़कर बूढ़ा या बच्चा बनना कौन पसंद करता है। दिन-रात यौवन के नशे में चूर रहना यही तो इंद्रपुरी के लोगों की विशेषता है।"

"बड़ी अजीब बात है।" मैंने आश्चर्य से पूछा—"क्या आप लोगों के बच्चे नहीं होते ?"

"जी नहीं, यहाँ की औरतें बच्चे नहीं देतीं।"

"... तो क्या 'डाइरेक्टर' युवक-युवतियाँ पैदा होते हैं यहाँ ?"

खिलखिलाकर हँस पड़ी उर्वशी मेरी बात पर, बोली—"आपके भारतवर्ष की औरतों की भाँति यहाँ की औरतों को यह प्रजनन-क्रिया पसंद नहीं इसलिये......।"

"· ओ अब समझा, तो यहाँ की स्त्रियों ने मिलकर हड़ताल कर रखी है। सचमुच यह बड़े आश्चर्य की बात है उर्वशी जी। क्या आप लोगों के हृदय में वात्सल्य-प्रेम का सागर हिलोरें नहीं लेता ? क्या आप लोगों को बच्चों की क्रीड़ाएँ आनन्द नहीं देतीं ? क्या आपके मन में माँ बनने की अभिलाषा उत्पन्न नहीं होती ? अगर हाँ, तो ऐसा क्यों करती हैं यहाँ की स्त्रियाँ ? इसका मतलब है कि ईश्वर ने सृष्टि की सारी औरतों को एकसा मनोविज्ञान नहीं दिया। हमारे यहाँ तो ऐसा नहीं होता। अगर कोई स्त्री हमारे यहाँ निःसंतान रह जाती है तो लोग उसे घृणा की दृष्टि से देखते हैं। कोई उसका मुँह तक देखना पसन्द नहीं करता। अगर सवेरे-ही-सवेरे उसकी सूरत दिखाई दे जाय तो दिनभर रोटी नसीब नहीं होती—ऐसा लोगों का विश्वास है और पास-पड़ोस की स्त्रियाँ उसे बाँझ, निपूती, हिजड़ी, डाइन, चुड़ैल और छिनाल न जाने

किन-किन नामों से संबोधित करती हैं। अपने बच्चों को उनके पास तक नहीं जाने देतीं यहाँ तक कि उसकी परछाई तक नहीं गिरने देतीं अपने बच्चों पर। खुदानखास्ता कहीं बच्चा बीमार हो जाय तो फिर देखो उस बाँझ औरत की पड़ोस की औरतें क्या गत बनाती हैं। मुहल्ले की सारी औरतें मिलकर जीना तक हराम कर देती हैं उस बिचारी का। अगर बीमारी में वह बालक चल ही बसे तो फिर जो लतीफे सुनने को मिलते हैं उन्हें सुन-सुनकर तो कोई ही ऐसी निःसन्तान स्त्री होगी जो ईश्वर से यह प्रार्थना न करती हो कि हे भगवान्, इस बाँझपने से तो मौत ही दे दे तो अच्छा है! मरे हुए बच्चे की माँ दरवाजे पर खड़ी होकर रो-रोकर चिल्लाएगी"—"हाय! इस बँझोटिया ने मेरा बच्चा खा लिया। अरे अब मैं क्या करूँ, इस डाइन को, न जाने क्या टोटका कर दिया इस राँड ने मेरे लाल पर कि जो बीमार हुआ तो चारपाई से उठा ही नहीं। हे भगवान् इस चुड़ैल का नाश जइयो। इसने मेरी फली-फूली गोद उजाड़ दी। कहीं का भी नहीं रहने दिया इसने मुझे। हाय! इसने अपना-सा ही बना लिया मुझे भी! हे भगवान् मेरी भाखा ऐसी पड़े कि इसके तन-तन में कीड़े बिलबिलाएँ और यह घुट-घुटकर मरे। कोई नाम लेवा और पानी देवा न बचे इसके कुटम में! हाय इसकी देह को कुत्ते कौए छफक-छफककर खायें और कोई दाग़ देने वाला न हो। हे राम यह कलमुँही न जाने कहाँ से आ मरी इस मुहल्ले में, इसने तो पटपरा ही कर दिया मेरा! राँड तुझे और कोई मुहल्ला नहीं मिला था रहने को जो यहाँ अपनी सूरत दिखाने आ गई। तेरा नाश जाय तेरा, अब तो तेरे कलेजे में ठंडक आ गई मेरे बेटे को खाके। हाय मुझे क्या पता था कि तू काली नागिन है जो मेरे छौने को डसकर ही छोड़ेगी, वरना मैं ही चली जाती यहाँ से कहीं दूसरी जगह अपना काला मुँह करके।"

"ये हालत है बिना बच्चे वाली स्त्रियों की पृथ्वी पर, लेकिन आपके यहाँ तो कोई कुछ नहीं कहता?".

"कहेगा क्या?" उर्वशी बोली—"हमारे यहाँ प्रतिबंध......।"

"ओ ! तो आपके यहाँ "बर्थ कंट्रोल' लगा हुआ है ।" मैंने चकित होकर कहा—"तब तो इन्दपुरी की सरकार भारत सरकार से भी आगे बढ़ गई इस मामले में । लेकिन आपके यहाँ यह 'बर्थ कन्ट्रोल' हुआ क्यों ? खाद्य वस्तुओं का तो कोई अभाव दीखता नहीं मुझे यहाँ पर ?"

उर्वशी बोली—"तो भारत में भी स्त्रियों ने बच्चे पैदा करना बंद कर दिया है ?"

"किया तो नहीं लेकिन सरकार ने फिलहाल ऐसा नियम बना दिया है कि जब तक देश की खाद्य-स्थिति सँभल नहीं जाय तब तक के लिये बच्चे पैदा करना स्थगित कर दिया जाय । इसलिये भारत के युवक इस दिशा में सतर्क तो हैं लेकिन वहाँ की युवतियाँ नहीं मानतीं । न चाहने पर भी एकाध पैदा हो ही जाता है । अब आप ही बताइये इसमें युवकों का क्या दोष है । दो-चार बच्चों से तो वहाँ की युवतियों का जी भरता ही नहीं, अपने पतियों से कहती हैं—एजी ऐसी जल्दी भी क्या है आपको 'बर्थ कंट्रोल' की कि बच्चे पैदा करना ही बंद कर दूँ । भला यह कोई अपने हाथ की बात है । भगवान् ने हमारे भाग्य में जितने लिखे हैं उतने तो होंगे ही और फिर आप ही सोचिये कि हमारे ही दो-चार बच्चों के खाने से देश की खाद्य-स्थिति नहीं बिगड़ जाएगी । फिर हमीं क्यों बच्चे पैदा करना बंद कर दें ? बड़ी-बूढ़ियों का कहना है कि चलती कोख कभी नहीं रोकनी चाहिये । इससे पाप लगता है और इस जन्म में तो क्या अगले सात जन्म तक मुक्ति नहीं होती उस औरत की । इसलिये मैं तो नहीं बंद करूँगी अपनी कोख । चाहे आप भले ही नाराज हो जायँ । आप इतना कमाते हैं आखिर किसलिये ? क्या अपने बच्चों का पेट नहीं भर सकते आप ? जहाँ भारत की चालीस करोड़ जनता खा-पीकर गुलछर्रे उड़ा रही है वहाँ इस मरी सरकार को हमारे ही दो-चार बच्चे भारी पड़ रहे हैं । मेरा तो जी चाहता है कि इस कांग्रेस सरकार की जगह फिर से अंग्रेज सरकार आ जाय जिसमें कम-से-कम ऐसे बेहूदे कानून तो नहीं थे कि

लो बच्चे पैदा करना ही बन्द कर दो। लानत है ऐसी सरकार को। यह सरकार है या रडुओं का झमेला है जो जी में आया चट से कानून बना दिया। हाय ! अगर मैं राष्ट्रपति होती तो देश में एलान करवा देती कि खूब बच्चे पैदा करो, जी भरके और जो सबसे अधिक बच्चों का बाप होता उसे दूसरे ही दिन प्रधान मंत्री बना देती।"

"ऐसी-ऐसी 'रेडीकल माइण्ड' की औरतें हैं हमारे देश में कि बस पूछो मत उर्वशीजी ! मेरे पड़ौस में ही एक सज्जन रहते हैं। उम्र कोई उनकी पचास साल की होगी। बाल भी आधे से अधिक पक गये हैं उनके। मुँह में शायद दाँत नहीं इसलिये बाहर से पोपला-सा दीखता है। गाल पिचके हुए हैं और चेहरे की खाल. ऐसी सिकुड़ गई है जैसे सूखा हुआ छुआरा हो। एक दफ्तर में क्लर्क हैं वे। वेतन अधिक-से-अधिक सवासौ रुपये मिलते होंगे उन्हें लेकिन ग्यारह बच्चों के बाप हैं वे। दो-तीन जवान-जवान लड़कियाँ घर में बैठा रखी हैं लेकिन शादी नहीं की अभी उनकी। करें भी तो कैसे—दहेज में देने के लिए उनके पास भुनी हींग भी तो नहीं है। अगर ठीक समय पर उन सबकी शादी हो जाती तो अब तक तीन-तीन चार-चार बच्चों की माँ बन जातीं वे सब-की-सब। लेकिन बुढ़िया अभी कड़क दिखती है। मोटी-ताजी भरी हुई देह है अभी उसकी। चेहरा हालाँकि चर्बी के मारे थलथलाने लगा है फिर भी एक अनोखा आकर्षण है उसमें। एक रात कड़ाके की ठण्ड पड़ रही थी। दिसम्बर का महीना था और रात के लगभग ग्यारह बजे होंगे। मैं किसी जरूरी काम से अपने उन्हीं पड़ौसी के द्वार पर पहुँचा। दरवाजा बंद था। सोचा शायद सो गये होंगे इसलिये उन्हें जगाना उचित है या नहीं ? इसी असमंजस में पड़ा थोड़ी देर तक मैं सोचता रहा कि अचानक दरवाजे के बगल वाले कमरे में खुसुर-फुसुर की मरी-मरी-सी आवाज मेरे कानों में आने लगी ! शायद वे जग रहे थे। कुछ कदम बढ़ाकर मैं खिड़की के सहारे जा खड़ा हुआ। खिड़की से थोड़ा झाँककर देखा तो वहाँ अंधकार के सिवाय कुछ भी नज़र

नहीं आया। खिड़की पर पर्दा झूल रहा था इसलिये कोशिश करने पर भी अंदर की कोई चीज मुझे दिखाई न दी। सहसा उन वृद्ध सज्जन की चिरपरिचित धीमीं सी आवाज मेरे कानों में आई। वे किसी से कह रहे थे—'आजकल अधिक बच्चे होना हर गृहस्थ के लिए एक बहुत बड़ा अभिशाप है।' सच कहता हूँ मैं तो इस औलाद से परेशान हो गया!"

"हाय अभी से परेशान हो गये तुम तो।" बुढ़िया कह रही थी—"मुझसे तो पूछो कि मैं खुश हूँ या परेशान हूँ। सच कहती हूँ शोभा के बाबूजी, जब तक पन्द्रह बच्चों की माँ नहीं बन जाऊँगी तब तक चैन नहीं पड़ेगा मुझे।"

"चल-चल उल्लू की पट्ठी तू बूढ़ी तो हो गयी है फिर भी तुझे शर्म नहीं आती ऐसी बातें करते हुए!"

"हाय बड़े शर्म वाले बने हैं। किधर से बूढ़ी दिखती हूँ मैं तुम्हें? भले ही देह बूढ़ी हो गई तो इससे क्या हुआ दिल तो अभी जवान है मेरा।"

"तो अभी और बच्चों की माँ बनना चाहती है इस उम्र में।"

"हाय, तुम तो ऐसी बहकी-बहकी बातें कर रहे हो! भला यह भी कोई औलाद-में-औलाद है। दो तो आधे हो-होकर जाते रहे और ग्यारह परमात्मा की कृपा से हमारी आँखों के सामने हैं। कुल मिलाकर तेरह तो हुए ही हैं अभी तक······· !"

"तो क्या हरामजादी अपनी औलाद का एक नया आगरा बसाना चाहती है अलग!" बूढ़ा ताव खाकर बोला—"जब तुझ बूढ़ी को ही ज़रा भी लिहाज़ शर्म नहीं तो बेचारे ये जवान-जवान लड़के-लड़कियाँ क्या करें? तेरी-जैसी औरतों को तो कुएँ-पोखरे में जाकर डूब मरना चाहिये·········।"

इसके बाद उर्वशीजी फिर नहीं रुका गया मुझसे वहाँ। उलटा घर की ओर भागा सर पर पैर रखकर। हद हो गई इंसानियत की।

यह तो भारत के बुड्ढे-बुढ़ियों की हालत है। फिर तुम्हीं सोचो उर्वशी मेरे सीने पर क्या गुजरती होगी। मैं तो अभी जवान हूँ और उस पर भी लेखक.........।"

उतना कहकर मैंने अपने दोनों हाथ उर्वशी को बाहुपाश में बाँधने के लिए उसकी ओर बढ़ाये तो वह छिटककर दूर जा खड़ी हुई और दाहिना हाथ हिलाती हुई बोली—"मुझे छूने का प्रयत्न मत करना वरना बेमौत मारे जाओगे तुम। यह देवलोक है—देवलोक ! यहाँ देवियाँ रहती हैं भारत की औरतें नहीं जिन्हें जब चाहे पकड़कर वासना की भूख मिटा लो। वह तो मैनका ही थी जो न जाने कैसे एक बैरागी के चक्कर में आ गई। उसकी जगह अगर मैं होती तो तुम्हारे उस महात्मा को ऐसा चकमा देकर रफूचक्कर हो जाती कि वह भी आँखें फाड़-फाड़-कर देखता ही रह जाता ..... !"

"लेकिन......लेकिन मैं पूछता हूँ कि अन्य स्त्रियों की भाँति आपके अंदर वासना की प्राकृतिक भूख नहीं है जो आप पुरुषों से इस तरह दूर भागती हैं। शायद इसी के फलस्वरूप आप लोगों के संतान नहीं होती क्योंकि आप पुरुषों के सम्पर्क में नहीं आतीं ?"

ऐसी बात नहीं लेखक जी हम देवियाँ हैं देवियाँ जिनका काम जानवरों की तरह बच्चे पैदा करना नहीं वरन् स्वर्गीय आनन्द की उपलब्धि है। बच्चे तो मृत्युलोक में पैदा होते हैं, देवलोक में नहीं। यहाँ न कोई पैदा होता है न मरता है। हम लोग शाश्वत हैं जिनका न आदि है और न अन्त...... "

लेकिन ....!"

लेकिन-वेकिन कुछ नहीं अब तुम यहाँ से अपने लोक को वापस जा सकते हो क्योंकि तुम्हारा पेट भर गया है।"

पेट तो भर गया है देवीजी !" मैंने अपने पेट पर हाथ फेरते हुए कहा— लैकिन आँखें तो अभी प्यासी हैं ?"

"तो सुरा मगवाऊँ पीने के लिये ?"

"जी नहीं, आपको देख-देखकर ही मेरी प्यास मिट जायगी……।"

"लेकिन कितनी देर में ?"

"इनकी गारंटी नहीं दे सकता। वर्ष-दो-वर्ष तो दूर रहे शताब्दियाँ भी बीत सकती है; क्योंकि आप जानती हैं कि मेरी प्यास कितनी प्यासी है ? पीते-पीते तुम्हारे रूप का सागर भले ही समाप्त हो जाय लेकिन मेरी प्यास नहीं मिट सकती।"

"लेकिन इतने समय तक तुम रुक तो नहीं सकते यहाँ ?"

"मै आपसे प्रार्थना करूँगा तब भी नही रुकने दोगी। आपके इस महल के किसी छोटे-से कमरे में अलग पडा रहूँगा देवीजी।"

"नहीं एक दिन भी नहीं रुक सकते तुम यहाँ।"

मैंने कहा—"लेकिन आप इतनी डरती क्यों हैं ? सच कहता हूँ उर्वशीजी अगर अपने देश की किसी कुँआरी लड़की से मैं इतनी प्रार्थना करता तो साल-दो-साल तो क्या, जीवन-भर मुझे अपने पास रख सकती थी वह। इसका मतलब है कि आपके सीने में दिल नही है कोई बर्फ का टुकड़ा रखा है जिसमें तनिक भी गरमी नहीं। खैर, एकाध हफ्ते तो रुक ही सकता हूँ क्योंकि मै आपका 'स्पेशल गैस्ट' हूँ। शाम को देवराज इन्द्र की सभा में आपका नृत्य भी देखना है, जैसा कि आपने वायदा किया है। फिर आपके नृत्य की प्रशंसा में एक महाकाव्य की रचना करूँगा जिसे देवराज इन्द्र को सुनाऊँगा तो झूम-झूम उठेगी उनकी सभा और प्रसन्न होकर वे मुझे अपना राजकवि घोषित कर देंगे। तब राजकवि और राजनर्तकी उर्वशी का जोड़ा इन्द्रपुरी के राजमार्गों पर इस तरह घूमा करेगा जैसे सारस की जोड़ी जा रही हो ··· बोलो कैसी कही ?"

"बहुत अच्छी कही।" उर्वशी मुस्करा उठी।

संध्या के झुटपुटे में इन्द्रपुरी के राजमार्ग अगणित मणियों के प्रकाश से ऐसे जगमगा रहे थे जैसे उन पर अपरिमित मात्रा में चाँदी और सोने के वर्क चिपटाकर 'सर्च-लाइट' फेंकी जा रही हो।

सहसा झिलमिल-झिलमिल करता हुआ एक रथ उर्वशी के महल के सामने आकर रुक गया। एक परिचारिका ने आकर इस बात की सूचना राजनर्तकी को दी और वापस चली गई कक्ष से।

मैंने प्रश्नसूचक दृष्टि से उर्वशी की ओर देखा जो वस्त्राभूषण बदलने का उपक्रम कर रही थी। होंठों की कोरों पर तनिक-सी मुस्कान बिखेरती हुई वह बोली—"क्या आप देवराज इन्द्र की सभा में नृत्य का कार्यक्रम देखने चलेंगे ?"

"क्यों नहीं, भला यह भी कोई पूछने की बात है। इतनी देर से प्रतीक्षा कर रहा हूँ इस सुहानी संध्या का और आप पूछ रही हैं कि चलोगे या नहीं ? बड़ी जल्दी अपना वायदा भूल जाती हो ?"

"ओफो ! नाराज क्यों होते हो लेखकजी, मैं अवश्य ले चलूँगी आपको लेकिन इस वेष में नहीं।"

"क्यों, यह 'ड्रैस' कोई खराब है ?" मैंने अपने कुर्त्ते-पाजामे की ओर देखकर पूछा— 'कितनी सादा पोशाक है। भारतीय आदर्शों की प्रतीक, लेकिन आप इसका कोई महत्व ही नहीं समझ रहीं ?"

"होगा आपके भारत में इसका महत्व किन्तु यहाँ नहीं चलेगा यह सब। इसे उतारकर यहाँ के पुरुषों-जैसे कपड़े और आभूषण पहनने होंगे। बोलो, तैयार हो ?"

"हूँ तो नहीं लेकिन होना पड़ेगा क्योंकि तुम्हारा नृत्य जो देखना है। खैर, लाइये कहाँ है वह ड्रेस ?"

उर्वशी ने बक्स में से निकालकर कपड़े दिये मुझे और एक सुनहरा मुकुट भी दिया जैसा प्रायः यहाँ के पुरुषों को पहनते हुए मैंने देखा था। लेकिन मुझे आश्चर्य इस बात का था कि उर्वशी के पास पुरुषों की यह पोशाक कहाँ से आई ? जब कि वह अकेली रहती थी; बिलकुल अकेली और मैं पूछ ही बैठा—"क्यों, यह तुम्हारे पति देवता के कपड़े हैं ?"

एक झटके से उसने मुँह फेरकर मेरी ओर देखा, बोली—"यहाँ कोई किसी का पति नहीं, सब स्वतन्त्र हैं। आपके भारत की स्त्रियों की भाँति यहाँ की देवियाँ पुरुष-समाज के आश्रित नहीं रहतीं।"

"तो सब-की-सब कुँआरी हैं यहाँ की स्त्रियाँ ? इसका मतलब है तुम भी कुँआरी ही हो ?"

"जी हाँ।" उर्वशी अपने सीने पर उंगली रखकर बोली—"अभी तक तो कुँआरी ही हूँ और आगे भी ··· ।"

"फिकर मत करो।" अपने सीने पर हाथ थपथपाकर मैंने कहा—"आगे ब्याही मैं कर दूँगा तुम्हें।"

ज़ोर से हँस पड़ी उर्वशी मेरी बात पर।

इसके बाद हम दोनों रथ में बैठकर देवराज इन्द्र की सभा में पहुँचे। बहुत ही शान्त वातावरण था वहाँ का। एक ओर ऊँचे से मंच पर देवराज इन्द्र, ब्रह्मा, विष्णु, महेश, वरुण, पवन, कुवेर आदि बहुत से कालीनों पर मसनदों का सहारा लिये बैठे थे और उनके पास पार्वती, लक्ष्मी, सरस्वती आदि बहुत-सी देवियाँ सजधजकर बैठी हुई थीं। मैंने जैसे ही सभा में प्रवेश किया तो सब-के-सब मेरी ओर घूर-घूरकर देखने लगे लेकिन मैं भी डरने वाला नहीं था। सीना तानकर बेधड़क देवराज इन्द्र की बगल में कालीन पर जा बैठा।

क्यों, आप कहाँ से तशरीफ का टोकरा लाये हैं ?" बड़ी-बड़ी आँखों से घूरकर इन्द्र ने पूछा।

मैंने कहा—"जानते नहीं भारत गणतन्त्र का राजदूत बनकर आया हूँ मैं यहाँ।"

"ओ बहुत खुशी हुई आपसे मिलकर। कहिये, कहाँ रुके हुए हैं आप ?"

"जी, फिलहाल तो उर्वशीजी के यहाँ रुका हुआ हूँ।"

"उर्वशी·········।" इन्द्र ने आश्चर्य से पूछा" राजनर्तकी उर्वशी के यहाँ ?"

"जी हाँ।"

"उन्हें कैसे जानते हैं आप ?"

"जी, वे मेरी मौसी लगती हैं एक पुराने रिश्ते में। उन्हीं के साथ यहाँ आया हूँ नृत्य का कार्य-क्रम देखने। कार्य-क्रम समाप्त होने पर कुछ जरूरी बातें भी करनी हैं मुझे आपसे। भारत के राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसाद का यहाँ की जनता के लिये एक बहुत ही महत्वपूर्ण संदेश भी लाया हूँ।"

मैंने देखा कि उर्वशी अन्य देवियों के बीच में बैठी हुई टकटकी लगाये मेरी ओर देख रही थी और शायद मेरी बातें सुनने का भी प्रयत्न कर रही थी। बीच-बीच में अन्य देवियाँ मेरी ओर देख-देख कर उर्वशी से कुछ पूछ भी रही थीं।

कुछ देर पश्चात् इन्द्र के आदेश से नृत्य आरम्भ हो गया। उर्वशी की प्रतिस्पर्धा में एक दूसरी नर्तकी और थी। दोनों अपने-अपने कमाल दिखाने लगीं। उनके घुँघरुओं की अनवरत झंकार और भाँति-भाँति के वाद्य-यंत्रों की धुनें मेरे कानों में रस-सा घोलने लगीं। सब ओर से मेरी दृष्टि खिंचकर उन्हीं पर केन्द्रित हो गई। मुझे ऐसा लगने लगा जैसे मैं किसी सिनेमाघर में बैठा हुआ "राजतिलक" पिक्चर का पद्मिनी और वैजयन्तीमाला का 'कंपटीटिव डांस' देख रहा हूँ। बीच-बीच में मारे खुशी के मैं तालियाँ बजाने लगता तो उन सब लोगों का ध्यान नर्तकियों की ओर से उठकर मेरी ओर केन्द्रित हो जाता। उस समय मुझे कितनी झेंप लगती ? कि बस पूछो मत।

लगभग एक घण्टे के पश्चात् सभा विसर्जित हो गई और अधिकांश लोग वहाँ से उठ-उठकर अपने घरों को चले गये। सिर्फ वहाँ ब्रह्मा, विष्णु, महेश और देवराज इन्द्र रह गये। उनके बीच से उठकर जब मैं चलने लगा तो उन्होंने मुझे रोकते हुए कहा—"अरे, आप चल दिये, कुछ संदेश लाये थे न आप अपने देश से·········।"

"अरे हाँ मैं तो भूल ही गया।" पुनः बैठता हुआ मैं बोला—"लेकिन वह संदेश मैं यहाँ की आम जनता के बीच में कल सुनाऊँगा।"

इसके बाद हम पाँच व्यक्तियों की एक गुप्त मीटिंग हुई जिसमें वह अंडे वाला प्रस्ताव पास किया गया है और मुझे सख्त आदेश दिया गया कि सन्' ६१ से पहले मैं उसे किसी को भी न बताऊँ। खैर, मैंने तुम्हें बता दिया है नीरा लेकिन खयाल रखना इस बात का कि हम-तुम दोनों के अतिरिक्त और कोई न जानने पावे इसे।

"चिंता मत करिए मैं किसी से नहीं कहूँगी।" नीरा हँसती हुई बोली—"हाँ तो आगे सुनाइये न, क्या हुआ फिर ?"

"हुआ क्या, मीटिंग समाप्त होने पर, मैं उर्वशी के महल में पहुँचा तो देखा कि वह एक पलंग पर लेटी हुई आराम कर रही थी। शायद थक गई थी वह नाचते-नाचते। मुझे देखकर वह उठी नहीं और वैसे ही लेटे-ही-लेटे मुस्कराकर बोली—"कहिये नृत्य पसंद आया कि नहीं ?"

"अरे बस पूछो मत उर्वशीजी, क्या ग़ज़ब का नाचती हो तुम भी कि वैजयन्तीमाला और पद्मिनी को भी मात कर दिया तुमने तो।" मैंने उसकी प्रशंसा करते हुए कहा।

इस पर उर्वशी उठकर बैठ गई पलंग पर और उत्सुक होकर बोली—"ये वैजयन्तीमाला और पद्मिनी कौन हैं ?"

मैंने कहा—"ये हमारे देश की सुप्रसिद्ध नर्तकियाँ हैं जिनकी एक-एक अदा पर लोगों के कलेजे फड़क उठते हैं।"

"कैसी हैं वे दोनों ?"

"बिलकुल तुम दोनों जैसी हैं। लेकिन वह दूसरी कौन थी जो तुम्हारे साथ नाच रही थी ?"

"वह रम्भा थी। क्या आपने उसका नाम सुना है ?"

"जी, बहुत अच्छी तरह सुना है।"

इस तरह बहुत देर तक हम दोनों बातें करते रहे और बातों-ही-बातों में उसे नींद आ गई। मणियों के तेज प्रकाश में उसका गुलाबी चेहरा बहुत ही आकर्षक लग रहा था। मुँदी हुई बोझिल पलकें, माथे पर बिखरी हुई लटें और लाल-लाल होंठ मेरे अन्दर उत्तेजना उत्पन्न कर रहे थे। उसका उभरा हुआ सीना देख-देखकर तो मेरा संयम डगमगाने लगा। कैसी अल्हड़ जवानी मेरे सामने बेसुध पड़ी थी और मैं पागलों की तरह उसकी ओर देखता ही जा रहा था? धीरे-धीरे मैं उसके ऊपर झुकने लगा और जैसे ही मैंने उसे अपनी दोनों भुजाओं में जकड़ने के लिये बाँहें फैलाईं वैसे ही मुझे किसी ने ज़ोर से झकझोर डाला। सपने की कड़ियाँ बिखर गईं। भिड़भिड़ी आँखों से ऊपर की ओर देखा तो बड़े भाई साहब खड़े थे। कह रहे थे—"क्यों कालेज नहीं जाना है क्या आज?"

मैंने अँगड़ाई लेते हुए कहा—"जाना तो है लेकिन पाँच मिनट बाद जगाते तो··· ।"

"पाँच मिनट में क्या नींद पूरी हो जाती?"

"जी नहीं, सपना तो पूरा हो जाता।" मैंने भर्राई हुई आवाज़ में कहा—"कितना मीठा सपना था? तुम क्या जानो। सब मज़ा किरकिरा कर दिया आखिर में। अमां यार दो ही मिनट और रुक जाते ।"

नीरा जो अभी तक चुपचाप मेरी कहानी सुनती जा रही थी, एक सांस लेकर बोली—"तो ये था आपका सपना।"

"हाँ नीरा" मैंने कहा—"सपने देखने की बुरी आदत जो पड़ गई है। क्या करूँ सपने बिना देखे रहा भी तो नहीं जाता।"

नीरा दाहिना हाथ अपने गाल पर सटाकर मेरी ओर गोल-गोल आँखों से देखती हुई बड़े लहजे से बोली—"हाँ जी जवानी में सपने नहीं देखोगे तो फिर कब देखोगे?"

"तुम बिलकुल ठीक कहती हो नीरा। युवावस्था है ही इसीलिये कि सपनों की रंगीनियों में बेसुध होकर अपने-आपको भुला दो जिससे

दुनियाँ का कोई गम, कोई तकलीफ़, किसी भी प्रकार का अभाव मनुष्य के जीवन में नीरसता न पैदा कर दे। खाओ, पीओ, जीओ और ऐश करो, यही जीवन का मूल-मन्त्र होना चाहिये। मरने से पहले हर आदमी का कर्त्तव्य है कि वह अपनी आंतरिक अभिलाषाओं को पूर्ण होने का अवसर दे और जो इसमें विश्वास नहीं रखते उनके लिये मैं बड़े विश्वास के साथ कह सकता हूँ कि अपनी इच्छाओं का दमन करने वाले व्यक्ति मरने के पश्चात् भूत-प्रेतों की योनि में जन्म लेकर अतृप्त आत्माओं के रूप में इधर-उधर भटकते फिरते हैं। इसलिये नीरा अपनी किसी भी इच्छा का गला मत घोंटो वरना तुम भी मरने के वाद चुड़ैल बनोगी।"

"मेरे मन में कोई इच्छा है ही नहीं जो मरने के बाद में चुड़ैल बनूँगी।" नीरा ने मुस्कराते हुए कहा—"हाँ, आप अपनी कहिए ?"

"मैं क्या कहूँ, मेरी तो सभी इच्छाएँ पूरी हो जाती हैं। हाँ, इश्क का मरीज हूँ मैं जिसके लिये तुम-जैसा कोई-न-कोई डाक्टर पकड़ ही लाता हूँ। डाक्टर के आते ही न मर्ज रहता है न मरीज़ ही··· ।"

"बड़ी अजीब बात है, भला मरीज कहाँ चला जाता है ?"

"वह डाक्टर में मिलकर एकाकार हो जाता है।"

"हूँ ! ऐसी बात है।" नीरा बोली—"तो आप मुझमें मत मिल जाइयेगा वरना आपका वजन लेकर मैं नहीं चल सकूँगी। परमात्मा ने तो वैसे ही मुझे इतना मोटा-ताजी बना दिया है उस पर आपकी ढाई मन की लाश और लद जायगी तो फिर एक कदम भी नहीं चल सकूँगी।"

"खैर, मैं नहीं मिलूँगा तुममें लेकिन देवीजी कुछ दिन बाद एक मुन्ना तुम्हारे ऊपर लदेगा उसे लेकर कैसे चला करोगी।"

"हटो जी, हमें ऐसी बात अच्छी नहीं लगतीं।" तुनककर बोली नीरा—"आप तो गंदी बातें करने लग जाते हैं। लो मैं नहीं बैठती आपके पास।"

"कहाँ चल दीं श्रीमतीजी !" उसका हाथ पकड़ते हुए मैंने कहा—"फतहपुर सीकरी देखने चलना है कि नहीं ?"

"आप तो बड़े ले चलेंगे ?"

"अरे, वाह तुम्हें नहीं ले चलूँगा तो किसे ले चलूँगा। चलो जल्दी तैयार हो जाओ कपड़े बदलकर।"

"कितने बजे गाड़ी जाती है ?"

"नौ बजे जाती है आगरा फोर्ट से।"

"अब क्या बजा है ?"

"सवा आठ, लेकिन जल्दी करो नीरा स्टेशन तीन मील है यहाँ से।"

नीरा उठकर अपनी अटैची में से एक लाल और एक नीले रंग की दो साड़ियाँ निकालकर मेरे पास आकर उन्हें उलट-पलटकर दिखाती हुई बोली—"कौनसी पहिन लूँ इनमें से ?"

"अरे भई कोई सी पहन लो जो तुम्हें अच्छी लगे। मुझे क्या पूछती हो।" तनिक उपेक्षा भरे स्वर में मैंने कहा।

नीरा चिढ़ गई, बोली—"जाइये, मुझे नहीं जाना आपके साथ।"

"तो किसके साथ जाना है ?"

"किसी के साथ नहीं।"

"बाप रे, तुम तो नाराज हो जाती हो। अच्छा, नीली वाली साड़ी पहन लो उसमें बहुत अच्छी लगोगी तुम। नीली साड़ी में लिपटा हुआ तुम्हारा यह गोरा शरीर और सुन्दर चेहरा ऐसे चमकेगा जैसे स्वच्छ नीलाकाश में शरद् ऋतु का चाँद आँख-मिचौनी खेल रहा हो।"

नीरा एक ओर मुँह फेरकर मुस्कराने लगी। कुछ देर रुककर बोली—"आप बाहर चले जाइये।"

"क्यों ?"

"मैं कपड़े बदलूँगी !"

"लेकिन मैं बैठा रहूँगा तो······!"

"मैं कहती हूँ बाहर चले जाइये।"

"अरे वाह तुम तो बड़ा रौब जमा रही हो ?"

"मुझे क्या है मत जाइये, गाड़ी निकल गई तो ·····।"

"अच्छा लो मै खिड़की की तरफ मुँह करके बैठा जाता हूँ तुम सपाटे के साथ कपड़े बदल डालो।" कुर्सी का मुँह खिड़की की ओर फेरते हुए मैं बोला।

नीरा फिर भी नहीं मानी, बोली—"आप मानते क्यों नहीं ? जिद क्यों कर रहे हैं ?"

"जिद की इसमें क्या बात है। हम भी तो तुम्हारे सामने अपने कपड़े बदलते हैं।"

"आपकी क्या है आप तो आदमी हैं !"

"और तुम क्या औरत हो ?"

"तो क्या दिखती हूँ आपको ?"

"लड़की····· ।"

नीरा मुँह बिचकाती हुई बोली—"औरत और लड़की में क्या फर्क होता है, जरा बताइये तो सही ?"

"जमीन-आसमान का फर्क है दोनों में !" मैंने कहा—"जिसके बच्चे हो जाते हैं वह औरत होती है और जिसके बच्चे नहीं होते वह लड़की होती है !"

"अच्छा जी, तो क्या मैं जान सकती हूँ कि जिन औरतों के जीवन-भर एक भी बच्चा नहीं होता तो क्या वे साठ साल की बूढ़ी होने पर भी लड़की ही बनी रहती हैं ?"

"ओफ़ो तुम तो बाल की खाल निकाला करती हो। ऐसा ही है तो लो मैं जाता हूँ कमरे से बाहर।" घड़ी की ओर देखता हुआ कमरे से बाहर हो गया मैं और नीरा ने किवाड़ें बंद कर लीं अंदर से।

कुछ देर बाद उसने जब दरवाजा खोला तो नीरा मेरे सामने नीली

साडी में सिमटी खड़ी थी। मुझे देखते ही मुस्कराकर बोली—"कहिए, कैसी लगती हूँ मैं ?"

"बिलकुल हूर की परी जैसी।" उसे ऊपर से नीचे तक निहारता हुआ मैं बोला—"कहिये, किस पर बिजली गिरेगी यह ?"

"जो भी मेरे सामने आ जायगा।"

"लेकिन मैं तो तुम्हारी बगल में चलूँगा इसलिए मुझ पर तो नहीं गिरेगी ?"

"नहीं, मैंने कहा न कि जो भी मेरे सामने आयगा उस पर······।"

"तब तो वह बड़ा भाग्यशाली होगा ?"

"क्यों नहीं, आप भी मेरे सामने आकर अपना भाग्य आज़मा लीजिये न।"

"मेरी क्या है मैं तो जीवन-भर आज़माता ही रहूँगा तुम्हारे साथ अपना भाग्य, लेकिन मुझे डर है कि कहीं सड़क पर सामने गधा पड़ गया तो ·· तो उसकी किस्मत चेत जायगी !"

"हाय ! आप तो बड़ी गन्दी मज़ाक करते हैं ?"

"देवीजी मैं मज़ाक तो करता ही नहीं किसी से !"

"क्यों ?"

"क्यों क्या ! बात असल में यह है कि हमारा एक 'क्लास-फैलो' था एम० ए० का जो बहुत ही 'जोली फ़िगर' था। प्रायः हम दो-चार साथी मिलकर उसके घर जाया करते शाम को और घंटों साहित्यिक गोष्ठी हुआ करती। परस्पर हँसी-मज़ाक भी होता। इस हँसी मज़ाक में हम सब साथी एक तरफ हो जाते और दूसरी तरफ वह अकेला रह जाता तो कभी-कभी वह परेशान होकर झल्ला उठता। एक दिन जब तगड़ी हँसी-मज़ाक होने लगी तो वह चिढ़कर बोला—"यार देखो तुम लोग मुझसे हँसी-मजाक मत किया करो भले ही दिल्लगी कर लिया करो।" इस पर हँसते-हँसते हम सब साथी जमीन पर लोट-पोट हो गये। उसकी यह बात आज तक मुझे याद है लेकिन अफसोस कि हँसी,

मज़ाक और दिल्लगी में आज तक मैं फर्क नहीं समझ पाया। इसलिये देवीजी मैंने तुम्हारे साथ दिल्लगी की है मज़ाक नहीं।

नीरा मेरी बात पर हँसती हुई पीछे की ओर घूम गई। मेज पर से उसने अपना 'वैनिटी बैग' उठाया और मेरे करीब आकर बोली—"चलिये।"

कमरे का ताला बन्द करके हम दोनों रिक्शा-स्टेंड पर आये। एक रिक्शा लिया जो शहर की चहल-पहल से गुजरता हुआ फोर्ट स्टेशन ले गया। सीकरी जाने वाली गाड़ी तैयार खड़ी थी। टिकिट लेकर हम दोनों एक खाली कंपार्टमेंट में जा बैठे। ठीक नौ बजे गाड़ी ने सीटी दी और स्टेशन छोड़ दिया।

सीकरी का रेलवे स्टेशन अकबर द्वारा निर्मित किले की विशाल चहारदीवारी के अन्दर बना हुआ है जिसकी लाल पत्थर की कंगूरे-दार प्राचीर कई हजार वर्ग गज की भूमि को अपनी जर्जर बाँहों में घेरे हुए शान्त वियोगिनी के रूप में खड़ी हुई दिखाई देती है। इसी विस्तृत परकोटे में एक ओर छोटी-सी पहाड़ी पर मुगल सम्राट अकबर के बनवाए हुए लाल पत्थर के महल आकाश की ओर गर्व से अपना सर ताने खड़े हैं और उनके आस-पास पहाड़ी के ढलानों पर तरह-तरह के उगे हुए जंगली वृक्ष शान्त मुद्रा में ऐसे लगते हैं जैसे स्टेशन से उतरकर आने वाले दर्शकों से उन वीरान शाही इमारतों की करुण-कहानी मूक भाषा में कह रहे हों।

हम जैसे ही प्लेटफार्म से बाहर निकले वैसे ही एक बूढ़ा मुसलमान गाइड लपककर हमारे करीब आया, बोला—आइये बाबूजी मेरे साथ...... !"

"क्या तुम 'गाइड' हो ?" मैंने प्रश्न किया।

"जी हाँ, मैं बहुत पुराना गाइड हूँ यहाँ का और मेरा नाम अब्दुल्ला है।"

"लाइसेंस है तुम्हारे पास ?"

"जी, लाइसेंस तो नहीं है मेरे पास लेकिन इत्मीनान रखिये मैं आपको इन इमारतों और उनमें रहने वाले शहंशाहों के बारे में ऐसी-ऐसी बातें बताऊँगा जो आपको तवारीखों में भी लिखी हुई नहीं मिलेंगी, फिर ये कल के छोकरे जो लाइसेंस लिये फिरते हैं क्या बता सकते हैं बाबूजी। सीधे-साधे मुसाफिरों को उलटी-सीधी पट्टी पढ़ाकर नामा ऐंठते हैं और गलत-सलत बातें बताते हैं।"

"कितने पैसे लोगे ?"

"अरे सा'ब आपसे ज्यादा नहीं लूँगा। वैसे घंटे के हिसाब से मैं एक रुपया घंटा लेता हूँ और······।"

"तो क्या घंटे के हिसाब से दिखाते हो ?" मैंने बीच ही में उसकी बात काटकर पूछा—"कितने घंटे लगते हैं इस किले को देखने में ?"

"अगर अच्छी तरह देखा जाय तो सा'ब चार-पाँच घंटे तो लग ही जाते हैं। वैसे चलते-फिरते ढंग से देखा जाय तो एकाध घंटा काफी है। लेकिन आप पैसों की तरफ खयाल मत कीजिए क्योंकि रोज-रोज ऐसी जगहों पर नहीं आता कोई····· !"

मैंने कहा—"अच्छा चलो बड़े मियाँ तुम्हारी जैसी मर्जी हो वैसे दिखाओ लेकिन ईमानदारी के साथ····· ।"

"अरे सा'ब कैसी बात कर रहे हैं आप। ईमान है तो जहान है और जिसके पास ईमान नहीं वह इन्सान नहीं हैवान है !"

"अरे वाह ! तुम तो शायरी भी कर लेते हो बड़े मियाँ।"

प्रत्युत्तर में सिर्फ हँसकर रह गया वह बूढ़ा गाइड। आगे-आगे कोलतार की काली सड़क पर अब्दुल्ला चल रहा था सीना ताने जैसे किसी फौज का कमांडर किले पर फतह पाने जा रहा हो ! सर पर सफेद मलमल की जालीदार इस्लामी टोपी, ढीला-ढाला मारकीन का मैला-सा कुर्त्ता और हलके नीले रंग का तहमद बाँधे, हाथ में पतली-सी

बेंत की छड़ी लिये वह बड़ी शान से झूमता हुआ चल रहा था। पैरों में वही दस आने वाली टायर की चप्पलें थीं जो उसके भारी-भरकम शरीर के बोझ से कोलतार की सड़क में मिली जा रही थीं। मैं और नीरा लगभग पन्द्रह गज के फासले पर चल रहे थे उसके पीछे-पीछे।

सहसा नीरा बोली—"क्योंजी इस तरह तो यह बहुत पैसे ले लेगा। कोई दूसरा गाइड कर लीजिये न।"

"अरे ले लेने दो।" मैंने लापरवाही के साथ कहा—"अगर दिन में चार-छः रुपये नहीं कमायेगा तो किस तरह अपने बाल-बच्चों का पेट भरेगा।"

"हुँह! आप तो ऐसी बात करते हैं जैसे किसी लखपती बाप के बेटे हों।"

मैंने बगल में चलती हुई नीरा पर एक दृष्टि डाली और बोला—"तो क्या ऐसा-वैसा ही समझ रखा है तुमने मुझे।"

"जी नहीं, मुझमें इतना साहस कहाँ जो आपको ऐसा-वैसा ही समझने लगूँ।"

"समझोगी भी कैसे, मारते-मारते अकल दुरुस्त नहीं कर दूँगा तुम्हारी।"

"जी नहीं, अकल तो मेरी वैसे ही दुरुस्त है। आपको मारने की जरूरत नहीं।" नीरा ने मुस्करा कर प्रतिवाद किया।

सड़क के दोनों ओर खीरा, ककड़ी और तरह-तरह की सब्जियों के हरे-भरे खेत दूर तक फैले हुए थे। उनकी ओर देखकर नीरा बोली—"एजी, कुछ खानें को तबियत कर रही है।"

"तो खेत में घुसकर खालो न टमाटर, ककड़ी, खीरा जो भी मन में आये।"

"खेत वाला मारेगा तो?"

"तो दो-चार डंडे भी खा लेना।"

"लेकिन आप बचायेंगे नहीं मुझे?"

"मैं क्यों बचाने लगा। मुझे तो और मजा आयगा तुम्हें पिटते हुए देखकर।"

"हड्डियाँ मेरी टूटेंगी और मजा आपको आयगा ? भला ऐसा भी पति क्या काम का जिसके दिल में ज़रा भी रहम न हो। इससे तो कुँआरी रहना ही अच्छा है ?"

"बेशक।" मैंने कहा—"कुँआरेपन में लड़कियों के चाहने वालों की संख्या उतनी ही होती है जितनी सुबह के वक्त एम्प्लायमेंट एक्सचेंज के सामने बेरोज़गार आदमियों की भीड़ और शादी हो जाने के बाद तो समझ लो उनके हुस्न का दिवाला ही निकल जाता है और जहाँ दो-चार बच्चों की माँ बनी नहीं कि फिर तो पतिदेव भी इधर-उधर किसी नई बुलबुल की तलाश में ताका-झाँकी करने लगते हैं। इसलिये मैं तो यही सलाह दूँगा कि लड़कियों को जीवन-भर कभी शादी नहीं करनी चाहिये।"

"और लड़कों को ?"

"लड़कों को हर दूसरी साल एक नई 'टेंपरेरी वाइफ़' बदल देनी चाहिये।"

"लेकिन मैं पूछती हूँ कि वह पुरानी वाली किसके लिये रोया करेगी जीवन-भर ?"

"अरे भई रोने का तो प्रश्न ही नहीं उठता क्योंकि वह भी स्वतंत्र रूप से किसी भी नये छोकरे को फँसा सकती है।"

"इसका मतलब है लड़कियों को आपने निरी वेश्या ही समझ रखा है।" नीरा बोली—"उनके दूसरे रूपों की ओर आपने कोई ध्यान नहीं दिया। मैं तो कहती हूँ कि कोई भी ऐसी लड़की नहीं होगी जो अपना घर बसाकर नहीं रहना चाहती हो, जो अपने पति के प्यार पर एकाधिपत्य न चाहती हो और जिसका हृदय माँ की ममता से ओत-प्रोत न हो।"

"हो सकता है लेकिन आजकल ऐसी लड़कियों की भी कमी नहीं है जो सुबह शाम पार्कों और सड़कों पर रंग-बिरंगी तितलियाँ बनी घूमा करती हैं। आखिर क्यों? इसलिये कि कोई नया शिकार उनके जाल में फँसे और वे उसकी बोटी-बोटी नोंचकर खा जायें।"

"लेकिन उनका रूप और यौवन सब-कुछ लुट जाने पर उनकी क्या दशा होती है, इस पर भी आपने कभी सोचा है? अगर नहीं तो सुन लीजिये कि उनकी वही हालत होती है जो गली-गली घूमने वाली कुतिया की। जिसे कोई रोटी का एक टुकड़ा भी नहीं डालता और जो मुँह फैलाए किसी आस में दर-दर भटकती फिरती है लेकिन बदले में दुतकार के अतिरिक्त कुछ नहीं मिलता उसे। फिर सब तरफ से निराश होकर कोठों को आबाद करती हैं। जहाँ समाज की गंदगी का वीभत्स रूप देखकर मनुष्य घृणा से नाक-भौं सिकोड़कर भागने की कोशिश करता है लेकिन वह दुर्गन्ध उसका पीछा नहीं छोड़ती और उसी दुर्गन्ध में न जाने कितने हरे-भरे घर बर्बाद हो जाते हैं। जिन पर मौत की-सी काली स्याही छा जाती है और कोई कल्पना भी नहीं कर सकता कि यहाँ कभी जीवन वाटिका में हर रोज खुशियों के नये-नये पुष्प खिलकर मुस्कराया करते होंगे।"

मैं बहुत प्रसन्न हुआ नीरा की यह बात सुनकर क्योंकि उसके इन शब्दों में सार था। एक ऐसी भारतीय नारी के हृदय की आवाज थी जो अपने को मिटा सकती है लेकिन अपनी आँखों के सामने अपना फला-फूला घर बर्बाद होते हुए नहीं देख सकती।

किले के नीचे पहुँचकर गाइड ने सड़क पर आगे की ओर बढ़ना छोड़ दिया और झाड़ियों में होती हुई एक पगडंडी पर मुड़ते हुए हमारी ओर देखकर बोला—"आइये बाबूजी······।"

मैंने आश्चर्य से किले के उस भाग को देखा जिधर गाइड हमें ले जाना चाहता था। लेकिन उधर तो किले का पिछला भाग था—टूटी-फूटी इमारतों के ध्वंसावशेष-मात्र दिखाई दे रहे थे वहाँ और उनके

आसपास सघन झाड़ियाँ थीं जहाँ दिन को तो नहीं लेकिन रात को अवश्य किसी अकेले व्यक्ति के जाने का साहस नहीं हो सकता। अतः कुछ संदेह की दृष्टि से गाइड की ओर देखकर मैंने पूछा —"क्यों भई, किले का असली दरवाजा तो बुलन्द दरवाजा है जो ठीक इसके दूसरे छोर पर है, वहाँ से क्यों नहीं देखना शुरू किया जाय किले को ? यहाँ तो मुझे कोई विशेष इमारत देखने लायक नजर नहीं आती।"

"ऐसी बात नहीं है सा'ब, देखिये सामने झाड़ियों की ओट में जो छोटा-सा दरवाजा है वहीं से इस किले को देखना शुरू किया जाता है। यह इस किले का गुप्त द्वार था किसी जमाने में लेकिन आजकल की दृष्टि से इसका कोई महत्व नहीं रह गया है। शहंशाह अकबर के ज़माने में दुश्मनों से जान बचाकर किले से भाग निकलने के लिये यह गुप्त द्वार बनवाया गया था।"

मैंने देखा सामने दूसरी पगडंडी से आते हुए चार-पाँच 'अप-टू-डेट' व्यक्ति भी उसी दरवाजे की ओर जा रहे थे जिनमें तीन युवक थे और दो युवतियाँ। शायद किसी ऊँचे घराने से संबंध रखते थे वे ऐसा मैंने अनुमान लगाया उनकी साफ-सुथरी और आधुनिक फैशन की पोशाकें देखकर। उनके साथ भी एक अधेड़ अवस्था का गाइड था जो हाथ के संकेत से किले के विशेष बुर्जों की ओर संकेत करके कुछ बता रहा था। अतः सन्देह की कोई गुंजाइश न देखकर हम भी अब्दुल्ला के साथ-साथ उसी दरवाजे की ओर चलने लगे।

दरवाजे के निकट पहुँचकर मुझे कुछ ऐसा महसूस हुआ जैसे दीवालों की ओट में कुछ लड़के आपस में गरमागरम बहसबाजी कर रहे हों। और यह अनुमान अन्दर घुसते ही मेरे सामने साकार रूप में उपस्थित हो गया। हमें देखते ही पाँच-छः लड़के जिनकी आयु तेरह-चौदह वर्ष से अधिक न होगी, हमारी ओर दौड़कर आये और उनमें से एक बोला—"चलिये सा'ब मैं दिखाऊँगा आपको किला, सिर्फ बारह आने लूँगा।

दूसरा बोला—"मुझे आठ ही आने दे देना सा'ब।"

तीसरा उनमें से आगे बढ़कर बोला—"मैं छः आने में ही चला चलूँगा बाबूजी और तीन घण्टे तक दिखाऊँगा सारे किले को घुमा-घुमाकर।"

पहले वाला लड़का जो कमर पर हाथ टिकाए लाल-लाल आँखों से तीसरे लड़के को घूर-घूरकर देख रहा था लपककर उसके सामने आया और बाएँ हाथ से उसका गिरहबान पकड़कर ताव में आकर बोला—"क्यों बे, तू दूसरे के ग्राहक को बिगाड़ता है। साले एक घूँसे में तेरी आँखें निकाल लूँगा आइंदा ऐसी हरकत की तो। बहुत दिन से तुझे देख रहा हूँ लेकिन बिना हड्डियाँ तुड़वाए तू मानेगा नहीं।"

सामने वाले लड़के ने अपना गिरहबान छुड़ाकर एक धक्का दिया और बोला—"चल-चल यहाँ तेरी दादागिरी नहीं चलेगी। क्या अपने बाप का किला समझ रखा है तूने जो अकड़ दिखा रहा है?" और वह भी कमर पर हाथ टिकाए दादाओं की तरह खड़ा हो गया।

लेकिन मुझे भय था कि कहीं आपस में ये दोनों लड़ न बैठें, इसलिये अब्दुल्ला की ओर हाथ का संकेत करके मैंने कहा—"हमारे साथ गाइड है इसलिये तुम्हारी जरूरत नहीं……।"

"अरे सा'ब यह खूसट कहाँ से पकड़ लिया आपने।" एक बोला—"यह तो कुछ भी नहीं जानता। वैसे ही आ जाता है यहाँ रोजाना।"

अब्दुल्ला अपने को अपमानित देखकर बोला नहीं कुछ। सिर्फ उस लड़के की ओर देखता ही रहा लाल-लाल आँखों से। वह जानता था कि यह तो रोज ही बकते रहते हैं इस तरह, इसलिये मेरी ओर देखकर बुदबुदाया—"आगे चलिये सा'ब……।"

हम दोनों अब्दुल्ला के साथ-साथ आगे की ओर बढ़ गये। थोड़ी दूर तक वे लड़के भी चलते गये लेकिन मेरी ओर से कोई जवाब न मिलने पर वे निराश होकर वापस लौट गये। उनके जाने के बाद अब्दुल्ला ने बताया कि वे कुछ भी नहीं जानते किले के बारे में और वैसे ही दर्शकों को भड़काया करते हैं।

इसके बाद किला देखना प्रारम्भ किया हमने। दीवाने-आम, दीवाने-खास, पंचमहल, टर्किस सुल्ताना का महल, विंटर पैलेस, समर पैलेस, जोधाबाई का महल, बावर्चीखाना इत्यादि। दीवाने-आम की लाल इमारत के सामने एक बहुत बड़ा चौकोर अहाता है जिसके एक कौने में बड़ा-सा खूँटा गड़ा हुआ देखकर मुझे आश्चर्य हुआ। पूछने पर अब्दुल्ला ने बताया कि यहाँ शहंशाह अकबर का मस्त हाथी बाँधा जाता था, जिसका काम था बादशाह द्वारा दंडित व्यक्तियों की हत्या करना। कभी-कभी विशेष अवसरों पर दीवाने-आम के इस विशाल अहाते में चुने हुए जनता के प्रतिनिधियों की एक सभा होती थी, जिसमें राज्य के बड़े-बड़े अपराधियों के अपराधों का बादशाह द्वारा फैसला किया जाता था। यह जानने के लिये कि वास्तव में अपराधी ने कोई अपराध किया भी है या नहीं उसे हाथ-पैर बँधवा कर हाथी के सामने पटकवा दिया जाता था। अगर वह वास्तविक अपराधी होता था तो हाथी उसके पेट पर अपना पैर रखकर तत्काल ही उसकी हत्या कर देता और निर्दोष होने पर सूँड़ से उसे सूँघकर अलग हट जाता। यह थी अकबर के न्याय की कसौटी।

पंचमहल एक पाँच मंजिल की हवादार इमारत है जिसकी प्रत्येक दूसरी मंजिल का आकार पहले की अपेक्षा छोटा होता गया है। सबसे ऊपर की मंजिल पर चढ़कर सीकरी के दुर्ग की प्रत्येक इमारत तो दिखती ही है साथ ही किले के आसपास मीलों में फैले हुए मैदान और उनमें उगे हुए हरे-हरे वृक्ष ऐसे लगते हैं जैसे तितर-बितर चिड़ियों के झुंड बैठे हों। दुर्ग के पीछे की ओर मीलों में फैली हुई एक विशाल झील है जिसमें प्रायः बरसात का पानी भरा रहता है और ऊपर से देखने पर बहुत ही मनोरम दृश्य लगता है उस झील का। अकबर के युग में यह झील दुश्मनों से किले की रक्षा करती थी पीछे की ओर से लेकिन आजकल सिर्फ प्राकृतिक सौंदर्य की दृष्टि से ही इसका महत्व रह गया है।

पंचमहल के चारों ओर लाल पत्थर का एक बहुत बड़ा चबूतरा है जिस पर एक छोटा-सा तालाब बना हुआ है। तालाब के हरे पानी में प्रायः सफेद रंग के कमल खिले रहते हैं। तालाब के बीचोंबीच लगभग दो वर्ग गज की चबूतरी है जिस तक पहुँचने के लिए एक ओर से पतला-सा रास्ता है। कहते हैं, इसी चबूतरी पर बैठकर चाँदनी रात में स्वर-सम्राट तानसेन वीणा के तारों को छेड़ा करते थे और तालाब के चारों ओर बैठे हुए अमीर-उमराव और स्वयं बादशाह अकबर वीणा की तान में इतने बेसुध हो जाते कि रात कितनी बीत गई इसका उन्हें तनिक भी ख़याल नहीं रहता था। छिटकती हुई धवल चाँदनी में तानसेन की वीणा के स्वर वायु के सहारे तैरते हुए रात की उस निस्तब्धता में लाल पत्थर की उन इमारतों से टकराकर शून्य में विलीन हो जाते। राग-रागिनियों की उस महफिल में जड़ वस्तुएँ भी ऐसी लगतीं जैसे कान लगाकर संगीत का आनन्द लूट रही हों। संगीत की स्वर-लहरियों से विह्वल होकर भौंरे भी कमल की पंखुड़ियों को खोलकर वायु में गुनगुनाने लगते। पास ही मक़तब की इमारत में बैठी हुई बेगमों और शहज़ादियों की आँखों से नींद भी उड़ जाती। कहते हैं, तालाब के बीच स्थित इसी छोटे चबूतरे पर बैठकर स्वर-सम्राट् तानसेन और बैजूबावरा की प्रतिस्पर्धा हुई थी एक दुग्ध धवल चाँदनी रात में।

पंचमहल के पास ही चबूतरे पर एक बड़ा-सा शतरंज का खाका बना हुआ है जहाँ अकबर अमीर-उमरावों के साथ शतरंज का खेल खेला करता था और गोटों की जगह चला करती थीं दूर-दूर देशों से खरीदकर लाई हुई हसीन-हसीन जवान लड़कियाँ एक खाने से दूसरे खाने में। आखिर में जो जिसे जीत जाता वह रात-भर उसकी वासना का शिकार बनतीं। ये थे मुगल बादशाहों के शाही ठाठ। शतरंज के इस खाके की ओर देखा तो मैं देखता ही रह गया बहुत देर तक। न जाने कितने दुर्भाग्यशाली माँ-बापों की अभागिन बेटियों के अनुपम सौंदर्य का इस खाके पर नित्य ही व्यापार होता था। शराब और नारी के

नशे में चूर ये अमीर-उमराव रात-भर उन मासूम कलियों को चूसकर सुबह अपने महलों से इस तरह बाहर निकाल देते जैसे दूध में से मक्खी को फेंक दिया जाता है। यह थी दानवता की चरम सीमा और आज तो वहाँ सिर्फ खाका ही शेष रह गया है जिस पर उन अनगिनत देवियों के पद-चिन्ह भी दृष्टिगोचर नहीं होते। वे भी उन अमीर-उमरावों की तरह काल के कराल गाल में समा गये हमेशा के लिये।

अब्दुल्ला हमें ज़नानखाने में ले गया जहाँ बेगमें और शहज़ादियाँ रहा करती थीं। यह इमारत कुछ इस ढंग से बनी हुई है कि हम उसे भूल-भुलैयों वाली इमारत कहें तो अतिशयोक्ति न होगी; क्योंकि यहाँ रात को शहज़ादियाँ और कम आयु की बेगमें आँख मिचौनी का खेल खेला करती थीं। जनानखाने से चिपटी हुई एक छोटी-सी गुमटी है जहाँ भविष्यवक्ता देवी पंडित बैठा करता था। अकबर नित्य सवेरे उससे उस दिन का भविष्य पूछकर तब कहीं राज्य के कामों में लगता था। अकबर के जाने के बाद बेगमें और शहज़ादियाँ उस बेचारे बूढ़े पंडित की खोपड़ी चाटा करती थीं। बेगमों के प्रश्न प्रायः औलाद से संबंध रखते थे और शहज़ादियाँ शर्माती हुई एक-दूसरे के भावी पति के विषय में चुहलबाजी करती हुई पंडितजी से प्रश्न-पर-प्रश्न किया करतीं।

जनानखाने की एक खिड़की से अब्दुल्ला ने बताया कि सामने किले की चहारदीवारी के भीतर नीची-सी जगह पर जो मीनार-सी खड़ी है उसे 'एलीफेंट टावर' कहते हैं, जिसके ऊपर अकबर अपनी बेगमों के साथ बैठकर नीचे हाथी और शेर की लड़ाई देखा करता था। कभी-कभी कोई राजपूत अकबर को अपनी वीरता दिखाने के लिये हाथी की जगह स्वयं निहत्था शेर से भिड़ जाता और बातों-ही-बातों में शेर का खात्मा कर देता, उस समय न जाने कितनी कुँआरी शहज़ादियों के दिलों में उस राजपूत वीर के लिये अनायास ही स्थान रिक्त हो जाता और एक मीठी-सी गुदगुदी का अनुभव कर वे बेचैन हो उठतीं।

टर्किस सुल्ताना का महल पच्चीकारी और चित्रकला की दृष्टि से

प्रशंसनीय है। आज भी उसकी दीवालों पर कहीं-कहीं रंग-बिरंगे विभिन्न प्रकार के चित्र बने हुए हैं। टर्किस सुल्ताना अकबर के बूढ़े मन्त्री बैरमखां की विधवा पत्नी थी जो आयु में बड़ी होने पर भी बाद में अकबर की बेगम बनीं।

बीरबल के मोतीमहल के पास से गुजरते हुए अब्दुल्ला ने एक स्थान-विशेष की ओर संकेत करके बताया कि यहाँ शहज़ादा सलीम और नूरजहाँ खड़े होकर कबूतर उड़ाया करते थे। कभी-कभी कबूतरों के गले में चिट्ठियाँ बाँधकर अपने महलों की छतों पर खड़े-खड़े वे दोनों पोस्टमैन का काम भी लिया करते थे उन छोटे-छोटे जानवरों से।

आगे चलकर शहज़ादा सलीम का महल मिला। उसकी गैलरी से गुजरते हुए अब्दुल्ला ने बताया कि यहीं सलीम और अनारकली की प्रेम-कहानी की शुरूआत हुई थी। अनारकली एक साधारण ईरानी सौदागर की लड़की थी जो सलीम के महल के पीछे रहा करती थी। उसे गाने का बहुत शौक था और इस कमाल का गाती थी कि सुनने वाला अपनी सुध-बुध खो बैठता था। जब रात की छिटकती हुई चाँदनी में सलीम के महल के पीछे वह कोई दर्द-भरा गीत गाती तो सलीम के मस्तिष्क का संतुलन बिगड़ जाता और वह महल के पीछे के हिस्से से खड़ा-खड़ा घंटों उसका गीत सुना करता। धीरे-धीरे उन दोनों का साक्षात्कार हुआ। वे परस्पर एक-दूसरे को अपना दिल दे बैठे। अब एक पल के लिये भी सलीम को अनारकली के बिना चैन नहीं पड़ता। कई बार चोरी-चोरी वह सलीम के महल में आई और एक दिन पकड़ी गई। अकबर की आज्ञा से उसे किसी गुप्त स्थान में भेज दिया। सलीम ने जब यह सुना तो खाना-पीना छोड़ दिया। बिना खाये-पिये आदमी भला कितने दिन जीवित रह सकता है। एक दिन सलीम मरणासन्न हो गया तो अकबर की आज्ञा से अनारकली को उसके पास बुलाया गया। अनारकली का दर्द भरा गीत सुनकर सलीम ने आँखें खोल दीं और कुछ ही दिनों में वह स्वस्थ हो गया। लेकिन अनारकली अकबर

की आँखों में बहुत समय तक काँटे की तरह चुभती रही और उस काँटे को निकाल फेंकने के लिये उसने अनारकली को कुछ गुप्तचरों के द्वारा लाहौर भिजवा दिया जहाँ उसे जीवित ही एक कब्र में दफना दिया गया। यह था उस मासूम अनारकली का एक शहजादे से प्यार करने का अंजाम। आज भी लाहौर में उसके नाम पर एक "अनारकली मार्कट' है और वहीं अनारकली का एक लाल पत्थर का मकबरा बना हुआ है, जिस पर फारसी में लिखा है—'अनारकली इस दुनियाँ से चली गई लेकिन उसकी सच्ची मुहब्बत सदियों तक दुनिया वालों से यही चिल्ला-चिल्लाकर कहेगी कि कोई किसी से प्यार मत करना।"

अब्दुल्ला से अनारकली की कहानी सुनकर सहसा नीरा की पलकें गीली हो गईं, जिन्हें उसने साड़ी के आँचल से पोंछ डाला चुपचाप। एक हलकी-सी भावुकता-भरी उदासी छा गई उसके चेहरे पर और मैं भी अब्दुल्ला के चेहरे की ओर देखता ही रह गया।

जोधाबाई के महल में पहुँचकर मेरे मन में राजपूतों के प्रति एक हलकी-सी घृणा की भावना उत्पन्न हो गई। हालाँकि महल बहुत सुन्दर बना हुआ है और उसकी स्थापत्य-कला हिंदू शैली से अधिक प्रभावित है फिर भी मुगल-काल में राजपूतों के अन्दर कायरता की एक भावना जो आ गई थी उसने मेरी भावनाओं में एक विद्रोह-सा उत्पन्न कर दिया। महल के आँगन के बीचोंबीच एक छोटे से कुंड की ओर संकेत करके अब्दुल्ला ने बताया कि यहाँ जोधाबाई ने एक तुलसी का पौधा लगा रखा था जिसकी रोज सबेरे वे पूजा किया करती थीं। एक मुसलमान बादशाह की बेगम होने पर भी वे मन से एक हिन्दू महिला थीं और मृत्यु के अन्तिम क्षणों तक उनके संस्कार वैसे ही बने रहे।

'समर पैलेस' और 'विंटर पैलेस' एक ही महल के दो भाग हैं जो एक-दूसरे के सामने बने हैं। ये दोनों महल चीनी स्थापत्य-कला से कुछ प्रभावित जान पडते हैं। 'समर पैलेस' में लाल-नीले-पीले और हरे रंग के पारदर्शी काँच के टुकड़े दीवालों के छोटे-छोटे छिद्रों में कुछ इस ढंग से

फिट किये गये हैं कि देखने पर आँखों को बड़े सुहावने लगते हैं। बादशाह मौसम के अनुसार इन महलों में रहता था।

बावर्चीखाने से चिपटा हुआ एक छोटा-सा शयन-कक्ष है जिसमें चार ऊँचे-ऊँचे खम्भों पर एक पत्थर की बड़ी-सी चौकी बनी है। गर्मियों के दिनों में खाना खाने के पश्चात् अकबर दोपहर को इसी चौकी पर आराम किया करता था। गर्मियों की झुलसती हुई लू से बचने के लिए वह शयन-कक्ष में लगभग डेढ़ फुट पानी भरवा दिया करता था ताकि वहाँ का वातावरण नम रहे और खिड़कियों से आने वाली गर्म हवा पानी से टकराकर शीतल हो जाय।

अंत में हम शेख सलीम चिश्ती की दरगाह में पहुँचे जो फतहपुर सीकरी की सबसे महत्वपूर्ण इमारत है। इमारत के सामने बहुत बड़ा आहता है जिसका फर्श संगमरमर का बना हुआ है। आहाते में घुसने के लिये दो विशाल दरवाजे बने हुए हैं जिनमें एक का नाम बुलन्द दरवाजा है। पर्यटक लोग प्रायः दूसरे दरवाजे से घुसते हैं और दरगाह को देखने के पश्चात् बुलंद दरवाजे से बाहर निकल जाते हैं।

अहाते में घुसने से पहले ही अब्दुल्ला ने बताया कि यह मुसलमानों का धार्मिक और पवित्र स्थान है, अतः जूते उतारकर हाथ में ले लेने चाहिए। हमने वैसा ही किया। एक छोटे-से बैग में मैंने अपने जूते रख लिये और नीरा भी अपनी सेंडिलें खोलकर मेरी ओर बढ़ाती हुई बोली—"इन्हें भी रख लीजिये बैग में।"

"क्या मैं तुम्हारा नौकर हूँ जो जूते लादता फिरूँगा।"

"नहीं जी, मैं आपकी नौकर बन जाऊँगी। लाइये, बैग मुझे दे दीजिये।"

और बैग मैंने नीरा के हाथ में पकड़ा दिया। वह मुस्कराती हुई बोली—"अब मैं आपके जूते लादती फिरूँगी, बोलिये, बदले में क्या देंगे आप?"

"एक छोटा-सा मुन्ना ·····।"

लजाकर उसने पलकें नीचे की ओर झुका लीं और कनखियों से मेरी ओर देखने लगी।

दरवाजे में घुसते ही अब्दुल्ला ने कहा—"बाबूजी, मैं बुलन्द दरवाजे में खड़ा हूँ, आप अन्दर जाकर दरगाह देख आइये। दरगाह में जाने का हम लोगों को आर्डर नहीं है। यहाँ के गाइड अलग हैं।" कहता हुआ वह दूसरी ओर चला गया।

मैं और नीरा सफेद संगमरमर की बनी हुई दरगाह में घुस गये। वहाँ का वातावरण बहुत ही शान्त और सुवासित था अगरबत्तियों और इत्रों की खुशबू से। ढेर सारी अगरबत्तियों से उठता हुआ छल्लेदार धुआँ छत की ओर उठ रहा था। बीच में एक मजार बना था। शेख-सलीम चिश्ती का जो एक हरी मलमल की चादर से ढका हुआ था। उसके चारों कोनों पर चन्दन की चार बल्लियाँ खड़ी थीं जो रंग-बिरंगी सीपियों से जड़ी हुई जान पड़ती थीं और छत भी चन्दन की लकड़ी की ही बनी थी जिसकी तुलना अगर मैं पालकी से करूँ तो बहुत कुछ समानता बैठ जाती है।

हाथ में लालटेन लिए हुए एक व्यक्ति खड़ा था मेरे पास ही, बोला—"बाबूजी अगर आपके दिल में कोई तमन्ना है तो आप एक चादर चढ़ा दीजिये मजार पर, खुदा आपकी वह तमन्ना जरूर पूरी करेगा।"

नीरा की ओर देखकर मैंने मन-ही-मन कहा कि मेरे दिल में तमन्ना थी वह तो मेरी आँखों के सामने खड़ी है साकार रूप में। अब मुझे कुछ भी नहीं चाहिए। लेकिन उसकी बड़ी-बड़ी आँखें मौन होकर मुझसे कह रही थीं कि चढ़ा दीजिये न एक चादर, लेकिन क्यों? और मैं अंग्रेजी में धीरे से बोला—'आइ डोंट बिलीव इन इट' ताकि वह लालटेन वाला व्यक्ति कुछ समझ न सके।

धीरे से बाहर खिसक आये हम दोनों लेकिन वहाँ भी एक सज्जन

बैठे थे बगल में संदूकची लिये हुए चोखट के सहारे, बोले—"बाबूजी कुछ खैरात खाते में डाल जाइये ?"

मैंने जेब से निकलकर कुछ पैसे संदूकची में सरका दिए और अहाते के एक कोने में बहुत सारी छोटी-बड़ी कब्रें देखकर मुझे कुछ आश्चर्य सा हुआ। वे सब-की सब संगमरमर की बनी हुई थीं।

बुलन्द दरवाजे में पहुंचकर हमने जूते पहने और कब्रों की ओर संकेत करते हुए मैंने अब्दुल्ला से पूछा—"क्यों भई, इतनी सारी कब्रें यहां क्यों बना रखी हैं ? क्या श्मशान है यह जगह ?"

'अरे साहब ऐसी बात नहीं, ये सारी कब्रें शेख सलीम चिश्ती के खान्दानियों की हैं। उनके खान्दान का जो भी आदमी मरता है उसे यहीं दफ़नाया जाता है। इस दरगाह की देखभाल भी पुश्त-दर-पुश्त उनके खान्दानी ही करते चले आ रहे हैं। 'आर्कलाजीकल डिपार्टमेंट' का इस दरगाह से कोई वास्ता नही। यह उनके खान्दानियों की निजी जायदाद है।"

"ये बात है।" मैंने धीरे से अब्दुल्ला की बात का समर्थन किया और बुलंद दरवाजे की ऊँचाई को बड़े ध्यान से देखने लगा। यह भारत-वर्ष का सबसे ऊँचा दरवाजा कहा जाता है और वास्तव में है भी बहुत ऊँचा। अगर कोई टोपीधारी सज्जन ऊपर की ओर देखने लगे तो उनकी टोपी ही सर से उतरकर जमीन पर लोटती फिरे। अचानक मेरी दृष्टि दरवाजे की ओर विशालकाय किवाड़ों पर पड़ी तो हैरान रह गया देखकर। आश्चर्य का विषय किवाड़ों की विशालता न होकर उन पर जगह-जगह चिपके हुए घोड़ों की टापों के नाल थे जिनमें से अधिकांश को जंग खा चुकी थी और कुछ नये दिख रहे थे उनमें से।

मैंने अब्दुल्ला से इसके विषय में पूछा तो उसने बताया कि जिसका घोड़ा बीमार हो जाता है वह उसका एक पुराना नाल निकालकर इस दरवाजे पर ठोंक जाता है, जिससे घोड़े की बीमारी तत्काल ठीक हो जाती

है—ऐसा एक विश्वास बहुत प्राचीन काल से चला आ रहा है और इसमें बहुत कुछ सच्चाई भी है। आप देख रहे हैं कि किवाड़ पर सबसे ऊपर जो बहुत बड़ा नाल चिपका हुआ है वैसा आपने अपने जीवन में शायद कभी नहीं देखा होगा। इससे आप अन्दाज़ा लगा सकते हैं कि वह घोड़ा होगा या घोड़े के रूप में एक छोटा-मोटा हाथी। लेकिन हैरान होने की बात नहीं, यह भारत के वायसराय लार्ड कर्ज़न के घोड़े का नाल है जो एक बार बीमार हो गया था। उस समय लार्ड कर्ज़न स्वयं यहाँ आये थे नाल ठुकवाने के लिए।

दरवाजे से निकलकर हम लोग बाहर चबूतरे पर आकर खड़े हो गये। वहाँ से फतहपुर सीकरी की छोटी-सी बस्ती ऐसी लगती है जैसे किसी पहाड़ की तलहटी में कोई छोटा-सा सुन्दर गाँव बसा हुआ हो। संध्या के समय सीकरी के छोटे-छोटे बेतरतीब बने हुए खपरैल के घर हरे-भरे वृक्षों के बीच में बहुत ही सुहावने लगते हैं। छिपते हुए सूर्य की लाल-लाल किरणें खपरैलों की लालिमा को और भी द्विगुणित कर देती हैं।

बुलंद दरवाजे की बगल में किले की दीवाल के सहारे बाहर की ओर एक छोटी-सी बावड़ी है जिसमें प्राय: बरसात का पानी भरा रहता है। पानी के धरातल पर हर समय इतनी काई जमी रहती है कि उसकी पर्तें हटाकर पानी के दर्शन करना भी दुर्लभ हो जाता है। अब्दुल्ला हमें उसी बावड़ी की ओर ले जाता हुआ बोला—"बाबूजी, इस किले की दीवाल के दो कंगूरों पर खड़े होकर एक आदमी इस बावड़ी में इतने ऊँचे से कूदता है कि आप देखकर हैरान रह जायेंगे उस ऊँचाई को। ऐसा लगता है जैसे आसमान से गिर रहा हो वह आदमी। लेकिन एक रुपया लेता है वह अपने इस 'शो' का। अगर आप चाहें तो कुदवाकर देख सकते हैं। डरने की कोई बात नहीं यह तो उसका पेशा बन गया है।"

हम लोग बावड़ी के किनारे जाकर खड़े हो गये। ऊपर की ओर

मैंने दृष्टिपात किया तो एक पहलवान सफ़ेद रंग का जाँघिया पहने कंगूरे पर बैठा हमारी ओर ही देख रहा था। अब्दुल्ला का आदेश पाकर वह धीरे से दो कंगूरों पर अपने पैर अड़ाकर खड़ा हो गया और एक क्षण के लिए अपने दोनों हाथ जोड़कर ईश्वर की आराधना की। फिर अपनी दोनों बाजुओं को पहलवानों की तरह ठोककर एक मंत्र-सा पढ़ता हुआ धड़ाम से आ गिरा काई से भरी हुई उस बावड़ी में। पल-भर को काई छितरा गई और वह अन्दर चला गया।

बाहर निकलने पर मैंने उसे एक रुपया दिया और अब्दुल्ला को पाँच रुपये का नोट थमाते हुये बोला—"बड़े मियाँ, आपने किले की हर इमारत के विषय में बहुत सुन्दर ढंग से हमको समझाया है इसके लिए यह ....।"

"शुक्रिया।" कहकर अब्दुल्ला ने नोट ले लिया और आदत के अनुसार मुस्कराते हुए झुककर सलाम किया।

बुलन्द दरवाजे के सामने बनी हुई अनगिनत सीढ़ियों को पार करते हुए हम बस्ती में पहुँचे। वहाँ से बस स्टेंड लगभग आधा फरलांग दूर है। बस स्टेंड पर आकर पता चला कि आगरा जाने वाली आखिरी बस कुछ मिनटों में छूटने वाली है। दो अपर क्लास के टिकट लेकर मैं और नीरा बस में जा बैठे।

[५]

उस दिन रात-भर बड़े जोर से पानी बरसा था और बिजली भी रह-रहकर खूब चमकी थी। बादलों की भीषण गड़गड़ाहट सुनकर तो मुझे ऐसा लग रहा था जैसे मूसलाधार ही नहीं सहस्र धार पानी मेघों की सफ़ेद काली पर्तों को फोड़कर भूमि पर गिर रहा हो। ठंड के मारे मेरा बुरा हाल था। ओढ़ने के लिये सिर्फ एक सफेद चादरा दे रखा था

होटल वाले ने और नीचे बिछाने के लिये एक गद्दा। भला एक चादरे में भी कहीं बरसात की झकोरेदार ठंड रुकती है। उसके लिये तो एक रजाई चाहिये और रजाई थी नहीं उस समय मेरे पास इसलिये होटल वाले पर रह-रहकर मुझे बड़ा गुस्सा आ रहा था। एक बार तो मन में आया कि मैनेजर के कमरे को जाकर झकझोर डालूँ लेकिन यह सोच-कर कि जब सारी रात इसी तरह सिकुड़ते-सिकुड़ाते बीत गई है तो एकाध घंटे के लिये क्या तकलीफ दूँ बिचारे को, सबेरे तो देख ही लूँगा उसे। यही सोचकर फिर से आँख बन्द किये पड़ा रहा, नींद की प्रतीक्षा में लेकिन भला वह कहीं आती है। सहसा बादल जोर से गरजा और उसके साथ ही वायु का एक तीव्र झोंका खिड़की की दरारों से होकर मेरे चादरे में होता हुआ शरीर की हड्डियों की पर्तों में घुस गया। पल-भर को मैं सिहर उठा। चादरे को अच्छी तरह शरीर के नीचे दबा लिया चारों ओर से ताकि ठंड न घुसने पावे उसमें लेकिन वह कोई जान-वर तो थी नहीं जिसके लिये किसी बड़े से दरवाजे की जरूरत पड़ती, चादरे का प्रत्येक छिद्र उसके लिये एक दरवाजा था। अन्त में जब ठंड असहनीय हो गई तो दाँत आपस में कुश्ती लड़ने लगे और शरीर का रोम-रोम थर-थर काँपने लगा।

दाँतों की कट ! कट ! कट ! कट ! पर नियंत्रण करते हुए मैंने धीरे से पुकारा—"नीरा · नीरा·· !"

लेकिन अँधेरे में दूसरे पलंग से कोई आवाज नहीं आई। शायद वह गहरी नींद में सो रही थी। लेकिन इसे नींद आ कैसे गई ऐसी कड़ाके की ठंड में ? यही सोचकर मैंने ऊपर की ओर हाथ बढ़ाकर बैड स्विच 'ऑन' कर दिया। सारा कमरा प्रकाश से जगमगा उठा। नीरा की ओर देखा वह भी मेरी तरह चादरे में घुटने सिकोड़े गठरी की तरह सिमटी पड़ी थी।

इस बार मैंने जोर से आवाज दी—"नीरा········।"

करवट बदलकर अँगड़ाई लेती हुई वह बोली—"क्या है ? सोने नहीं देते हो ।"

"तुम्हें सोने की सूझ रही है, यहाँ ठंड के मारे जान निकली जा रही है।"

"तो मैं क्या करूँ ?" चादरे के अन्दर से ही वह बोली ।

मैंने कहा—"अपना चादरा मुझे दे दो ताकि डबल करके सो जाऊँगा । नीद तब भो आ जायगी मुझे ।"

"और मैं क्या ओढ़ूँगी फिर ?" चादरे में से मुँह चमकाती हुई वह बोली ।

मैं बोला—"यह सब कुछ मैं नहीं जानता, मुझे चादरा चाहिये वरना सच कहता हूँ सवेरे तक मुझे निमोनिया हो जायगा और फिर तुम जानती हो दुनिया से अपनी हरी झंडी हो जायगी।"

"और मैं बीमार हो गई तो ?"

"अरे, लड़कियों को कहीं मौत नहीं आती है ।"

"अच्छा जी ! वे तो शायद पत्थर की बनी होती हैं न ।"

"मैं कहता हूँ बेकार की बहस मत करो नीरा ।"

"तो मैं क्या कर सकती हूँ ? आप बेकार नाराज़ हो रहे हैं मेरे ऊपर। अपने होटल वाले उस सगे-सम्बन्धी से तो कुछ कहते नहीं जिसे इतना भी ख़याल नहीं कि ठंड के दिन हैं मुसाफिरों को रजाइयाँ देनी चाहिये । चार्जेज़ तो इतने हाई कर रखे हैं जैसे दिल्ली का अशोक होटल हो ।"

"अरे भई दो-तीन घंटे की तो बात ही है, सवेरे तो सब-कुछ हो ही जायगा । अब तुम्हीं बताओ इस समय क्या करना चाहिये ?"

"इस समय आप यह करिए कि अपने नीचे से गद्दा निकालकर उसे इत्मीनान से ओढ़कर सो जाइये ।" होठों पर मुस्कराहट बिखेरती हुई नीरा बोली ।

मुझे भी उसके इस सुझाव पर हँसी आ गई, बोला—"फिर नीचे से ठंड लगेगी तो ?"

"अब आपकी 'तो' का जवाब तो मेरे पास है नहीं।"

मैंने कुछ सोचकर कहा—"बहुत अच्छी तरकीब याद आ गई नीरा ?"

"क्या है ? ज़रा मैं भी तो सुनूँ।" एक शरारती मुस्कराहट के साथ नीरा बोली।

मैंने कहा—"मैं अपना गद्दा लेकर तुम्हारे पलंग पर आ रहा हूँ जो हम दोनों के ओढ़ने के लिये काफी होगा। मेरी भी ठंड भाग जायगी और तुम्हें भी गर्मी आ जायगी।"

"ना बाबा, माफ करिए, मुझे आपकी तरकीब कतई पसन्द नहीं।" चादरे में से हाथ हिलाती हुई बोली—"मुझे तो वैसे ही आपकी बातें सुन-सुनकर बहुत गर्मी आ रही है। कहीं आप आ गये मेरे पास तो मैं तो गर्मी के मारे मर जाऊँगी।"

"क्यों बात बनाती हो। कहीं लड़कियाँ भी मरा करती हैं और वे भी जवान होकर।"

"तो क्या करती हैं ?"

"अरे यों कहो कि मारा करती हैं जवान-जवान छोकरों को तड़पा-तड़पाकर···।"

"आपको भी किसी ने मारा है क्या ?"

"मारा तो नहीं है लेकिन मारने का इरादा ज़रूर है उसका और वह भी तड़पा-तड़पाकर······।"

"फिर आप उस बेरहम लड़की से कुछ कहते नहीं हैं ?"

"क्या कहूँ ? मुझे उस पर तरस आता है। फिर यह सोचकर रह जाता हूँ कि कभी तो उसको दया आयेगी ही मुझ पर लेकिन ऐसा होता हुआ मुझे दिखता नहीं। अब यही सोच रहा हूँ कि क्या करना चाहिये ?"

"मैं बताऊँ आप उस लड़की के हाथ-पैर जोड़िये, थोड़ा गिड़गिड़ाइये और दो-चार झूठ-मूठ के गरम-गरम आँसू भी बहाइये तो हो सकता है शायद उसका दिल पिघल जाय।"

"और नहीं पिघला तो ?"

"इसकी गारंटी नहीं दे सकती, लेकिन जहाँ तक मेरा विश्वास है उसको आप पर दया जरूर आ जायगी।"

"तो फिर यह आँसू बहाना, गिड़गिड़ाना और हाथ-पैर जोड़ना मुझे सिखायगा कौन ?"

"आपसे नहीं आता ?"

"नहीं, कभी जीवन में मौका ही नहीं आया इन बातों का अगर तुम सिखा सको तो मैं तुम्हारे पलंग पर आ सकता हूँ।

"माफ़ कीजियेगा मुझे फुर्सत नहीं है इस समय ऐसी बातें सिखाने के लिये।"

"तो फिर हुजूर कब फ़ुर्सत होगी आपको। मेरा तो ठंड के मारे दिवाला निकला जा रहा है।"

"सिखाने के लिये गुरु-दक्षिणा देनी पड़ेगी, बोलिये तैयार हैं ?"

"तैयार हूँ गुरूजी, आप कहें तो गद्दा लेकर आ जाऊँ अभी सीखने।" पलंग पर चादरा लपेटकर बैठता हुआ मैं बोला।

"पहले विश्वास दिलाइये आप कि गुरूजी के साथ कोई ऐसी-वैसी मक्कारी तो नहीं करेंगे ?"

"नहीं गुरूजी, मैं तो आपसे सिर्फ गुरुमंत्र लूँगा पहली बार जीवन में, आप विश्वास तो रखिये।"

"अरे मैं सब जानती हूँ आपकी मक्कारियाँ। जितने सीधे बनते हो उतने हो नहीं। न जाने कितनी लड़कियों से गुरुमंत्र ले चुके हो अब तक और कहते हो कि जीवन में पहली बार आपसे ही गुरूमंत्र लूँगा। क्यों मुझे बनाने की कोशिश कर रहे हो ? लड़कों की जात इतनी खराब होती है कि ....।"

"लेकिन अफसोस तो इस बात का है कि ऐसे खराब लड़कों के लिये भी लड़कियाँ लैला की तरह दीवानी फिरती हैं, आखिर क्यों ?"

"कौन कहता है कि लड़कियाँ लैला की तरह लड़कों के पीछे दीवानी रहती हैं। मैंने तो देखा है कि लड़के ही मजनू बने फिरते हैं लड़कियों के पीछे। जब बहुत परेशान हो जाते हैं, गिड़गिड़ाते हैं, माफी माँगते हैं, हाथ-पैर जोड़ते हैं और कहते हैं कि नीरा अब मैं तुम्हारे बिना एक पल भी जीवित न रह सकूँगा, ज़हर खाकर आत्महत्या कर लूँगा तो फिर थोड़ी दया आ जाना स्वाभाविक ही है लड़कियों के दिल में। वैसे मेरा बस चले तो इस दुनियाँ की सब लड़कियों में घोषणा कर दूँ कि इन मरे लड़कों को भूलकर भी कभी 'लिफ्ट' मत देना।"

"अच्छा देवीजी, लड़कों को लड़कियाँ 'लिफ्ट' नहीं देंगी तो क्या बूढ़े खुर्राटों को लिफ्ट देंगी। अगर ऐसा हो गया दुनियाँ में तो समझ लो गजब हो जायगा। फिर तो बूढ़ों की चढ़ बनेगी। बालों में खिजाब लगाकर, मूँछें सफाचट कराकर, चिमचिमी आँखों में काजल लगाकर, पोपले मुँह में पान दबाकर, सड़क पर पीक मारते हुए जवान-जवान लड़कियों के पीछे सीना ताने घूमा करेंगे। फिर लड़कियाँ ठिठककर खड़ी हो जाया करेंगी और बूढ़े प्रेमी की बगल में चलती हुई कहा करेंगी—'हलो डियर इतनी देर से कहाँ थे मैं तो तुम्हें ढूँढते-ढूँढते परेशान हो गई। भगवान के लिए इतना मत तड़पाया करो, आखिर मेरे भी दिल है। तुम्हारे बिना मुझे ऐसा लगता है जैसे दिल बैठा जा रहा हो। इतना तो खयाल रखा करो प्यारे। तुम्हारे बिना मेरा सारा जीवन वीरान हो जायगा और एक पल भी तुम्हारे बिना जिंदा न रह सकूँगी।' इस पर बूढ़ा प्रेमी पान चबाता हुआ पोपले मुँह से अपनी प्रेमिका की कमर में हाथ डालकर उत्तर देगा—"कैठी बाट करटी हो डार्लिंग, भला टुम्हें ठोड़कर मैं कहाँ जा सकटा हूँ। मैं तो घर के सामने खड़ा-खड़ा टुम्हारा इंटजार ही कर रहा ठा लेकिन पटा नहीं टुम किढर से निकल आईं। खैर, अब कहाँ टलने का इराडा है मेरी जान......।"

"क्या बकवास कर रहे हैं आप" नीरा झुँझलाकर बोली—"रात में भी नाटक किये बिना चैन नहीं पड़ता। कुछ नहीं तो बूढ़ों की बात लेकर ही बैठ गये। ऐसे पोपलों के मुँह पर सब लड़कियाँ मिलकर आग नहीं जला देंगी। क्या समझ रखा है आपने लड़कियों को ?"

"दो पैर वाला एक बेवकूफ जानवर जिसके सर पर सींग नहीं होते।" मैंने हँसकर जवाब दिया।

नीरा मुस्कराहट और क्रोध के बीच झुँझलाती हुई बोली—"मैं बहुत देर से आपकी उलटी-सीधी बातें सुन रही हूँ। गुस्सा आ गया तो उठकर चली जाऊँगी यहाँ से।"

"कहाँ जाओगी ऐसी कड़ाके की ठंड में।" मैंने कहा—"बहुत गुस्सा आये तो उठकर मेरे पलंग पर आ जाना और न आ सको तो मुझे ही अपने पास बुला लेना।"

"क्यों ?"

"इसलिये कि इस पलंग पर खटमल बहुत काटते हैं। सालों ने काट-काटकर सब खून पी लिया है मेरा। अगर विश्वास न हो तो लो अभी आकर दिखाता हूँ तुम्हें··· ।" चादरा लपेटकर पलंग के नीचे उतरता हुआ मैं बोला।

नीरा सहमकर बोली—"बस ! बस ! आप वहीं रहिये। मुझे यहीं से विश्वास हो गया कि आपको खटमलों ने काट लिया है लेकिन मैं क्या कर सकती हूँ। कोई डाक्टर तो हूँ नहीं मैं जो आपका इलाज कर दूँगी।"

"लेकिन देवीजी मजबूर हूँ······।"

"ओफ़ो ! मैं कहती हूँ कि यहाँ मत आइये वरना मेरे पलंग में भी खटमल आ जायेंगे आपके चादरे में से निकलकर।"

"लेकिन गद्दे में तो नहीं हैं।" मैंने कहा—"तुम कहो तो चादरा यहीं पटक दूँ और गद्दा उठा लाऊँ।"

"आप कुछ मत लाइये और खुद भी मत आइये।" बनावटी गुस्से में आकर बोली।

"मैंने कहा—"यह बिलकुल 'इंपासीबल' है। खटमल मुझे बहुत देर से काट रहे हैं और तुम्हें उनका इलाज करना ही पड़ेगा।"

कहते हुए मैंने गद्दा ले जाकर उसके ऊपर पटक दिया और स्वयं भी चुपके से पलंग की पट्टी पर बैठता हुआ बोला—"कहिये डाक्टर साहब, तबियत तो ठीक है न।"

वह डरी हरिणी की तरह अपलक मेरी आँखों में झाँकती रही और मुस्कराती रही। शायद कोई उपाय सोच रही थी मुझसे पीछा छुड़ाने का। सहसा उसने दोनों हाथों से लेटे-ही-लेटे ऊपर पड़े हुए गद्दे को धकेल कर पलंग के दूसरी ओर फर्श पर पटक दिया और फिर मुस्कराने लगी मेरी ओर देखकर।

"क्यों, यह क्या बदतमीज़ी है ?"

"बदतमीज़ी नहीं सरकार उसमें ढेर सारे खटमल थे इसलिए मैंने जमीन पर पटक दिया।"

"कौन कह ा है उसमें खटमल थे ?"

"आपने ही तो कहा था कि ......।"

"अरी, उसमें खटमल नहीं थे खटमल तो मेरी सारी देह में चिपटे हुए हैं जो तुम्हारी बगल में सोने से मर जायेंगे।"

"तब तो हरगिज आपको अपने पास नहीं सोने दूँगी। कहीं खटमल आपके ऊपर से रेंगते हुए मेरे शरीर पर चढ़ गये तो ?"

"वे तो पालतू खटमल हैं, तुम्हें नहीं काटेंगे।" मैंने कहा—"चिंता मत करो और उठकर गद्दा उठाओ नीचे से।"

"मैं क्यों उठाऊँ ? आप रख दीजिये न।"

"गिराया तो तुमने है..... ।"

"इससे क्या मतलब हुआ। ओढ़कर तो आप ही सोयेंगे न ?"

"मैं कहता हूँ सीधी तरह उठाओ वरना······।"

"वरना क्या मार डालेंगे आप ? जाइये, नहीं उठाती।"

"अच्छा, तुम ऐसे नहीं मानोगी" कहकर मैंने उसके बायें कंधे पर चुटकी भर ली और नोंचता हुआ बोला—"बोलो, उठाओगी ?"

"नहीं उठाती······आई री !" उसने कराहते हुए मेरे हाथ-पर-हाथ रख दिया और छुड़ाती हुई बोली—"छोड़ दीजिये न, बहुत ज़ोर से लग रही है मेरे।"

"तो मैं क्या करूँ, पहले गद्दा उठाओ।"

"अच्छा उठाती हूँ बाबा, छोड़ो तो सही।"

मैंने जब उसे छोड़ दिया, तो धीरे से वह पलंग पर बैठ गई और दाहिना हाथ बढ़ाकर नीचे से गद्दा खींचकर ऊपर डाल दिया। फिर मेरी ओर शिकायत-भरी नज़रों से देखती हुई बोली—"बहुत खराब आदमी हैं आप। इतनी जोर से नोचा है कि नाखूनों के निशान बन गये हैं मेरी बाँह पर।"

और ब्लाउज़ खिसकाकर दिखाने लगी उन निशानों को।

मैंने बाँह पर हाथ फेरते हुए कहा—"कोई बात नहीं है, सब ठीक हो जायगा।"

"हाँ, ठीक तो हो ही जायगा। पहले तो मार लेते हो फिर पुचकारते हो।"

मैंने उसे समझाते हुए कहा—"ऐसा ही पति तो बहुत अच्छा माना जाता है नीरा जिसकी एक आँख में अपनी पत्नी के लिये असीम प्यार हो और दूसरी में फटकार······।"

नीरा मेरी बात सुनकर हँस गई, बोली—"क्यों जी, जिसका पति काना हो वह अपनी एक आँख में क्या रखेगा ?"

उसका यह तर्क सुनकर मुझे भी बहुत हँसी आई। बोला—"वह अपनी कानी आँख से प्यार करेगा और सूझती से फटकारेगा।"

"लेकिन कानी आँख का प्यार तो कोई लड़की पसंद नहीं करेगी ।

"क्यों नहीं करेगी ? जब उसके साथ रहेगी तो करेगी और न पसंद करेगी तो पिटेगी नहीं काने राजा से ?"

"पिटेगी क्यों ? मुझ जैसी होगी तो मरे को तलाक देकर भाग नहीं जायगी ।"

"आखिर जायगी कहाँ भागकर ?"

"कोई आप जैसा मिल गया तो फौरन शादी कर लेगी ।"

"लेकिन मुझे जैसा तो उस सेकंड-हैंड को कभी पसंद नहीं करेगा । हाँ, बहरहाल नगर-वधू बनकर कोठा जरूर आबाद कर सकती है किसी शहर में ··· फिर तो तुम जानती हो कि रोज रात को काने, लूले, लंगड़े, रिक्शे-ताँगे वाले, भंगी, चमार, शराबी, जुआरी, लोफ़र, आवारा गुंडे सभी अपनी अंटियों में नोट दबाये उसके सौंदर्य का खुले आम सौदा किया करेंगे । तब उसे उनके मुँह से नाक को सड़ा देने वाली दुर्गन्ध नहीं आयेगी ? वरन् रुपयों की मदमस्त खुशबू सारे कमरे में उड़ी-उड़ी फिरा करेगी ।"

नीरा कुछ सोचकर गम्भीर हो गई । सहसा बुदबुदा उठी—"हाय बड़े खराब-खराब लोग पड़े हैं इस दुनियाँ में····· ।"

मैं गद्दे में लिपटकर ठीक तरह नीरा के सहारे बैठता हुआ बोला—"क्यों, अब पता चला है तुमको ?"

नीरा कुछ बोली नहीं ! सिर्फ सूनी-सूनी निगाहों से मेरे चेहरे को देखती रही ।

अचानक उसने अपनी दोनों बाँहें मेरे गले में डाल दीं और मचलती हुई बोली—"बोलिये, आप मुझे छोड़कर तो नहीं भाग जायेंगे कहीं ?"

"मैं कहाँ जाऊँगा तुम्हें छोड़कर लेकिन खतरा मुझे तुम्हारी ओर से है । कहीं तुम्हीं न भाग जाओ मुझे छोड़कर ।" मैंने उसके दोनों कंधों पर हाथ रखकर कहा ।

"मेरी ओर से निश्चित रहिये। मौत भी मुझे आपसे अलग न कर सकेगी।"

"बहुत साहसी लड़की हो तुम" मैंने कहा—"मौत से भी लड़ने की शक्ति है तुम्हारे अन्दर तो ?"

"क्यों नहीं, मैं तो आपसे भी लड़ सकती हूँ।"

"मुझसे" मैंने आश्चर्य से पूछा—"भला, मैं भी तो सुनूँ कि आप किस तरह की कुश्ती पसन्द करती हैं—'बाक्सिग' या फिर दारासिंह का 'फ्री स्टाइल।'

"फ्री-स्टाइल।" नीरा कहकर मुस्करा गई।

मैंने अपनी बाँहों को झटकते हुए कहा—"तो फिर हो जाने दो आज रात को 'फ्री-स्टाइल के दो-दो हाथ, देखें कौन जीतता है।"

"मैं जीत जाऊँगी।"

"तो फिर तैयार हो जाओ न।" मैंने उसके कंधे पकड़कर झकझोरते हुए कहा।

वह आग्रहपूर्वक बोली—"आज नहीं कल रात को।"

"ओ! तो आप रात की कुश्ती की बात कर रही हैं। तब तो मैंने अभी से हार मान ली आपसे, क्योंकि रात की कुश्ती में हमेशा लड़कियाँ जीता करती हैं और लड़के हार जाते हैं। अच्छा नीरा, अब मैं सोऊँगा क्योंकि रात-भर ठंड के मारे नींद नहीं आई है।"

मैं गद्दा लपेटकर लम्बा-लम्बा लेट गया पलंग पर और नीरा तकिए के सहारे कुहनी टिकाकर मेरे सीने पर झुक गई। दाहिने हाथ की उँगलियाँ मेरे बालों में फँसाकर सहलाती हुई बोली—"आप इतने दुबले-पतले क्यों हैं ?"

"इसलिये कि इश्क का मरीज़ हूँ और जितने भी मरीज़ होते हैं वे सब दुबले-पतले ही होते हैं। लेकिन कहीं दुबला-पतला समझकर कुश्ती मत लड़ बैठना आज रात को वरना सवेरे ही अपना जनाज़ा निकल जायगा।"

नीरा सिर्फ हँसकर रह गई और बहुत देर तक बालों को सहलाती रही।

रात की उस निस्तब्धता को भंग करते हुए मैंने कहा—"क्यों, जड़ से बाल उखाड़ने की मन में है क्या? या फिर कुश्ती का कोई नया दाव-पेंच आजमा रही हो?"

"कहाँ उखाड़ रही हूँ? मैं तो धीरे-धीरे प्यार कर रही हूँ आपको।"

"माफ़ करिए मुझे आपके प्यार की जरूरत नहीं। इस समय तो सिर्फ़ नींद की जरूरत है, अगर आप······।"

"हाँ! हाँ! नींद ही तो बुला रही हूँ।"

"लेकिन बाल खींचने से तो भाग जायगी वह।"

"भागेगी नहीं, आप से चिपटकर सो जायगी।"

"कहीं नींद के बदले तुम्हीं चिपटकर मत सो जाना वरना फिर खटमल काटने लगेंगे मुझे।"

"मेरे पास खटमलों की दवा है, सब को मार दूँगी मैं।"

"अच्छा तब तो ठीक है, लेकिन जब तक मुझे नींद नहीं आ जाय तब तक बाल सहलाती ही रहना।"

"ओ० के० डियर······।"

"ऐं! तुम तो अंग्रेजी बोलती हो। डियर तो अंग्रेजी में एक जानवर को कहते हैं। क्या जानवर समझ रखा है तुमने मुझे।"

"नहीं बाबा, अंग्रेजी में डियर पति को भी तो कहते हैं।"

"हाँ डार्लिंग कहते तो हैं, कुछ-कुछ मैंने भी सुन रखा है।"

"अब आप क्यों अंग्रेजी बोल रहे हैं?"

"लेकिन डार्लिंग के दो मतलब तो नहीं होते डियर की तरह।"

"अच्छा, अब चुपचाप सो जाइये आप।"

और मैं सो गया आँखें मींचकर उसी वक्त।

[६]

सवेरे जब नीरा ने मुझे झकझोर कर जगाया, जो उसी तरह तकिये के सहारे कुहनी टेककर अर्द्ध-लेटावस्था में मेरे ऊपर झुकी हुई थी, तो मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ।

भिड़भिड़ी पलकें कबूतर के पंखों की तरह फड़फड़ाकर एक अँगड़ाई लेते हुए मैंने उसकी ओर देखा और बोला—"क्यों तुम रात-भर इसी तरह लेटी रही हो, सोई नहीं थी।"

"सोई थी न।" नीरा सर हिलाकर बोली—"लेकिन चिंता मत करिये आपसे लिपट-चिपटकर नहीं सोई थी।"

मैंने अपनी दोनों बाँहों का हार उसके गले में डाल दिया और अपनी ओर खींचता हुआ बोला—"आओ अब दिल-से दिल मिला लें। देखें तो सही कैसा लगता है जब दिल आपस में टकराते हैं तो ?"

वह मुस्कराती हुई मेरे सीने से सटकर झुक गई। उसके वक्ष का स्पर्श होते ही मेरे हृदय की धड़कनें और भी तेज हो गईं। ऐसा लगने लगा जैसे रूई के दो कोमल पहाड़ मेरे सीने को दबाए जा रहे हों नीचे की ओर। रक्त-शिराओं का वेग बढ़ता ही जा रहा था। उसके साथ-ही साथ मेरी भुजाओं की पकड़ इतनी मजबूत होती जा रही थीं जैसे किसी विशालकाय अजगर की लपेट में आकर कोई हिरनी चकनाचूर हुई जा रही हो। लेकिन इस चकनाचूर होने में हिरनी कोई दर्द-भरा चीत्कार नहीं कर रही थी वरन् आँखों ही-आँखों में मुस्कराती हुई कह रही थी कि और दबाओ, इतना दबाओ कि जब तक वह अजगर में मिलकर एकाकार न हो जाय। उसका अपना अलग कोई अस्तित्व ही न शेष रहे और कोई देखने वाला यह न कह सके कि ये कभी अलग-अलग भी रहे होंगे। एक शरीर और दो आत्माएँ··· ।

नीरा ने शिथिल होकर अपने शरीर का सारा बोझ मेरे ऊपर इस तरह पटक दिया जैसे कोई मोटे तने वाला वृक्ष आँधी की भीषण चपेट

में उखड़कर किसी छोटी-सी चट्टान का सहारा लेकर धराशायी हो जाता है और जिसकी कोमल शाखाएं चट्टान के इर्द-गिर्द इस तरह फैलकर निर्जीव-सी हो जाती हैं जैसे कोई तितली बिना पंख हिलाये कमल के फूल पर बैठी रस पीकर मदहोश हुई जा रही हो।

दोनों आँखें मूँदे नीरा अपना बायाँ कपोल मेरे होंठों पर सटाए बेहोश-सी हुई जा रही थी जैसे 'ह्विस्की' या 'रम' की दो-तीन बोतल एक साथ पीकर गहरी नींद में सोती जा रही हो—बेसुध-सी। उस समय मेरा भी बुरा हाल था। नीरा के पाउडर लगे गुलाबी कपोल को मैं इस तरह चूस रहा था जैसे गोश्त खाने वाले आदमी बकरे की बोटी को स्वाद ले-लेकर चूसा करते हैं—एक अनिर्वचनीय आनन्द की अनुभूति कर मैं पागलों की तरह हरकतें करने लगा।

अचानक नीरा ने अपना मुँह ऊपर की ओर उठाया और बड़े रहस्य-मय ढंग से मेरी आँखों में झाँकने लगी। उस समय उसके होंठों पर मुस्कराहट नहीं थी वरन् बड़े-बड़े सीप जैसे नेत्रों में सैकड़ों प्रश्न नाच रहे थे एक साथ। बहुत देर तक वह बोली नहीं कुछ भी जैसे उसके होंठों को किसी ने सी दिया हो। उसकी आँखों की स्थिर काली-काली पुतलियों में जैसे किसी अदृश्य जगत् के छोटे-छोटे बच्चे आपस में किलोलें कर रहे थे। उसकी वे रहस्यमयी आँखें मेरे अंदर कुछ खोजने का प्रयत्न कर रही थीं। मुस्कराहट न जाने कहाँ विलीन हो गई थी उसके रक्तिम होंठों से। धीरे से मैंने उसके बाएँ गाल को थपथपाते हुए कहा—"क्या देख रही हो इस तरह ?"

प्रत्युत्तर में एक हलकी-सी मुस्कराहट के साथ उसने अपना चेहरा मेरे सीने में छुपा लिया अपने दोनों कोमल हाथों से लेकिन मुँह से कुछ भी नहीं बोली। उसकी इस एक मुस्कराहट ने ही मेरे सारे प्रश्नों के उत्तर दे दिए एक साथ।

धीरे से मैंने उसकी पीठ को थपथपाया अपने दाहिने हाथ से और अनायास ही पूछ बैठा—"नीरा तुम कहीं जाओगी तो नहीं मुझे छोड़कर;

अगर चली भी गईं तो सच कहता हूँ मेरा हृदय कठोर चट्टान पर पटके हुए शीशे की तरह चूर-चूर होकर बिखर जायगा सब ओर। फिर उन्हें बटोरने की शक्ति मुझमें नहीं रहेगी और फिर कह नहीं सकता मेरा क्या हाल होगा ?"

उसने धीरे-धीरे ऊपर की ओर चेहरा उठाया। मेरे बालों को सहलाती हुई मुस्कराकर बोली—"क्या सचमुच मैं इतनी अच्छी हूँ जितना आप समझ रहे हैं ?"

"हाँ नीरा, मैं समझने में कभी भूल नहीं करता। अभी तक तो मेरा ऐसा ही विश्वास है लेकिन भविष्य की नहीं कह सकता क्या होगा ?"

"यही होगा कि आप अपनी आँखों से ओझल होते ही मुझे हमेशा हमेशा के लिये भूल जायेंगे।"

"नहीं नीरा अपने मुँह से ऐसा मत कहो। ईश्वर न करे तुम कभी मेरी आँखों से ओझल हो। तुम नहीं जानतीं मैं तुम्हें कितना चाहता हूँ। तुम्हारे लिये मैं सब-कुछ त्याग सकता हूँ लेकिन तुम्हें खो नहीं सकता।"

"अच्छा आप मुझे इतना चाहते हैं तो वायदा कीजिये कि मेरे ऊपर भी एक कहानी लिखेंगे कभी भविष्य में ···।"

"यह तो कोई बहुत बड़ी बात नहीं है नीरा। तुम स्वयं ही एक कहानी हो फिर तुम्हारे ऊपर कोई क्या कहानी लिखेगा ?"

"देखिये आप टालने की कोशिश कर रहे हैं मेरी बात को हँसी-हँसी में।"

उसके दाहिने गाल को थपथपाते हुए मैंने कहा—"अच्छा नीरा, प्रतिज्ञा करता हूँ कि तुम्हारे ऊपर कहानी ही नहीं वरन् एक बड़ा-सा उपन्यास लिखूँगा।"

वह खुश हो गई। सम्हलकर बैठती हुई बोली—"अब बिस्तर छोड़ दीजिये न, देखिये कितना समय हो गया है। बाहर बादलों में कुछ दिखाई नहीं देता।"

उसने उठकर खिड़की खोल दी। काली-काली घटाएँ अब भी आकाश में घिरी हुई थीं। एक हलका-सा अंधकार छाया हुआ था बाहर की ओर। खिड़की से बाहर सड़क की ओर झाँकती हुई बोली—"हाय! बड़े जोर से पानी गिरा है रात को तो! देखिये तो सही सड़क अब तक भीगी हुई है और लॉन में कितना पानी भर गया है?"

मैं अँगड़ाई लेकर पलंग पर बैठ गया। चादरा अपने पैरों पर डाल-कर नीरा की ओर देखने लगा। उसने पलटकर मेरी ओर देखा और मुस्करा दी।

मैंने उसे चिढ़ाते हुए कहा—"ज़रा अपनी सूरत तो देखो शीशे में?'

वह फौरन दीवाल में चिपके हुए बड़े-से शीशे के सामने जाकर खड़ी हो गई और अपने बाएँ गाल को सहलाती हुई नाराज होकर बोली—"हाय! आपने ये क्या कर दिया? बहुत बुरे हैं आप तो।"

"क्या हो गया, ज़रा दिखाना।" मैंने हँसते हुए पूछा।

वह तुनककर बोली—"क्यों जान-बूझकर बन रहे हैं। लीजिये अब नहीं बोलूँगी आपसे और कसम खाती हूँ जो कभी आपके पास भी आऊँ।"

"अरे क्या हो गया ज़रा देखूँ तो सही।" कहता हुआ मैं उसके पास जाकर खड़ा हो गया और दोनों कंधे पकड़कर उसके बाएँ गाल को देखने लगा। एक गहरे लाल रंग का वृत्त बन गया था उसके गुलाबी गाल पर।

उसके दाहिने गाल की ओर होंठ बढ़ाते हुए मैंने हँसकर कहा—"लाओ इस पर भी एक लाल रुपया बना दूँ।"

वह पीछे की ओर हटती हुई बोली—"माफ कीजियेगा एक ही काफी है।"

मैं फिर से आकर पलंग पर लेट गया और नीरा विभिन्न कोणों से अपने गाल के उस निशान को बहुत देर तक शीशे में निहारती रही, उँगलियों से सहलाती रहीं और झुँझलाती रही मेरे ऊपर।

तभी बाहर से दरवाजा खटखटाते हुए नौकर ने आवाज दी। शायद रोजाना की तरह चाय लाया था वह। मैंने नीरा की ओर देख कर कहा—"खोल दो दरवाजा।"

"नहीं खोलती, आप खोल दीजिए न!"

"क्यों, तुम्हारे क्या हाथ दुख जाएँगे?"

अपने गाल पर साड़ी का आँचल रखती हुई बोली—"मैं नहीं जाऊँगी।"

उस समय मैंने अनुमान लगाया कि वह दरवाजा इसलिये नहीं खोल रही थी कि कहीं नौकर उसके गाल पर लगी हुई प्यार की उस मुहर को न देख ले।

मैंने लेटे-ही-लेटे कहा—"नीरा, देखो छोटी-छोटी बातों के लिये तुम मुझे तकलीफ देती हो। क्या तुम स्वयं जाकर नहीं खोल सकती हो? कुछ नहीं तो पत्नी होने के नाते इतना तो रहम किया करो।"

न जाने क्या सोचकर उसने अपने खुले हुए लम्बे-लम्बे बालों की घटाओं में बायाँ गाल ढक लिया और चुपके से दरवाजा खोल दिया जाकर। नौकर चाय की ट्रे मेज पर रखकर चला गया।

चाय पीकर स्नान किया गरम पानी से दोनों ने और ताजमहल जाने का प्रोग्राम बनाया। समय भी उसके अनुकूल ही था; क्योंकि उमड़ती हुई घटाओं की अँधेरी शीतल छाया में ताजमहल शांत प्रहरी की तरह खड़ा हुआ नजर आता है—जैसे युग-युगान्तरों का चिर-वियोगी हो वह।

आज नीरा ने चलने के लिये साड़ी की जगह रंग-बिरंगे फूलों वाला सलवार और कुर्ते का सूट पहना था। ऊपर से दोनों कंधों पर डाल रखा था एक दूध-सा सफेद दुपट्टा। सलवार और कुर्ता पहनते समय उसने उसे 'सूट' कहकर ही संबोधित किया था जो न जाने क्यों मुझे बड़ा अजीब-सा लगा था उस दिन। शायद इसलिये कि मैं पहली-पहली

बार ही सुन रहा था कि आदमियों के कोट-पतलून के सूट की तरह लड़कियों का भी अपना सूट होता है। बहुत हँसी आई मुझे नीरा के 'सूट' शब्द पर। बहुत देर तक सोचता भी रहा कि आजकल की लड़कियाँ किसी भी क्षेत्र में पुरुषों से पीछे नहीं रहना चाहतीं। हर बात में वे नकल करती हैं उनकी। बम्बई, दिल्ली और लखनऊ जैसे शहरों में तो वे पतलून और टी-शर्ट पहने सड़कों पर मटकती हुई बेधड़क घूमा करती हैं जैसे यह ड्रैस उन्हें विरासत में मिली हो। लेकिन पुरुषों ने आजतक कभी उनकी साड़ी और ब्लाउज़ को अपनाने की कोशिश नहीं की। यह उनका सीधापन नहीं तो क्या है? अगर यही प्रश्न मैं किसी अप-टू-डेट लड़की से पूछूँ तो पता नहीं वह कैसा उलटा-सीधा जवाब देगी? शायद गुस्से में आकर दो-चार, गालियाँ भी दे जाय तो कोई बहुत बड़ी बात नहीं; क्योंकि लेखक जो ठहरा और आप तो जानते हैं कि लेखक और कवियों को आजकल नारी-समाज की तरफ से 'सिर फिरे' की उपाधि बहुत जल्दी मिलती है। इसलिये मैं लड़कियों से बहुत डरता हूँ और हमेशा ईश्वर से संध्या-सवेरे यही प्रार्थना करता हूँ कि हे ईश्वर किसी फुदकती हुई तितली से या पतलून और टी-शर्ट पहनने वाली बुलबुल से मेरा गठबंधन मत कर देना, वरना कभी वह उड़कर मेरी नाक पर बैठेगी, कभी कान पर बैठेगी और कभी फुदककर खोपड़ी पर सवार हो जायगी। फिर तो उपन्यास और कहानियाँ लिखना सब भूल जाऊँगा और दिन-रात उसी तितली को पकड़ने के लिये मुँह फैलाये न जाने कहाँ-कहाँ भागता फिरा करूँगा। पता नहीं मुहल्ले में वह किस-किसके घर उड़ती फिरा करेगी और कौन-कौनसे फूल का रस पिया करेगी। ईश्वर अभी तक तो मेरी यह प्रार्थना सुन रहा है; क्योंकि मेरे बगीचे में स्थायी रूप से एक भी तितली या बुलबुल नहीं आई। हाँ, अस्थायी रूप से जरूर कभी-कभी कोई भूली-भटकी तितली या बुलबुल आ जाती है तो सामने ढेर सारे फूल बिखराकर उनका स्वागत करता हूँ। कुछ दिन वे मेरे बगीचे की बहार लूटकर फिर उड़

जाती हैं किसी दूसरे बगीचे की तरफ......पता नहीं कब तक यह क्रम चलता रहेगा और कब तक वे तितलियाँ आ-आकर उड़ती रहेंगी ? लेकिन इतना अवश्य कहूँगा कि इस तरह अगर अस्थायी रूप से मेरे चमन में तितलियाँ आती-जाती रहीं तो एक दिन वह वीरान जरूर हो जायेगा। फिर उसमें कोई बूढ़ी चील भी आना पसंद नहीं करेगी। इसलिये हे ईश्वर, मेरे इस हरे-भरे बगीचे में कोई ऐसी कबूतरी भेज जो स्थायी रूप से उसमें घौंसला बसा के रहने लगे और मौसम आने पर सुन्दर-सुन्दर, छोटे-छोटे, सफेद-सफेद अंडे दिया करे और मैं अपलक उन्हें देखा करूँ। फिर शायद वह अंडों को छोड़कर कभी किसी दूसरे बगीचे में उड़कर जाने की कोशिश नहीं करेगी।

होटल से निकलकर मैं और नीरा बस-स्टाप पर आये। सिकंदरा से ताज जाने वाली बस आकर रुकी और हमें लेकर फिर चल दी। हरी पर्वत थाने पर आकर मैंने उसे बताया कि यह थाना है जहाँ इश्क के मरीजों का डंडों के द्वारा भूत उतारा जाता है—उस दिन मेरा भी उतरने वाला था लेकिन ऊपर वाले ने सुन ली इसलिये भूत तो उतरा नहीं उलटी एक भूतनी और गले से बँध गई।

नीरा नाराज होने की बजाय मुस्करा उठी धीरे से।

उस दिन बस में मुश्किल से पाँच-छः मुसाफिर बैठे थे। शेष पूरी बस खाली ही दौड़ रही थी। रेल के पुल से नीचे ढलान पर गुजरते हुए बाएँ हाथ की ओर लाल पत्थर की विशाल इमारत की ओर संकेत करके मैंने बताया कि यह सेंट जान्स कालेज है जहाँ लगभग पचहत्तर परसेंट जवान-जवान खूबसूरत लड़कियाँ पढ़ती हैं और पच्चीस परसेंट लड़के। इसलिये हिसाब लगाया जाय तो एक-एक के हिस्से में तीन-तीन आती हैं। क्रिश्चियन कालेज होने की वजह से अधिकतर यहाँ क्रिश्चियन लड़कियाँ ही पढ़ती हैं जो बहुत ही फारवर्ड होती हैं। इतना होने पर भी इस कालेज का 'डिसिप्लिन' बहुत अच्छा है। क्या मजाल कि जरा भी शोरगुल हो जाय। लड़के-लड़कियों को परस्पर मिलने की पूर्ण

स्वतंत्रता है। खाली 'पीरियड्स' में प्रायः लड़के-लड़कियों के दर्जनों जोड़े लॉन पर एकान्त में बैठे गपशप लड़ाते हुए दिखाई देंगे। इन्हीं सब बातों से यह कालेज मुझे बड़ा पसंद है। लेकिन अफसोस कि मैं इस कालेज में एक साल भी न पढ़ सका वरना न जाने कितनी तितलियाँ उड़-उड़कर मेरे बगीचे में आतीं और उपन्यासों के 'प्लाट्स' दे-देकर उड़ जातीं।

आगे चलकर राजामंडी का चौराहा आया। बस रुकी, कुछ लोग उतरे और कुछ चढ़े। बस में से चारों ओर देखते हुए मैंने नीरा को बताया कि यह वह सौभाग्यशाली 'क्रासिंग' है जहाँ मेरे जीवन के पिछले दस वर्षों की प्रत्येक सुहानी संध्या दूर-दूर के उपवनों से उड़-उड़कर आने वाली तितलियों को निहारने में बीता करती थी।

थोड़ी दूर चलने पर बाईं ओर आगरा कालेज की पीली विशाल बिल्डिंग की ओर संकेत करके मैंने नीरा से कहा—"यह वह पवित्र संस्था है जहाँ से तुम्हारे पतिदेव ने एम० ए० पास किया था और इस समय तुम्हारी बगल में बैठे हुए अपने कर्मों को रो रहे हैं।

नीरा के होंठ मुस्करा उठे, बोली—"क्यों, इसमें तितलियाँ नहीं पढ़ती थीं ?"

"क्यों नहीं ! पच्चीस परसेंट तितलियाँ और पचहत्तर परसेंट भौंरे।"

"तब तो तितलियों के पीछे भौंरे आपस में बहुत लड़ते होंगे ?"

"ऐसी तो कोई बात नहीं थी। जब एक ही तितली कई कई भौंरों का मन बहला दे तो फिर लड़ने की कोई गुंजायश नहीं रह जाती।"

"ये बात है।" नीरा एक साँस खींचकर बोली—"तो आपका भी किसी तितली ने मन बहलाया होगा ?"

'हाँ, दो-चार तितलियाँ उड़कर आई जरूर थीं मेरे बगीचे में, जिनमें से एकाध फूलों का रस पीकर उड़ गई और एकाध को एग न

मिलने के कारण निराशा का आश्रय लेना पड़ा। लेकिन वे कहीं उड़कर जा न सकीं—शायद उनके कोमल पंख क्षत-विक्षत हो गये थे और बाद में उन्होंने वहीं दम तोड़ दिया। उनकी स्मृतियों को चिरस्थायित्व प्रदान करने के लिये मैंने काले-काले अक्षरों की असंख्य ईंटों से उनकी पवित्र समाधियाँ बनाई हैं जिन पर कभी-कभी आँसुओं की झिलमिलाती मालाएँ चढ़ा देता हूँ। दुनियाँ वाले उन समाधियों को देख-देखकर न जाने कैसा महसूस करते होंगे, ये तो वे ही जानें, लेकिन मैंने तो समाधियों का निर्माण करके अपना कर्त्तव्य पूरा कर दिया है। पता नहीं भविष्य में कितनी समाधियाँ और बनानी पड़ेंगी और कितनी पुष्प और अश्रुओं की मालाओं को सँजोकर सवेदना प्रकट करनी पड़ेगी मुझे ?"

नीरा विचारों की लहरों पर डूबने-उतराने लगीं।

बस शहर की भीड़-भाड़ को चीरती हुई 'फोर्ट' के सामने जाकर रुक गई। फोर्ट की ऊँची-ऊँची कँगूरेदार प्राचीरों की ओर देखकर नीरा बोली—"चलिये, फोर्ट भी देखते चलें ?"

"लौटकर दोपहर के बाद देखेंगे नीरा !" उपेक्षापूर्ण स्वर में मैंने कहा।

बस की खिड़की से बाहर आकाश की ओर झाँककर देखा—बादल घटाटोप छाये हुए थे लेकिन ठंड अधिक नहीं थी उस दिन। आगरा का मौसम ही कुछ इस तरह का होता है कि रात में ठंड अधिक पड़ती है तो दिन में गर्मी।

कंडक्टर ने सीटी बजाई और बस का इंजन घर्र ! घर्र ! करने लगा। गाडी आगे की ओर खिसकने लगी और कुछ ही क्षणों में 'स्पीड' पकड़ गई।

विक्टोरिया पार्क की बगल में एक 'स्टापेज' पर जैसे ही बस रुकी, मैंने नीरा से कहा—"चलो, यहीं उतर पड़ें नीरा; पार्क में घूमते हुए

चलेंगे ताज की ओर। थोड़ी-सी दूर तो रह ही गया है। वह देखो, सामने पेड़ों की झुरमुट से ताज का बड़ा-सा सफेद गुम्बद चमक रहा है।"

नीरा बिना किसी हिचकिचाहट के सीट से उठकर बस के बाहर हो गई। पीछे-पीछे मैं भी उतर पड़ा।

जब बस चली गई तो मैंने नीरा का हाथ अपने हाथ में ले लिया और सड़क की दायीं ओर पार्क की हरी-भरी ऊँची-सी भूमि पर चढ़ने लगे।

विक्टोरिया पार्क कई फरलांग की ऊँची-नीची भूमि को अपनी बाँहों में समेटे हुए है, जिसमें जगह-जगह फूलों की क्यारियाँ हँसती हुई-सी जान पड़ती हैं। कहीं-कहीं आम इलायची और न जाने किस-किसके सघन वृक्ष वायु के संकेत पर शराबी की तरह झूमते हुए-से जान पड़ते हैं। पार्क के जिस बाजू से जमुना नदी की नीली धारा टकराकर बहती है, वहाँ बहुत सारे हरे-हरे बाँसों के झुरमुट परस्पर रगड़ खाकर इस तरह एक-दूसरे में उलझ गये हैं कि उनके बीच से चिड़िया का उड़कर निकल जाना बिल्कुल असम्भव है। नदी की ओर से वायु का जब कोई तेज झौंका इन बाँसों के झुरमुटों को झकझोरता हुआ उनमें से गुजरता है तो वहाँ का वातावरण संगीतमय हो जाता है। ऐसा लगता है जैसे कोई रुक-रुककर मुँह से सीटियाँ बजा रहा हो।

नीरा अपना 'वैनिटी वैग' हिलाती हुई मेरे हाथ-में हाथ डाले मस्ती के साथ झूमती हुई, मुस्कराती हुई पार्क की हरी-भरी ऊँची-नीची लॉन पर कदम-से-कदम मिलाए चली जा रही थी। सहसा एक शोख हँसी हँसती हुई बोली—"अरे, आप इधर कहाँ जा रहे हैं? ताजमहल तो उधर है?"

मैंने एक बार सरसरी दृष्टि से चारों ओर देखा दूर-दूर तक लेकिन जंगली कबूतरों, मोरनियों और कुछ फुदकती हुई चिड़ियों के अतिरिक्त कोई भी दिखाई न दिया तो मैंने अपना दाहिना हाथ नीरा की कमर में

डाल दिया। वह फौरन ठिठककर खड़ी हो गई। मेरी ओर शरारत के साथ देखकर मुस्करा उठी, बोली—"आपका इरादा क्या है?"

"कुछ नहीं, ऐसे ही···मेरे कहने का मतलब है कि···!"

"बस! बस! मैं सब जानती हूँ आपका मतलब!"

"नहीं! नहीं! मेरे कहने का मतलब है कि इधर भी एक छोटा-सा ताजमहल है। चलो, उसे भी लगे हाथों देखते चलें, इसलिये मैं तुम्हें इधर······।"

"क्या दस-बीस ताजमहल हैं यहाँ?"

"नहीं! नहीं! ताजमहल तो एक ही है यहाँ लेकिन······।"

"···लेकिन तबीयत मचल रही है, क्यों?" नीरा मुँह बिचकाकर बोली।

मैंने कहा—"नहीं ऐसी तो कोई बात नहीं है।"

"तो फिर इधर झाड़ियों में कहाँ लिये जा रहे हैं आप मुझे?"

"तुम तो नीरा ऐसे-ऐसे सवाल पूछती हो जिनका मेरे पास कोई उत्तर नहीं। क्या मैं भूत-पलीत हूँ जो इतना डरती हो मुझसे।"

"भूत-पलीत नहीं इश्क के मरीज़ तो हो!" नीरा ने मुस्कराकर धीरे से उत्तर दिया।

मैंने उसकी कमर पर से हाथ हटाते हुए कहा—"लो, अब तो विश्वास हो गया कि मैं किसी गलत इरादे से तुम्हें इधर नहीं ले जा रहा।"

"लेकिन आपका इरादा बदलने में कोई देर थोड़े लगती है।"

मैंने कोई उत्तर नहीं दिया और धीरे-धीरे आगे की ओर बढ़ने लगा। वह भी मेरे साथ-साथ चलती रही। अचानक एक झाड़ी के पास पहुँचकर लॉन में गड़ी हुई ईंट से झूठमूठ को टकराकर मैं वहीं बैठ गया। पैर को सहलाता हुआ कराहकर बोला—"मर गया नीरा मैं तो······।"

"क्या हो गया ?" वह घबड़ाई हुई-सी मेरे पास बैठ गई। वैनिटी बैग एक ओर घास पर पटक दिया और दोनों हाथों से मेरे पैर को दबाने लगी।

मैंने मुँह बनाकर कहा—"ईंट से टकराकर पैर की मोच चली गई जान पड़ती है। बड़ा दर्द हो रहा है यहाँ पर।" एक जगह पर हाथ रखकर मैंने उसे बताया।

उसके चेहरे पर चिंता की हल्की-सी रेखाएँ उभर आई। पैर को वैसे ही दबाती हुई झल्लाकर बोली—"आप भी आँखें मींचकर चला करते हैं। भला ईंट नहीं दिखी आपको ? फिर यह चश्मा लगाने का फायदा क्या हुआ ?"

"अरे बाबा, चश्मा कोई ईंट-पत्थर देखने के लिये थोड़े लगाता हूँ। यह तो सिर्फ खूबसूरत-खूबसूरत लड़कियाँ देखने के लिए है, ईंट पत्थरों के लिये नहीं। मुझे तो इसमें से हर चीज ऐसी लगती है जैसे जवान-जवान छोकरियाँ घूम रही हों मेरी आँखों के सामने।"

पल-भर को नीरा के होंठों की कोरों पर मुस्कान बिखर गई, बोली—"और कोई चीज देख भी कैसे सकते हैं आप। वो वाला हिसाब है कि सावन के अन्धे को हर समय हरा-ही-हरा नजर आता है इसलिये इस ईंट को भी आप लड़की ही समझ बैठे होंगे ?"

"हाँ नीरा, कुछ-कुछ ऐसा ही है। मैंने इसे कोई हसीन लड़की समझा और टकरा गया। अब तुम इस ईंट को पीटो; क्योंकि इसने तुम्हारे पतिदेव के हृदय पर बड़ी घातक चोट की है। अगर ऐसा न कर सको तो लो मैं तो लेटा जाता हूँ लॉन पर। तुम मेरे पैर को दबाओ अच्छी तरह ताकि ताजमहल तक पहुँच सकूँ वरना मैं एक कदम भी न चल सकूँगा।" कहता हुआ मैं घास पर लम्बा-लम्बा लेट गया और अपना पैर नीरा की गोद में जबरदस्ती घुसेड़ दिया।

वह पैर को पकड़ती हुई बोली—"ये क्या कर रहे हैं आप ? मेरे सब कपड़े गंदे कर दिये आपने।"

"इसमें मेरा क्या दोष है। ताजमहल देखना चाहती हो तो मेरे पैर की सेवा करो वरना मैं तो दिन-भर यहीं पड़ा रहूँगा। शाम को शहर की तरफ से जब कालेज की लड़कियाँ घूमने आयेंगी तो जिसे मेरी जरूरत होगी वह अपने आप गोद में उठाकर ले जायगी मुझे अपने घर।"

नीरा कुछ सोचकर धीरे-धीरे मेरे पैर को सहलाने लगी। बोली—"आप छोटे-से मुन्ने हैं न जो कोई उठा ले जायगी आपको गोद में ?"

मैंने कहा—"मुन्ना तो नहीं हूँ लेकिन इतना जरूर है कि मेरे एक इशारों पर मुन्नों की 'बटालियन' तैयार हो सकती है बशर्ते कि वर्कशाप जरा चालू हालत में हो। हाँ, अगर वर्कशाप की 'ओपनिंग सैरेमनी' यानी उद्घाटन मुझे ही करना पड़ा अथवा उसकी सारी मशीनें खस्ता हालत में पड़ी हों जिन पर वर्षों से 'मोबिल आइल' अथवा 'ग्रीस' न लगी हो या जंग ने खा-खाकर उसके सारे कल-पुर्जों को खोखला कर दिया हो तो भला ऐसे वर्कशाप से क्या आशा की जा सकती है !"

नीरा के गुलाबी गाल सुर्ख हो गये मेरी बात सुनकर। थोड़ी शरमाती हुई बोली—"हाय, आपने तो बेशर्मी की हद कर दी। मुझे तो ऐसा लगता है कि आप बहुत जल्दी पागल हो जायेंगे।"

"मुझे भी कुछ-कुछ ऐसा ही लगता है नीरा ! मरी हुई-सी आवाज में मैंने कहा—"कि पागल तो क्या हूँगा मैं, लेकिन देख लेना मौत बड़ी जल्दी आयेगी मेरी; क्योंकि प्यार ही जिनके जीवन में सब कुछ है उन्हें उसके सिवाय कुछ और दिखता ही नहीं दुनियाँ में जैसे जीवन के अन्य पहलू तो कोई महत्व रखते ही नहीं उनके लिये। ऐसे आदमियों को टी० बी० बहुत जल्दी होती है। उदाहरण के लिये अंग्रेजी साहित्य के 'कीट्स' और 'शैले' जैसे माडर्न पोइट्स को ले सकती हो तुम जो थोड़ी-थोड़ी आयु में ही अपनी जीवन-लीला समाप्त करके हमेशा के लिये चले गये। सारी दुनियाँ जानती है कि ये इश्क के कितने बड़े मरीज थे। इनका साहित्य आज भी अमर है, भले ही उनका भौतिक शरीर इस

पृथ्वी पर नहीं रहा। फिर भी कम-से-कम अंग्रेजी साहित्य के प्रेमी उन्हें कभी स्मृति-पटल से ओझल न होने देंगे। उनके काव्य की एक-एक पंक्ति से इश्क की दुर्गन्ध नहीं वरन् महकती हुई सुगंध आती है, जिसे सूँघते ही कालेज के प्रोफेसर्स और युवक छात्र-छात्राएँ मस्त हो जाते हैं। ठीक वैसे ही मेरे लिये भी 'रोमांस' का ही दूसरा नाम 'जीवन' है। इससे बढ़कर कुछ नहीं। मिल्टन ने अगर इसको 'पानी का बुलबुला' कहा है जो किसी भी समय वायु के तनिक से संकेत पर फूटकर फिर से अथाह पानी में विलीन हो जाता है तो कुछ गलत नहीं कहा उसने।

"जहाँ तक बेशर्मी का प्रश्न है जैसा कि तुम कह रही हो, तो इसके लिये मैं सिर्फ यही कहूँगा कि शर्म जैसी चीज दुनियाँ में कोई होती ही नहीं। यह तो केवल दुनियाँदारी की ढकोसलेबाजी है जो दिन के प्रकाश में अपने नये-नये रूप हमारे सामने प्रस्तुत करती है और जहाँ बिजली का स्विच 'आफ' हुआ कि वह फिर से अपने वास्तविक रूप में हमारे सामने आ जाती है अंधकार की काली स्याह चादर में लिपटी हुई। उस समय समाज के वही ठेकेदार जो दिन के प्रकाश की चकाचौंध में सफेदपोश में लिपटे हुए 'शर्म' और 'मारलिटी' पर घंटों भाषण-बाजी करते हैं, सब-कुछ भूल जाते हैं कि दिन में उनका क्या रूप था और अब क्या होने जा रहा है। उस समय उनकी उल्लुओं-जैसी चमकीली आँखें कुछ और ही खोजा करती हैं अंधकार के उस गहन आवरण में......जैसे बिल्लौटा किसी चुहिया की घात लगाए बैठा हो।

इसलिये नीरा मैं तो यही कहूँगा कि 'मारलिटी' जैसी दुर्गन्ध को अपनी नाक के पास भी मत आने दो वरना वह तुम्हारी नाक को सड़ाके रख देगी।"

नीरा फिर मुस्कराई मेरी बात पर, बोली—"दिखता है आपका दिमाग इस समय ठीक-ठिकाने पर नहीं है।"

"क्यों, मेरा दिमाग तो बिलकुल ठीक है वरना मैं लेखक कैसे बन जाता?"

"आजकल के लेखक आधे पागल होते हैं और उन्हीं में से आप भी हैं !" नीरा ने जवाब दिया।

मैंने कहा—"कह नहीं सकता नीरा लेखक पागल होते हैं या उन्हें समझने वाले ही, औंधी खोपड़ी के तो आप हैं जो बैठे-बैठाए नई-नई बे-सर-पैर की बातें बकते रहते हैं। अगर 'मारलिटी' को आप नहीं मानते तो नंगे घूमा करिये न बाजार में ? फिर देखूँ आप कितना 'मारलिटी' का बहिष्कार करते हैं।"

"यह तो कोई बहुत बड़ी बात नहीं है।" मैंने प्रतिवाद किया—"जब प्रकृति की ओर से ही हम निरावरण उत्पन्न हुए हैं तो क्यों न निरावरण ही घूमा करें। वस्त्र पहनने की क्या जरूरत है ? ये जानवर क्यों नहीं पहनते कपड़े ?"

"वे तो बुद्धिहीन जानवर हैं। क्या आप भी जानवर हैं ?" नीरा ने बहस करते हुए पूछा।

मैंने कहा—"बेशक सभी जानवर हैं। मैं भी हूँ तुम भी हो। हाँ, फर्क सिर्फ इतना है कि मैं नर जानवर हूँ और तुम मादा। इसी तरह नर और मादा के जोड़े सभी प्राणियों में मिलते हैं।"

नीरा शायद बैठे-बैठे थक गई थी इसलिये झुँझलाकर बोली—"अच्छा, नर-मादाओं को तो भाड़ में जाने दीजिये और यह बताइये कि पैर की मोच ठीक हुई या नहीं ? मेरे तो हाथ थक गये हैं दबाते दबाते…… ।"

मैं उठकर बैठ गया। पैर को नीरा की गोद से खींचकर घास पर रख लिया। थोड़ी देर तक झूठ-मूठ को उसे उलट-पलटकर देखता रहा। इसके बाद नीरा की ओर देखकर बोला—"थोड़ी दूर घास पर चलने से पता चलेगा नीरा, इसलिये मुझे सहारा देकर खड़ा कर दो। अकेला खड़ा नहीं हो सकूँगा।"

"क्यों झूठमूठ के मक्कड़ बनाते हैं आप मुझे परेशान करने के लिये। अब अकेले खड़ा भी नहीं हुआ जाता आपसे ?"

"तुम्हें मजाक सूझ रहा है। इधर मेरी जान निकली जा रही है। नहीं सहारा दे सकती हो तो मत दो, मैं फिर ले लेटा जाता हूँ यहीं घास पर······।"

"अच्छा बाबा लाइये ···।" कहती हुई नीरा स्वयं खड़ी हो गई और मेरा दाहिना हाथ पकड़कर ऊपर की ओर खींचने लगी। लेकिन मैं ज़रा भी टस-से-मस न हुआ तो झुँझला उठी—"आप अपने पैरों पर ज़ोर क्यों नहीं देते ? इस तरह मुझसे तो नहीं उठती आपकी ढाई मन की लाश।"

मैंने नीरा का हाथ पकड़कर नीचे की ओर झुका लिया उसे फिर उसके गले में एक हाथ डालकर बोला—"लो, अब ताकत लगाओ ज़रा देखो उठता हूँ कि नहीं।"

"बड़े चार सौ बीस हैं आप !" अपने दोनों हाथों से मुझे ऊपर की ओर उठाती हुई वह बोली।

अपने एक पैर के सहारे जब मैं लगभग आधा उठ गया तो मुझे मज़ाक सूझा—नीरा के गले में दोनों बाँहें डालकर धड़ाम से घास पर लुढ़क-पुढ़क हो गया। मैं चित्त गिरा और नीरा मेरे ऊपर। इसके बाद अपने कपड़ों को सम्हालती हुई खड़ी हो गई। बड़ी-बड़ी आँखों से उसने मेरी ओर घूरकर देखा। चेहरा गुस्से से तमतमा गया था उसका, जिसे देख-देखकर मुझे और भी हँसी आ रही थी। मैं जितना ही ज़ोर से हँसता उसका गुस्सा उतना ही बढ़ता जा रहा था। बुत-सी खड़ी-खड़ी वह मुझे आँखों-ही-आँखों में खा जाना चाहती थी। तभी उसके होंठ फड़क उठे—"पड़े-पड़े बेशर्मों की तरह दाँत फाड़ रहे हैं आप, शर्म भी नहीं आती।"

और तत्काल ही पलटकर ताजमहल की ओर चलने लगी।

मैंने जल्दी से उसका वैनिटी बैग उठाकर पतलून की जेब में घुसेड़ दिया और चिल्ला उठा—"नीरा, कहाँ जा रही हो अकेली ही ?"

"भाड़ में गिरने जा रही हूँ।" उसने घूमकर देखा और फिर जल्दी-जल्दी चलने लगी। उसके करीब पहुँचकर जैसे ही मैंने उसके कंधे पर हाथ मारना चाहा तो वह कतराकर एक ओर खड़ी हो गई और हँसकर बोली—"कहिए, पैर ठीक हो गया ?"

"ठीक होने को हुआ क्या था उसमें। मैं तो सिर्फ तुम्हें बेवकूफ बना रहा था।"

"वह तो मैं पहले से ही जानती थी।"

"तो फिर वैसे ही पैर दबा रही थीं मुफ्त में......।"

"हाँ इसलिये कि सरकार कहीं नाराज़ न हो जायें !"

"तब तो तुम उस्ताद की भी उस्ताद निकलीं।"

"देख लीजिये मैं भी कितनी चालाक हूँ ! मैं तो उसी वक्त भाँप गई थी जब आप बस से उतरकर झाड़ियों की ओर चल रहे थे। तभी मैंने सोचा था कि आप जरूर कोई बदमाशी करेंगे और शायद मैंने आपसे कहा भी था ?"

इस तरह बातें करते हुए जब हम लगभग डेढ़ फरलांग आगे निकल गये तो नीरा सहसा चौंककर बोली—"हाय, मेरा बैग तो वहीं रह गया।"

"तो वापस जाकर ले आओ। तब तक मैं यहीं बैठा हूँ।"

"आप कहीं ले तो नहीं आये ?" उसने हँसकर पूछा।

"भला मैं क्यों लाने लगा, भूलकर तुम आईं और उठाकर मैं लाता।"

"अच्छा, आप मेरी कसम खाइये।"

"तुम्हारी कसम नीरा मैं नहीं लाया। तुम्हें विश्वास न हो तो देख लो।" झूठ-मूठ को दो-चार बार पतलून को ऊपर से हिलकार मैंने उसे विश्वास दिलाया।'

वह कुछ गम्भीर हो गई, बोली—"आप चलिये मेरे साथ लौटकर।"

"यह भी खूब रही।" मैंने एक अंदाज़ से कहा—"भूलकर तुम आओ और लेने मैं चलूँ ! जल्दी जाओ देवीजी नहीं कोई उठाकर चलता बनेगा।"

वह कुछ परेशान-सी होकर बोली—"मैं अकेली नहीं जाऊँगी।"

"नहीं जाओगी तो मत जाओ, अपना क्या बिगड़ता है। चीज खोयेगी तो तुम्हारी, अपना क्या जायगा।"

वह अनमनी-सी होकर पीछे की ओर चलने लगी तो मैंने उसे रोक कर कहा—"बोलो, तुम्हारा बैग यहीं आ जाय तो क्या दोगी ?"

वह ठिठककर खड़ी हो गई। मुड़कर मेरी ओर देखती हुई बोली—"जो आप माँगेंगे वही ·· ।"

"अच्छा मेरे पास आओ ?"

वह मेरे पास आ गई तो जेब में से बैग निकालकर मैंने उसके गले में पहना दिया।

"लाओ अब इसी बात का एक 'किस'······।"

"लेकिन धीरे से लीजियेगा।" वह शरमाती हुई बोली—"कहीं सवेरे की तरह लाल रुपया मत बना देना, वरना मैं ताजमहल देखने कैसे जाऊँगी ? लोग वहाँ पर देखेंगे तो··· ।"

"यही समझेंगे कि एक गाल पर 'लिपिस्टिक' लगा ली होंगी होठों की बजाय और दूसरे पर लगाना भूल गई होगी।"

"हटो जी मैं नहीं देती 'किस-विस।" बैग को हिलती हुई बोली वह।

मैंने कुछ नाराज़ होकर कहा—"मत दो लेकिन याद रखो फिर भी तो कभी चक्कर में आओगी।"

"अच्छा जी तो आप नाराज हो गये ?"

"······ ।"

"ये क्या सूरत बना ली है आपने, बोलते क्यों नहीं ?"

"··········· ।"

"अच्छा, ले लीजिये आप जिस तरह चाहें।"

मैं मन-ही मन मुस्करा उठा और धीरे-से नीरा के कंधे पकड़कर उसे अपने सीने से चिपटा लिया। एक-एक 'किस' उसके दोनों गालों पर लिया और जैसे ही उसके होंठों पर अपने होंठ रखना चाहा तो वह अपने दोनों हाथों से मेरे मुँह को हटाती हुई धीरे से बोली—"छोड़ दीजिये अब।"

वहाँ से धीरे-धीरे कदम बढ़ाते हुए मस्ती-मस्ती में हम दोनों ताज की ओर चलने लगे। आकाश में काली-काली घटाएँ पल-पल अपना नया रूप प्रस्तुत कर रही थीं। बिजली भी रह-रहकर चमक जाती थी उनमें से कभी-कभी। एक बार मैंने ऊपर की ओर देखा और नीरा का हाथ पकड़कर बोला—"जल्दी-जल्दी चलो नीरा पानी आने ही वाला है। कहीं बीच ही में घिर गये तो सारे कपड़ों की ऐसी-तैसी हो जायगी।"

"मुझसे नहीं चला जाता जल्दी-जल्दी।"

"तो छोड़ जाऊँ तुमको ? भीगती हुई आ जाना धीरे-धीरे।"

"अच्छा जी ! आप किस लिये हैं ? गोद में ले चलिये न मुझे।"

"हूँ ! तुम छोटी-सी मुन्नी हो न जो तुम्हें उठा ले चलूँ।"

"मत ले चलिये, लेकिन कानून क्यों छाँट रहे हैं आप। मुझसे तो जैसे चला जायगा वैसे चलूँगी।"

"अच्छा बाबा जैसी तुम्हारी इच्छा हो वैसे चलो।"

ताजमहल पहुँचते-पहुँचते बारिश होने लगी थी धीरे-धीरे लेकिन हम दोनों भीग नहीं पाये थे ज़रा भी। बाहर रिमझिम-रिमझिम फुहार गिर रही थीं और अन्दर मैं घूम-घूमकर चारों ओर ताजमहल दिखा रहा था नीरा को। शाहजहाँ और मुमताज की समाधियों के चारों ओर जो संगमरमर की जालीदार गैलरी है उसे बड़े आश्चर्य से देख रही थी नीरा हाथों से छूकर और मन-ही-मन कितनी खुश हो रही थी वह।

गैलरी का पूरा चक्कर लगाने के पश्चात् एक छोटे-से संगमरमर के दरवाज़े से हम दोनों उस स्थान पर पहुँचे जहाँ शाहजहाँ और मुमताज बेगम की नकली समाधियाँ बनी हुई हैं। नीरा ने एक बार उन

समाधियों पर धीरे से हाथ फिराया और आश्चर्य से ऊपर की ओर देखने लगीं गुम्बद की बनावट को। सहसा बड़े जोर से बादल गरजा, जिसकी प्रतिध्वनि सुनकर नीरा को ऐसा लगा जैसे यह आवाज बादलों से न आकर गुम्बद से निकल रही थी। काफी देर तक गूँजती रही वह आवाज हमारे कानों में ठीक वैसे ही जिस तरह काँसे के घंटे पर पड़ी चोट झनझनाकर कानों की पर्तों में घुसती ही चली जाती है बहुत देर तक।

तभी मैंने नीरा का दाहिना हाथ अपने बाएँ हाथ में ले लिया और नकली समाधियों के ठीक नीचे भूमि के गर्भ में स्थित शाहजहाँ और मुमताज की वास्तविक समाधियों को दिखाने के लिये तहखाने की सीढ़ियों की ओर चलता हुआ बोला—"ये ऊपर वाली नकली कब्रें हैं नीरा ....।"

"तो फिर असली कहाँ हैं ?" बीच ही में मेरी बात काटकर नीरा ने प्रश्न किया।

मैं उसे तहखाने में नीचे की ओर ले जाता हुआ बोला—"इसके अन्दर हैं।"

नीरा मेरा हाथ पकड़े धीरे-धीरे सीढ़ियाँ उतर रही थी नीचे की ओर। जैसे-जैसे हम नीचे उतरते जा रहे थे, अँधेरा बढ़ता जा रहा था।

तभी एक एंग्लो-इंडियन लड़की स्कर्ट पहने, बाएँ कंधे पर कैमरा लटकाए, ऊँची एड़ी की सेंडिलों से खुटखुट करती हुई ऊपर की ओर आ रही थीं अँधेरे को चीरती हुई नीचे की ओर से। उसे देखकर मैंने नीरा का हाथ धीरे से मसल दिया और बोला—"देखना इस तितली को किस अदा के साथ छेड़ता हूँ।"

नीरा ने गुस्से में आकर मेरा हाथ झटक दिया और भुन-भुनाकर बोली—"अगर आपने ऐसी कोई हरकत की तो मुझसे बुरा कोई नहीं होगा। सच कहती हूँ फिर कभी नहीं आऊँगी आपके साथ और न आपको ही कभी निकलने दूँगी घर से बाहर।"

लेकिन मैं कब चूकने वाला था। जैसे ही वह मेरे दाहिने ओर से निकली, वैसे ही मैं उसकी ओर देखकर अंग्रेजी में बोला—"हैलो स्वीट

डार्लिंग फ्राम ह्वेयर यू ग्रार कमिंग ?"

वह भौंचक्की-सी रह गई मेरी ग्रोर देखकर लेकिन बोली नहीं कुछ। सिर्फ रहस्यमयी नजरों से मुझे देखती हुई ऊपर की ग्रोर बढ़ गई।

मेरी इस ग्रप्रत्याशित हरकत पर बाद में नीरा बहुत नाराज़ हुई लेकिन मैंने उसे मना लिया इस बात का वचन देकर कि भविष्य में फिर कभी ऐसी हरकत न करूँगा।

नीचे से समाधियाँ देखकर हम फिर वापस ग्रा गये ऊपर। बाहर निकलकर देखा—बारिश थम गई थी। सामने संगमरमर का सफेद चबूतरा धुलकर ग्रौर भी निखर गया था।

ऊपर से उतरकर हम गार्डन में ग्राये जहाँ काफी देर तक घूमते रहे मैं ग्रौर नीरा एक-दूसरे का हाथ पकड़े हुए। इसके बाद ताज की बायीं ग्रोर स्थित मस्जिद में घुस गये। वहाँ का वातावरण बहुत ही शांत था। कुछ ग्रौर लोग भी घूम रहे थे वहाँ जिनमें ग्रधिकांश स्त्री-पुरुषों के जोड़े थे। इनके ग्रतिरिक्त कुछ ग्रावारा टाइप के लड़के भी थे वहाँ जिनकी ग्राँखें नवयुवतियों के लिपिस्टक ग्रौर पाउडर से पुते हुए चेहरों पर इस तरह चिपटी हुई थीं जैसे किसी गुड़ के डेले पर बहुत सारे ततैए बिना पंख हिलाए चिपटे हों।

मस्जिद से निकलकर मैं ग्रौर नीरा उस ग्रोर गये जिधर ताजमहल की पृष्ठभूमि में जमुना नदी बल खाती हुई लाल पत्थर की सुदृढ़ दीवार से टकराकर बह रही है बहुत नीचे में जिसकी गहराई ऊपर से देख कर मनुष्य की रूह काँप उठती है।

कितनी ही शताब्दियों से यह दीवार जमुना की भयंकर बाढ़ों से संघर्ष करती चली ग्रा रही है लेकिन ग्राज तक कभी उसने हार नहीं मानी। उसका एक पत्थर भी टूटकर कभी नदी में नहीं गिरा। यह ग्राश्चर्य की बात नहीं तो क्या है ? भला प्यार भी दुनियाँ में कभी किसी से पराजित हुग्रा है ग्रौर फिर यह तो मुगल-सम्राट शाहजहाँ ग्रौर सम्राज्ञी मुमताज बेगम के ग्रमर प्रेम का चिर प्रतीक है जिसके निर्माण में न जाने कितनी देवियों की माँग का सिंदूर धधकती हुई ग्राग

में परिवर्तित हो गया होगा। न जाने कितने गरीब मजदूरों की आहें आग उगलती हुई आँधियाँ बनकर टकराती होंगीं संगमरमर की इन स्थूल दीवारों से और न जाने कितने दुर्भाग्यशाली बेटों की माताएँ गरम-गरम आँसू बहाते-बहाते अपनी नेत्र-ज्योति खो बैठी होंगी लेकिन यह पत्थर आज तक कभी नहीं पिघला। भला पिघल भी कैसे सकता है—शहंशाह का प्यार जो ठहरा!

नीरा उस दो फुट ऊँची लाल पत्थर की पतली-सी दीवार के सहारे-सहारे आगे की ओर बढ़ रही थी जिसके एक ओर ताजमहल आकाश की ओर सर ताने खड़ा है और दूसरी ओर बहुत नीचे में जमुना नदी अपना बरसाती भयंकर रूप लिये शोर मचाती, दहाड़ती हुई आगे की ओर बढ़ रही थी ठीक वैसे ही जैसे कोई जहरीली नागिन फुफकारती हुई भागी जा रही हो। उस समय कितना भयानक रूप दिखाई दे रहा था नदी की बाढ़ का? लाल किले की ओर से आने वाली ऊँची-ऊँची लहरें फेन उगलती हुई ताज की उस अजेय दीवाल से टकराकर पीछे की ओर लौट पड़ती थीं। नदी की बीच धारा में सूखे वृक्ष, मरे हुए पशुओं के निर्जीव शरीर डूबते-उतराते आगे की ओर भागे चले जा रहे थे।

यह सब-कुछ देखकर नीरा एक जगह ठिठककर खड़ी हो गई उस पतली-सी दीवार को अपने दोनों हाथों से थामकर। एक बार उसने आकाश की ओर सूनी-सूनी निगाहों से देखा और फिर नदी की बीच धारा पर जाकर उसकी दृष्टि स्थिर हो गई।

मैंने पीछे से जाकर धीरे से उसकी दाहिनी बगल के नीचे अपना हाथ सरका दिया तो वह चौंक पड़ी। मेरी ओर देखकर बोली—"हाय आपने तो मुझे डरा दिया। कहीं नदी में गिर जाती तो?"

"तो क्या हुआ? मैं भी एक ताजमहल की तरह 'नीरा महल' बनवाकर तुम्हारे प्यार को अमर कर देता। फिर हर रोज हजारों दर्शक देश के कोने-कोने से तुम्हारी समाधि पर फूल चढ़ाने आते और होंठों पर एक दर्द-भरी मुस्कान लेकर लौट जाते। उस समय बताओ तुम्हारी मृतात्मा को कितनी खुशी होती!"

"हटो जी।" नीरा मेरा हाथ हटाकर मुस्कराती हुई बोली—"लोग देखेंगे तो क्या सोचेंगे। यही न कि आप कितने बेसब्री आदमी हैं। ज़रा भी शर्म-लिहाज़ नहीं आपको।"

और वह लगभग दो गज़ के फासले पर जाकर खड़ी हो गई। मैंने देखा—जहाँ वह खड़ी थी उसके पैरों के नीचे काफी काई जमी हुई थी। जगह-जगह बरसात का पानी भी भरा हुआ था उसके आसपास।

नीरा ने मेरी ओर देखकर पूछा—"क्यों जी रात को जो इतना तेज पानी पड़ा है उसी की वजह से तो यह बाढ़ नहीं आ रही ?"

मैंने नदी में झाँकते हुए कहा—"नीचे देखो कितनी बुरी तरह दीवार से पानी टकरा-टकराकर फेन उगल रहा है जैसे इस दीवार को गिराकर ही छोड़ेगा।"

और जैसे ही नीरा बाढ़ का भयंकर रूप देखने के लिए नदी में नीचे की ओर झुकी तो एक हृदय-विदारक चीख निकल गई उसके मुँह से। मैंने चौंककर उसकी ओर देखा और पकड़ने के लिये जैसे ही लपका तो दुपट्टे का छोर मेरे हाथ में आ गया लेकिन नीरा को नदी में गिरने से मैं बचा न सका। सिर्फ दुपट्टा ही मेरे हाथ में रह गया और मेरे देखते-ही-देखते वह धड़ाम से नदी की फुफकारती हुई लहरों में गिरकर अंदर समा गई। मैं बुरी तरह चीख पड़ा इस अप्रत्याशित घटना को देखकर। पल-भर को वह जगह देखी जहाँ नीरा खड़ी थी। हरी काई पर उसके फिसलने के लम्बे-लम्बे चिन्ह स्पष्ट दिखाई दे रहे थे। तो यही नीरा की मौत का कारण था ? सोचते ही मेरी आँखों से पहाड़ी झरने की तरह आँसुओं की अविरल धार बह निकली। मैं फिर से नीचे की ओर झाँकने लगा। मेरी आँखें फुफकारती हुई लहरों में किसी को खोज रही थीं। थोड़ी दूर के फासले पर वह एक बार फिर दिखाई दी मुझे और मैं ज़ोर से चिल्ला उठा—"नीरा ा ा ऽ ऽ...।" लेकिन उधर से पानी के टकराने की आवाज के अतिरिक्त और कुछ भी न सुन सका मैं। नीरा ने क्षण-भर पानी में हाथ-पैर पटके और पन्द्रह मील प्रति घंटा की चाल से दौड़ते हुए बाढ़ के पानी में आगे की ओर बह गई डूबती-उतराती हुई।

मैं पागलों की तरह उसे जाते हुए देख रहा था और जोर-जोर से चिल्ला रहा था उसे बचाने के लिये।

तभी कुछ लोग मेरे पास आकर खड़े हो गये। वे मेरे कंधे पकड़कर झकझोर रहे थे और पूछ रहे थे कि क्या हो गया ? लेकिन मैं छलकती हुई आँखों से दूर-बहुत दूर जाते हुए उस रंगीन बिन्दु को देख रहा था। हाँ वही तो थी नीरा जिसे मैं बचा न सका। पल-भर को उसकी पिछली सारी बातें बिजली की तरह मेरे मस्तिष्क में कौंध गईं। एक बार मैंने उसके दुपट्टे को देखा और उससे मुँह ढककर बुरी तरह रो पड़ा। यही तो सिर्फ एक स्मृति-चिन्ह रह गया था मेरे पास। देखते-ही-देखते नीरा मेरी आँखों से हमेशा के लिये ओझल हो गई।

इसके बाद वही हुआ जैसा प्राय: दुनियाँ में सब जगह होता है। लोगों ने मुझे धैर्य बँधाया, तरह-तरह से समझाया, ईश्वरीय विधान कहकर मेरे उमड़ते हुए आँसुओं को रोकने का प्रयत्न किया गया। इतना होने पर भी क्या मेरी दर्द-भरी सिसकियाँ कुछ कम हो सकीं ?

कुछ देर मैं वहीं बैठा रहा, लोग समझाते रहे और जब तबियत घबड़ाने सी लगी तो उठ खड़ा हुआ। अनायास ही मेरी गीली पलकें नदी की ओर उठ गईं लेकिन अब नीरा वहाँ नहीं थी। वह तो बहुत आगे पहुँच चुकी थी मेरी नज़रों से बहुत दूर जिसे मैं जीवन में फिर कभी न देख सका।

उठकर चल दिया ताजमहल से बाहर। बस आई। मैं लड़खड़ाते कदमों से उस पर चढ़ गया। पीछे की सीट पर बैठ गया चुपचाप अकेला ही······बिलकुल अकेला। उस समय मेरी बगल में नीरा नहीं थी जो बार-बार मेरी ओर देख-देखकर हँसती और मीठी-मीठी बातें करती।

विक्टोरिया पार्क की बगल में पहुँचते ही मैंने खिड़की से झाँककर वह जगह देखी जहाँ थोड़ी देर पहले मैं और नीरा बैठे थे। अब वहाँ कुछ भी नहीं था। अनायास ही मेरी आँखों से टप-टप आँसू गिरने लगे। बस आगे बढ़ गई।

होटल में पहुँचकर कमरा खोला। सब तरफ सूना-ही-सूना दिखाई

दिया मुझे। अब वहाँ नीरा नहीं थी जो मेरी प्रतीक्षा में बैठी हो कुर्सी पर आँखें फैलाए। अब तो सिफ उसकी अटैची रखी थी एक ओर मेज़ पर जिसे देखकर फिर मेरी आँखों से आँसू टपकने लगे। दुपट्टे को तै करके मेज पर रख दिया और अटैची खोलकर देखने लगा उसे। उस दिन वाली वे ही लाल और नीली साड़ियाँ रखी थीं उसमें। उन्हें उठाकर सीने से चिपटा लिया मैंने। मुझे ऐसा लगा जैसे नीरा मेरे सीने से चिपट गई हो। साड़ियाँ एक ओर उठाकर रख दीं। अटैची की 'पाकिट' में एक छोटा-सा लिफाफा रखा था। खोलकर देखा—एक फोटो था नीरा का उसमें जिसे देखते ही आँसुओं का वेग बढ़ गया और नीरा का फोटो धुँधला-सा दिखने लगा। रूमाल से आँसू पोंछे और फोटो लेकर पलंग पर लेट गया। अब उसकी आकृति स्पष्ट दिखाई दे रही थी। हाँ, वह मुस्करा रही थी फोटो में जैसे मुझे देखकर कह रही थी कि तुम्हारा प्यार झूठा था, बिलकुल झूठा, नहीं तो तुम मुझे नदी में डूबने से बचा नहीं सकते थे? तुमने कैलाश में साथ-साथ जीने और मरने की प्रतिज्ञा की थी, क्या वह सब एक धोखा था! अगर नहीं तो तुम मेरे साथ मर तो सकते थे? लेकिन मैं मर नहीं सका। सचमुच बड़ा कायर निकला मैं। तुम्हारे सम्मुख जितने भी वायदे किये थे वे सब झूठे थे। मैं एक को भी न निभा सका। मुझे क्षमा कर दो नीरा! मैंने तुम्हारी जान ले ली। कितना बेरहम निकला मैं। लेकिन तुम्हारी एक बात जरूर पूरी करूँगा! तुमने एक कहानी लिखने के लिये कहा था अपने ऊपर वह अवश्य लिखूँगा मैं ताकि सारी दुनियाँ तुम्हारी इस करुण-कहानी को पढ़कर श्रद्धा के दो पुष्प चढ़ा दे। लेकिन क्या मैं यह कर सकूँगा? तुम्हारे उस पवित्र प्रेम को क्या शब्दों में ढाल सकूँगा? शायद नहीं; क्योंकि मेरी प्रेरणा जमुना की भयंकर लहरों में हमेशा के लिये समा चुकी है। अब मैं कुछ नहीं कर सकूँगा। सिर्फ दो आँसू बहा सकता हूँ तुम्हारी इस दर्दनाक मौत पर! इससे अधिक अब और कुछ करने की शक्ति नहीं रही मुझमें।

"जिस तरह अनायास ही तुमने मेरे इस नीरस जीवन में प्रवेश

किया और कुछ दिन उसे सरस बनाकर फिर से अनायास ही उसे वीरान करके चली गई। यह कहाँ का न्याय है ? इससे तो अच्छा था तुम आतीं ही नहीं। तुमने मुझे प्यार दिया, जिंदगी दी, इधर-उधर भटकते हुए को एक सहारा दिया और सब-कुछ देकर फिर वापस छीन लिया—लेकिन अब तुम्हारी इस स्मृति को मुझसे कोई नहीं छीन सकेगा। भले ही तुम भौतिक रूप से मेरे साथ न रह सकीं लेकिन आत्मिक रूप से तुम हमेशा मेरे साथ रहोगी। और बहुत सम्भव है कि निकट भविष्य में मैं तुम्हारे पथ का राही बन सकूँ।"

पलंग से उठकर सारे कपड़े अटैची में भर लिये, जिसे उठाकर मैं कमरे से बाहर हो गया। एक बार मुड़कर उस सुनसान कमरे की ओर देखा—कुछ भी नहीं था वहाँ। सहसा आँखों की पलकें गीली हो गईं यह सोचकर कि आया था मैं नीरा के साथ और जा रहा था अकेला ही।

जल्दी-जल्दी सीढ़ियों को पार करता हुआ होटल के गेट पर पहुँचा तभी सामने से आता हुआ पहाड़ी नौकर मिल गया। मुझे अकेला ही जाते हुए देखकर खड़ा हो गया वह। बोला—"अकेले ही जा रहे हो बाबूजी ? बाई सा'ब कहाँ हैं ?"

उसका यह प्रश्न सुनकर मेरा हृदय गद्गद हो उठा। छलकते हुए नेत्रों से उसकी ओर देखकर बोला—"बाई सा'ब जमुना की लहरों में समा गई हमेशा के लिये।"

और बिना उसकी ओर देखे होटल से बाहर हो गया। सड़क पर आकर एक बार होटल की ओर देखा। पहाड़ी नौकर पागलों की तरह खड़ा-खड़ा मेरी ओर देख रहा था। शायद मेरी पहेली को समझने की कोशिश कर रहा था वह।

मैं फिर सड़क-सड़क चलने लगा अटैची को हाथ में लटकाकर। पता नहीं किधर जा रहा था मैं। सिर्फ इतना जानता हूँ कि मैं चल रहा था और चलता ही रहा एक भटके हुए राही की तरह न जाने कितनी देर तक.........।

——*——